इग्नू
जन-जन का
विश्वविद्यालय

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
मानविकी विद्यापीठ

BHDC-133
आधुनिक हिंदी कविता

खंड 1
भारतेन्दु युग एवं द्विवेदी युग 5

खंड 2
छायावाद 165

खंड 3
काव्य वाचन और विश्लेषण 301

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

पाठ्यक्रम परिचय

बी.ए. हिंदी (सामान्य) सीबीसीएस के विद्यार्थियों के लिए 'आधुनिक हिंदी कविता' का यह अनिवार्य पाठ्यक्रम है। इस पाठ्यक्रम का उद्देश्य आपको आधुनिक हिंदी कविता के स्वरूप से परिचित कराना है। आधुनिकता का आगमन हिंदी साहित्य में एक विशिष्ट परिघटना है। आधुनिकता के आगमन के साथ ही कविता के स्वरूप में भी आमूलचूल परिवर्तन होता है। यह परिवर्तन भाव और भाषा के स्तर पर ही नहीं अपितु कविता की संरचना और युगबोध के स्तर पर भी सामने आता है। परंपरागत काव्य भाषाओं ब्रज–अवधी आदि की जगह खड़ी बोली कविता की भाषा बनती है। प्रस्तुत पाठ्यक्रम में आप भारतेंदु युगीन कविता से लेकर छायावाद तक के महत्वपूर्ण कवियों और उनकी महत्वपूर्ण कविताओं से परिचित होंगे। पाठ्यक्रम में अध्ययन हेतु निर्धारित कविताओं की सप्रसंग व्याख्या भी खंड 3 में दी गई है, जिसके माध्यम से आप कविताओं को गंभीरता पूर्वक पढ़–समझ सकेंगे। इस पाठ्यक्रम में तीन खंड और 17 इकाइयां हैं। यह 6 क्रेडिट का पाठ्यक्रम है। पाठ्यक्रम की संरचना इस प्रकार निर्मित की गई है कि विद्यार्थी संबंधित पाठ्यचर्या के अध्ययन के साथ ही आधुनिक हिंदी कविता के विकास–क्रम को भी भली–भांति समझने में सक्षम हो सकें। इस पाठ्यक्रम का विभाजन इस प्रकार किया गया है–

खंड 1 भारतेन्दु युग एवं द्विवेदी युग

इकाई 1 भारतेन्दु युगीन कविता : स्वरूप और विकास

इकाई 2 भारतेन्दु और उनकी कविता

इकाई 3 द्विवेदी युगीन हिंदी काव्यः स्वरूप और विकास

इकाई 4 अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' और उनकी कविता

इकाई 5 मैथिलीशरण गुप्त और उनकी कविता

इकाई 6 रामनरेश त्रिपाठी और उनकी कविता

खंड 2 छायावाद

इकाई 7 छायावादः स्वरूप और विकास

इकाई 8 जयशंकर प्रसाद और उनकी कविता

इकाई 9 सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' और उनकी कविता

इकाई 10 सुमित्रानंदन पंत और उनकी कविता

इकाई 11 महादेवी वर्मा और उनकी कविता

खंड 3 काव्य वाचन और विश्लेषण

इकाई 12 काव्य वाचन और विश्लेषण : भारतेन्दु हरिश्चंद्र और अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

इकाई 13 काव्य वाचन और विश्लेषण : मैथिलीशरण गुप्त, रामनरेश त्रिपाठी

इकाई 14 काव्य वाचन एवं विश्लेषण : जयशंकर प्रसाद

इकाई 15 काव्य वाचन एवं विश्लेषण : सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

इकाई 16 काव्य वाचन एवं विश्लेषण : सुमित्रानंदन पंत

इकाई 17 काव्य वाचन एवं विश्लेषण : महादेवी वर्मा

आशा है यह पाठ्यक्रम आपके लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इग्नू
जन-जन का
विश्वविद्यालय

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
मानविकी विद्यापीठ

BHDC-133
आधुनिक हिंदी कविता

खंड

1

भारतेन्दु युग एवं द्विवेदी युग

इकाई 1
भारतेन्दु युगीन कविता : स्वरूप और विकास 9

इकाई 2
भारतेन्दु और उनकी कविता 38

इकाई: 3
द्विवेदी युगीन हिंदी काव्य: स्वरूप और विकास 64

इकाई: 4
अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' और उनकी कविता 93

इकाई: 5
मैथिलीशरण गुप्त और उनकी कविता 110

इकाई: 6
रामनरेश त्रिपाठी और उनकी कविता 137

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

पाठ्यक्रम विशेषज्ञ समिति

प्रो. निर्मला जैन
अवकाश प्राप्त प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी
अवकाश प्राप्त, हिंदी विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

प्रो. मैनेजर पाण्डेय
अवकाश प्राप्त प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
भारतीय भाषा केन्द्र, जे.एन.यू., नई दिल्ली

प्रो. हरिमोहन शर्मा
अवकाश प्राप्त प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
हिंदी विभाग दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

प्रो. गोबिंद प्रसाद
प्रोफेसर एवं पूर्व अध्यक्ष,
भारतीय भाषा केंद्र
जे.एन.यू., नई दिल्ली

संकाय सदस्य
प्रो. सत्यकाम
प्रो. शत्रुघ्न कुमार
प्रो. स्मिता चतुर्वेदी
प्रो. जितेन्द्र कुमार श्रीवास्तव
(पाठ्यक्रम संयोजक)

पाठ्यक्रम संयोजक

प्रो. जितेन्द्र कुमार श्रीवास्तव, हिन्दी संकाय
मानविकी विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली

खंड संयोजन, संशोधन एवं संपादन

प्रो. जितेन्द्र कुमार श्रीवास्तव, हिन्दी संकाय
मानविकी विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली

पाठ्यक्रम निर्माण समिति

पाठ लेखक	इकाई संख्या
प्रो. चंद्रकांत वांदिवडेकर अव. प्राप्त प्रोफेसर, मुम्बई विश्वविद्यालय, मुम्बई	1
प्रो. शत्रुघ्न कुमार इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली	2
प्रो. रीतारानी पालीवाल अव. प्राप्त प्रोफेसर, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली	3
प्रो. जवरीमल पारख अव. प्राप्त प्रोफेसर, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली	4
प्रो. पूरन चन्द टंडन दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली	5
प्रो. विमल थोरात अव. प्राप्त प्रोफेसर, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली	6
प्रो. सूर्य प्रसाद दीक्षित, अव. प्राप्त प्रोफेसर, विश्वविद्यालय, लखनऊ, उ.प्र.	7

पाठ लेखक	इकाई संख्या
प्रो. कृष्ण दत्त पालीवाल अव. प्राप्त प्रोफेसर, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली	8
डॉ. यामिनी गौतम, मैत्रेयी कालेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली	9
प्रो. पूरन चन्द टण्डन दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली	10,11
प्रो. अरुण होता हिंदी विभाग, उत्तर बंगाल राज्य विश्वविद्यालय, बारासात, कोलकाता	12-13
डॉ. कमलेश वर्मा, एसोसिएट प्रोफेसर, राजकीय स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, सेवापुरी, वाराणसी (उ.प्र.)	14,15,16,17

संपादन सहयोग
डॉ. शंभुनाथ मिश्र,
परामर्शदाता (हिंदी), मानविकी विद्यापीठ, इग्नू

सचिवालयिक सहयोग
श्रीमती गीता नेगी
निजी सहायक, मानविकी विद्यापीठ, इग्नू

सामग्री निर्माण

श्री तिलक राज
सहायक कुलसचिव (प्रकाशन)

श्रीमती सुमति नायर
अनुभाग अधिकारी (प्रकाशन)

सितम्बर, 2020

© इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, 2020

ISBN : 978-93-90496-16-7

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस कार्य का कोई भी अंश इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों के विषय में और अधिक जानकारी विश्वविद्यालय के कार्यालय, मैदान गढ़ी, नई दिल्ली–110 068 से प्राप्त की जा सकती है।

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से कुलसचिव, सां. नि. एवं वि. प्रभाग द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

लेजर टाइप सेटिंग : राजश्री कम्प्यूटर्स, वी–166ए, भगवती विहार (नजदीक सेक्टर 2,द्वारका), उत्तम नगर, नई दिल्ली–110059

मुद्रक : आकाशदीप प्रिंटर्स, 20–अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली–110002

खंड 1 का परिचय

'आधुनिक हिंदी कविता' पाठ्यक्रम के पहले खंड में आप आधुनिक हिंदी कविता का अध्ययन करेंगे। आधुनिक हिंदी कविता की शुरुआत 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से होती है। आधुनिक युग में आकर कविता के भाव, भाषा और प्रयोजन में महत्वपूर्ण बदलाव हुए है। बदलते हुए सामाजिक राजनीतिक परिवेश के कारण जीवन मूल्यों में जो जागृति आई उसने साहित्यकार को अपने सामाजिक दायित्वों के प्रति सजग बनाया। परिणामस्वरूप रीतिकालीन कविता का सामंती–दरबारी गढ़ ध्वस्त होने लगा। कवि अब चमत्कारवाद और कृत्रिम कलावाद से बाहर निकलने को उत्सुक दिखाई दिया लेकिन लगभग दो शताब्दी से जमे हुए संस्कार एकदम छूटने संभव न थे। इसलिए आधुनिक काल की आरंभिक कविता में हमें रीतियुगीन परंपरा और नए बदलाव की चेतना दोनों का स्वर एक साथ सुनाई देता है। आधुनिक युग के प्रणेता भारतेन्दु हरिश्चंद्र के साहित्य में इस द्वंद्व को स्पष्ट और प्रखर रूप में देखा जा सकता है।

इस काल में मैथिलीशरण गुप्त के राम और सीता तथा हरिऔध के कृष्ण और राधा श्रेष्ठ मानवीय गुणों के प्रतीक बनते हैं। दूसरी ओर आधुनिक काल में कविता के विषयों का तेजी से विस्तार होता है। स्वयं भारतेन्दु ही महामारी और टिक्कस (टैक्स) जैसे विषयों पर कविता लिखते हैं। देश भक्ति, राष्ट्र और समाज की उन्नति, प्रकृति–प्रेम, उपेक्षितों का उद्धार आदि कविता के विषय बनते हैं। तात्पर्य यह है कि अब कविता के लिए कोई विषय कम महत्व का नहीं रहता।

आधुनिक युग में आकर साहित्य में एक अन्य महत्वपूर्ण घटना क्रम के रूप में गद्य का साहित्य के सशक्त माध्यम के रूप में उदय होता है। मध्यकाल तक पद्य ही साहित्यिक अभिव्यक्ति का प्रमुख माध्यम था, किंतु आधुनिक काल में गद्य के आविर्भाव के कारण गद्य साहित्य की विविध विधाओं की शुरुआत हुई और खड़ी बोली को गद्य की भाषा के रूप में ग्रहण किया गया। गद्य भाषा के रूप में खड़ी बोली की स्वीकृति ने रचनाकार को काव्य भाषा के विषय में विचार करने को विवश किया। परिणामतः सदियों से चली आ रही ब्रजभाषा को काव्य–भाषा बनाए रखने की बात पर प्रश्न चिह्न लगाया गया। नए भावों और विचारों की अभिव्यक्ति के लिए नई काव्य भाषा की मांग हुई और धीरे–धीरे ब्रजभाषा कविता का स्थान खड़ी बोली कविता ने ग्रहण किया।

आधुनिक काल के साहित्य में कई ऐसी विभूतियां हुई जिनके व्यापक और बहु आयामी व्यक्तित्व के कारण उन्हें युग प्रवर्तक स्वीकार किया गया। भारतेन्दु हरिश्चंद्र और महावीर प्रसाद द्विवेदी ऐसी ही दो विभूतियाँ हैं जिनके नाम पर क्रमशः 'भारतेन्दु युग' और 'द्विवेदी युग' का नामकरण किया गया है।

पिछले कालखण्डों की तुलना में आधुनिक काल की यह भी विशेषता है कि इस काल में काव्यांदोलनों का प्रसार समय अपेक्षाकृत छोटा है। भक्ति काल और रीति काल का प्रसार कई शताब्दियों तक फैला है जब कि लगभग डेढ़ शताब्दी पुराने आधुनिक काल में कविता के विभिन्न आंदोलन छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद नई कविता आदि रुपों में दिखाई देते हैं।

'आधुनिक हिंदी कविता' पाठ्यक्रम के प्रथम खंड में कुल छः इकाइयां हैं:

इकाई 1 'भारतेंदु युगीन हिंदी कविता : स्वरूप और विकास' के अंतर्गत आप भारतेंदु युगीन हिंदी काव्य की पृष्ठभूमि, उसकी विषयवस्तु और संरचनागत विशेषताओं का अध्ययन करेंगे।

इकाई 2 'भारतेंदु और उनकी कविता' के अंतर्गत आप भारतेंदु के व्यक्तित्व, कृतित्व और उनके काव्य की मूल संवेदना को समझ सकेंगे।

इकाई 3 'द्विवेदी युगीन हिंदी काव्य : स्वरूप और विकास' में आप द्विवेदी युगीन कविता की विशेषताओं के अध्ययन के साथ ही उस कालखंड की प्रमुख प्रवृत्तियों और महत्वपूर्ण कवियों का अध्ययन करेंगे।

इकाई 4 अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' और उनकी कविता पर केन्द्रित है। इस इकाई के अध्ययन से आप आधुनिक हिंदी कविता में 'हरिऔध' के महत्व और योगदान से परिचित होंगे।

इकाई 5 'मैथिलीशरण गुप्त और उनकी कविता' के अंतर्गत आप भारतीय नवजागरण की चेतना से सम्पन्न प्रमुख कवि मैथिलीशरण गुप्त के जीवन, साहित्य और काव्य शिक्षा का अध्ययन करेंगे।

इकाई 6 'रामनरेश त्रिपाठी' के अध्ययन पर केन्द्रित है। इसके अंतर्गत आप युगीन परिस्थितियों के अध्ययन के साथ ही रामनरेश त्रिपाठी के काव्य में राष्ट्रीय चेतना, मानवतावाद और सामाजिक–सांस्कृतिक स्वरों की पहचान करेंगे।

हमें विश्वास है कि यह खंड आपके ज्ञानार्जन में सहायक सिद्ध होगा।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 1 भारतेन्दु युगीन कविता : स्वरूप और विकास

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 भारतेन्दु युगीन हिंदी काव्य की पृष्ठभूमि

- 1.2.1 राजनीतिक पृष्ठभूमि
- 1.2.2 सामाजिक पृष्ठभूमि
- 1.2.3 साहित्यिक पृष्ठभूमि
- 1.2.4 भारतेन्दु का आगमन

1.3 भारतेन्दु युगीन हिंदी काव्य का विकास

- 1.3.1 बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन
- 1.3.2 प्रतापनारायण मिश्र
- 1.3.3 श्री राधाचरण गोस्वामी
- 1.3.4 राधाकृष्ण दास

1.4 भारतेन्दु युगीन हिंदी काव्य की विशेषताएँ

- 1.4.1 विषयवस्तु
- 1.4.2 भाषा-शैली
- 1.4.3 छंदोविधान

1.5 सारांश

1.6 उपयोगी पुस्तकें

1.7 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

1.0 उद्देश्य

इस खंड की पहली इकाई भारतेन्दु युगीन काव्य के स्वरूप और विकास से संबंधित है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- उन राजनीतिक, सामाजिक, साहित्यिक परिस्थितियों को समझ सकेंगे, जिनके कारण आधुनिक काव्य की शुरुआत हुई;
- इस युग के प्रणेता भारतेन्दु के योगदान का विश्लेषण प्रस्तुत कर सकेंगे;
- बता सकेंगे कि इस युग के कवियों ने हिंदी काव्य को नई दिशा देने में क्या भूमिका निभाई; और
- भारतेन्दु युगीन हिंदी काव्य की संरचनागत विशेषताओं को बता सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

यह इस पाठ्यक्रम की पहली इकाई है। यह खंड आधुनिक काव्य से संबंधित है। इस खंड की पहली इकाई भारतेन्दु युग के काव्य के स्वरूप एवं विकास से संबंधित है। हिंदी साहित्य के इतिहास में भारतेन्दु हरिश्चंद्र का आगमन एक युगान्तकारी घटना थी। हिंदी

भाषा के काव्य एवं गद्य की विविध विधाओं में नवीनता का समावेश करके उन्होंने युगान्तकारी परिवर्तन किया। यही कारण है कि विद्वानों ने इस काल खंड का नामकरण भारतेन्दु के नाम पर किया। हमारी इस इकाई का नाम भी 'भारतेन्दु युगीन हिंदी काव्य का स्वरूप और विकास' इसी तथ्य को ध्यान में रख कर किया गया है। किसी भाषा के काव्य में विषयवस्तु भाषा, शैली, अलंकार आदि में क्यों परिवर्तन उपस्थित होता है? क्या कारण है कि अचानक काव्य की प्रवृत्ति बदल जाती है? इन प्रश्नों के उत्तर जानने के लिए हमें सबसे पहले उन सामाजिक-राजनीतिक, धार्मिक आर्थिक, साहित्यिक तथ्यों की जानकारी प्राप्त करने की आवश्यकता है जिनका प्रभाव तत्कालीन साहित्य पर पड़ता है। आइए भारतेन्दु युगीन हिंदी काव्य के स्वरूप एवं विकास को समझने तथा उनका विश्लेषण और मूल्यांकन करने के लिए उपर्युक्त परिस्थितियों की जानकारी प्राप्त करें।

1.2 भारतेन्दु युगीन हिंदी काव्य की पृष्ठभूमि

किसी काल के साहित्य में बदलाव के पीछे राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक कारण मौजूद रहते हैं। भारतेन्दु युगीन हिंदी काव्य में परिवर्तन आया इसके पीछे भी तत्कालीन परिस्थितियाँ उत्तरदायी थीं। भारतेन्दु के समय का काल स्वयं भारत के लिए नहीं बल्कि पूरे विश्व के लिए अत्यंत महत्व का था। इंग्लैंड में औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप उन्नति का नया मार्ग प्रशस्त हुआ था। इस युग में नये-नये अन्वेषण और आविष्कार हुए, धर्म और दर्शन का नया संस्करण हुआ, राजनीति और समाजव्यवस्था में मौलिक क्रांति का सूत्रपात हुआ। पश्चिमी यूरोप विशेषकर इटली, नीदरलैण्ड, स्पेन, फ्रांस, जर्मनी और इग्लैण्ड में एक नयी सांस्कृतिक चेतना जागी। इस युग में कार्लमार्क्स और एंगिल्स जैसे राजनीतिक विचारक पैदा हुए। मनोविश्लेषण के आचार्य सिगमण्ड फ्रायड का आगमन भी इसी काल में हुआ। भारतीय परिवेश में देखा जाए तो ब्रह्म समाज के प्रवर्तक राजा राममोहन राय, आर्य समाज के प्रवर्तक दयानंद सरस्वती आदि समाज सुधारक इसी कालखण्ड की उपज थे। सुरेन्द्र नाथ बनर्जी, दादा भाई नौरोजी और सर सैयद अहमद आदि राजनीतिक नेता भी इसी काल खंड की शोभा थे। आधुनिक शिक्षा के प्रवर्तक ईश्वरचन्द्र विद्यासागर भी इसी काल खंड में सक्रिय थे। 'वन्देमातरम' के प्रणेता एवं बंगला भाषा के श्रेष्ठ साहित्यकार बंकिमचंद्र इसी युग की विभूति थे। हिंदी प्रदेश के युग निर्माता साहित्यकार भारतेन्दु हरिश्चंद्र का प्रादुर्भाव भी इसी समय हुआ। साहित्य में नए-नए विषयों का समावेश करके भारतेन्दु ने नवजागरण का सूत्रपात किया। देशभक्ति, राजभक्ति, समाजसुधार, स्वदेश-प्रेम, हिंदी भाषा प्रेम आदि विषयों पर कविताएं लिखकर काव्य की संकीर्ण सीमा का विषय विस्तार किया। तत्कालीन सभी कवियों में भारतेन्दु द्वारा प्रारंभ की गई प्रवृत्तियों का ही विस्तार मिलता है। साहित्य में इस नये बदलाव के पीछे तत्कालीन परिस्थितियों का हाथ था। हम यहाँ क्रमशः उन परिस्थितियों के बारे में जानेंगे जिससे हमें स्पष्ट पता चले कि काव्य में परिवर्तन क्यों आया।

1.2.1 राजनीतिक पृष्ठभूमि

यूरोप के देशों से भारत का व्यापारिक संबंध बहुत पुराना है। भारत के साथ व्यापार कर यूरोपीय व्यापारियों को बहुत लाभ होता था। मुगल काल में कई यूरोपीय देशों के व्यापारियों द्वारा भारत के साथ व्यापार के लिए संघर्ष हुआ। अंग्रेज अपनी बुद्धिमत्ता एवं जलसेना के बल पर सबसे आगे निकल गए। मुगल बादशाहों से अनुमति पाकर अंग्रेजों ने व्यापारिक केंद्र स्थापित किये। भारत की राजनीति पर अंग्रेजों का ध्यान शुरु से ही था। केंद्रीय मुगल सत्ता की कमजोरी का फायदा उठाते हुए उन्होने यहाँ की राजनीति में दखल देना शुरु किया। कूटनीति के बल पर उन्हें सफलता मिली। 1757 ई. में प्लासी के युद्ध के बाद अंग्रेजी राज की स्थापना का मार्ग प्रशस्त हुआ। धीरे-धीरे एक-एक कर भारतीय राज्यों पर अंग्रेजों का अधिकार होता चला गया। सन् 1857 ई तक लगभग सारा भारत अंग्रेजों के अधीन था। यदि अंग्रेज भारतीय वस्तुओं का व्यापार करके मुनाफा ही कमाते

तो भारत की आर्थिक स्थिति पर इसका प्रतिकूल असर नहीं पड़ता किंतु इंग्लैण्ड में हुई औद्योगिक क्रांति के फलस्वप यह स्थिति बदल गई। भारत के कच्चे माल का प्रयोग इंग्लैंड में उन्नत आधुनिक उपकरणों द्वारा माल उत्पादन में होता था। तैयार माल को अधिक कीमत पर इस देश में बेचा जाने लगा। इस बदली हुई परिस्थिति के कारण भारत की आर्थिक स्थिति खराब होने लगी। शोषण के कारण लोगों में असंतोष इकट्ठा होने लगा। तत्कालीन अंग्रेजी शासन की शोषण नीति इस प्रकार की थी कि स्वयं एक अंग्रेज लेखक जॉन ब्राइट द्वारा इस काल को 'ए हंड्रेड ईयर्स आफ क्राइम' कहना पड़ा। अंग्रेजी शासन से त्रस्त भारतीय जनता ने आवाज उठाई और इतिहास प्रसिद्ध सन् 1857 ई. का जन-विद्रोह हुआ। विद्रोह के परिणामस्वरूप राजनीतिक क्षेत्र में परिवर्तन आया। विद्रोह को दबाने के बाद शासन का भार ईस्ट इंडिया कंपनी के हाथ से निकल कर रानी विक्टोरिया के हाथ में चला गया। रानी ने पहली नवंबर, सन् 1858 ई. को घोषणा-पत्र जारी किया। भारतीयों को आश्वासन दिलाया गया कि सरकार प्रजा की भलाई के लिए कार्य करेगी। रंग, जाति और धर्म के आधार पर भेदभाव नहीं किया जाएगा। सरकारी नौकरियों में शिक्षा योग्यता एवं कार्य क्षमता के अनुसार ही भरती की जाएगी। रानी के आश्वासन से भारतीयों को आशा जगी। यही कारण है कि तत्कालीन कवियों ने उस समय महारानी की मुक्त-कंठ से प्रशंसा की। सरकार की ओर से कई सुधार भी किए गए। कलकत्ता, मद्रास एवं बंबई में विश्वविद्यालयों की स्थापना भी की गई और अंग्रेजी शिक्षा का प्रचार किया गया। इस बीच सन् 1861 ई. में पंजाब, राजपूताना, आगरा और अवध के कुछ भागों में भीषण अकाल पड़ा और बहुत से लोग मारे गए। सन् 1864 ई.से सन् 1869 ई. तक सर जॉन लारेन्स के वाइसराय के पद पर कार्यरत होने के काल में कृषि संबंधी सुधार किए गए। इस बीच फिर सन् 1866 ई. से 1869 ई. में भारत के कई भागों में अकाल पड़ा, सैकड़ों लोगों की जानें गई।

सन् 1870 ई. से जनता पर कई प्रकार के कर लगाए गए। सन् 1878 ई. में भारतीय मिलों के कपड़ों पर कर लगा दिया गया। सिविल सर्विस परीक्षा में उम्र घटाकर भारतीयों को परीक्षा से दूर रखने का षड्यंत्र रचा गया। सन् 1877 ई. में दिल्ली में शानदार दरबार कर लिटन ने विक्टोरिया को भारत की साम्राज्ञी घोषित किया। इस आयोजन में बहुत-सा धन व्यय किया गया। एक ओर धन का व्यय हो रहा था दूसरी ओर चेचक आदि महामारियों में लोग मारे जा रहे थे। सन् 1878 ई. में 'वर्नाक्यूलर प्रेस ऐक्ट' के द्वारा भारतीय भाषाओं में प्रकाशित समाचार-पत्रों की स्वतंत्रता पर पाबंदी लगा दी गई। इन सब कारणों से जनता में राष्ट्रीय चेतना के बीज अंकुरित होने लगे। सन् 1880 ई. से सन् 1884 ई. में वायसराय लार्ड रिपन के कार्यकाल में कई महत्वपूर्ण कार्य हुए। सन् 1882 ई. में 'प्रेस ऐक्ट' को समाप्त कर दिया गया। शिक्षा संस्थाओं को सरकारी सहायता दी गई। सन् 1883 ई. में 'इलबर्ट-बिल' के विरोध में आंदोलन प्रारंभ हुआ लार्ड रिपन ने इस आंदोलन के साथ सहानुभूति रखी। बाद के वायसराय डफरिन आदि ने जनता की भलाई का कार्य नहीं किया। प्रायः सभी वायसरायों ने (केवल उदारवादियों को छोड़कर) भारतीय जनता के साथ दोहरी नीति बनाए रखी। ऊपरी तौर पर वे जनता की भलाई की बातें करते थे, लेकिन चाहते यह थे कि हर प्रकार से शोषण की नीति कायम रहे। अंग्रेजों की इस नीति के परिणामस्वरूप जनता में चेतना जगी। परिणाम था सन् 1885 ई. में 'भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस' की स्थापना। कांग्रेस के मंच से भारतीय जनता ने राष्ट्रीय स्वाधीनता संग्राम की शुरुआत की। यह तो थी तत्कालीन समय में भारत की राजनीतिक स्थिति। अब हम उस समय की सामाजिक स्थिति को देखें।

1.2.2 सामाजिक पृष्ठभूमि

तत्कालीन समय में भारत की सामाजिक स्थिति द्वेषपूर्ण थी। लोगों में जातिगत द्वेष बहुत अधिक बढ़ गया था। समुद्र यात्रा करना पाप समझा जाता था। समुद्र यात्रा करने पर व्यक्ति को समाज से बहिष्कृत कर दिया जाता था। समाज दो वर्गों में विभक्त हो गया

था। एक प्राचीन मान्यताओं का पुजारी था तो दूसरा नवीनता का। समाज में नशाखोरी एवं व्यभिचार बढ़ रहा था। ब्रिटिश शासक साम्राज्यवाद एवं शोषण की नीति को बनाए रखने के लिए कूटनीति से काम ले रहे थे। मादक वस्तुओं का प्रचार करके तथा हिन्दू-मुसलमानों में विभेद नीति अपना कर वे अपना कार्य सिद्ध करना चाहते थे। तत्कालीन समाज में नारी का स्थान दयनीय अवस्था में था। पर्दा-प्रथा के कारण उन्हें घर की चार-दीवारी में बंद रहना पड़ता था। बौद्धिक एवं मानसिक विकास का अवसर उन्हें नहीं मिल पाता था। लड़कियों की शिक्षा पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता था। यदि अवसर पाकर कोई पढ़ भी जाती थी तो उसके विवाह में अड़चन आती थी। समाज में बाल-विवाह, वृद्ध-विवाह और बहु-विवाह की कुप्रथाएँ फैली हुई थीं। कम अवस्था में ही लड़कियों की शादी कर दी जाती थी, दहेज प्रथा के कारण निर्धन व्यक्ति अपनी लड़कियों का विवाह वृद्ध पुरुष के साथ करने को विवश हो जाते थे, जिससे कम अवस्था में ही लड़कियाँ विधवा बन जाती थीं। कई-कई स्त्रियाँ रखना लोगों के शान-शौकत में शामिल हो गया था। इन सब कुरीतियों के खिलाफ समाज सुधारकों ने आंदोलन शुरु किया। सन् 1872 ई. में केशवचन्द्र सेन के प्रयास से सरकार ने बाल-विवाह एवं बहु-विवाह पर प्रतिबंध लगाया।

नर-बलि तत्कालीन समाज की एक अत्यंत पाशविक प्रथा थी। वंश वृद्धि तथा देवी-देवताओं की उपासना के लिए नर-बलि दी जाती थी। सर्वप्रथम सन् 1795 ई. में और फिर सन् 1802 ई. में सरकार ने इस प्रथा को कानून बनाकर बंद करने का प्रयत्न किया। राजपूताना, बंगाल एवं दक्षिण भारत में सती प्रथा विशेष रूप से प्रचलित थी। पति की मृत्यु के बाद पत्नी को जबरदस्ती चिता में ढकेल दिया जाता था। राजा राममोहन राय ने इस प्रथा को समाप्त करने का जोरदार प्रयत्न किया और उनके ही प्रयास से सन् 1829 ई. में सरकार ने विधवा-विवाह को वैध घोषित किया। इस इकाई में आगे हम देखेंगे कि सभी कवियों ने अपनी रचनाओं में तत्कालीन समाज का चित्रण किया है। धार्मिक क्षेत्र में तत्कालीन समय में बहुदेववाद, रूढ़िप्रियता-अंधविश्वास उत्कर्ष पर था। शैव, शाक्त, वैष्णव आदि मतवाद का जोर था। सभी अपने-अपने देवों की श्रेष्ठता सिद्ध करने में लगे हुए थे। ब्राह्मणों का प्रभुत्व था, वे कर्मकाण्ड को बढ़ावा दे रहे थे। अंग्रेजों द्वारा देश की राजनीति पर प्रभुत्व जमाने के बाद ईसाई धर्म-प्रचारकों के कार्य में तेजी आ गई थी। हिन्दू धर्म की आडंम्बर-प्रियता, संकीर्णता, फूट आदि की आलोचना कर ये भारतीय नवयुवकों को अपनी ओर आकर्षित करने लगे थे। बहुत से नवयुवकों को ईसाई धर्म-प्रचारकों की बात अच्छी लगी और उन्होंने ईसाई मत को अपनाया। किन्तु इसी समय भारतीय समाज सुधारकों में भी चेतना आयी। अपने धर्म को नये दृष्टिकोण से देखने का प्रयत्न किया गया। एक नया धार्मिक आंदोलन प्रारंभ हुआ। ब्रह्म-समाज, प्रार्थना समाज, आर्य समाज, ब्रह्म विद्या समाज आदि संस्थाओं तथा रामकृष्ण एवं विवेकानंद जैसे महापुरुषों द्वारा यह कार्य सम्पन्न हुआ। अंग्रेजी शिक्षा द्वारा जहाँ यूरोप में हुई वैज्ञानिक प्रगति का ज्ञान प्राप्त हुआ वहीं लोगों में प्रत्येक चीज में वैज्ञानिकता खोजने की प्रवृति जागी। आंदोलन द्वारा धार्मिक रूढ़ि, सती प्रथा, जाति-पाति के विरोध, मूर्ति पूजा, अवतारवाद पर विश्वास मिटाने का प्रयत्न किया गया। शिक्षा के प्रचार पर जोर दिया गया। मज़दूरों एवं स्त्रियों की शिक्षा पर ध्यान दिया गया। इस प्रकार, समाज में नवजागरण की लहर फैलने लगी।

1.2.3 साहित्यक पृष्ठभूमि

राजनीतिक, सामाजिक एवं धार्मिक स्थितियों के परिचय से यह स्पष्ट है कि धीरे-धीरे सभी क्षेत्रों में परिवर्तन का दौर शुरू होने लगा था। अब हम साहित्यिक पृष्ठभूमि के बारे में जानेंगे। सन् 1857 ई. के पहले भारतीय साहित्येतिहास में रीतिकाल की परंपरा का ही बाहुल्य था। दरबारी-विलास से पूर्ण रचनाएँ होती थीं। इसके पीछे एक बहुत बड़ा कारण था, कवियों को राज्याश्रय प्राप्त होना। कवि एवं साहित्यकार अपनी जीविका को प्रमुख मानकर साहित्य की रचना कर रहे थे। आश्रयदाताओं के यहाँ उनकी लेखनी वही लिखती थी, जो उनके आश्रयदाता चाहते थे। राजाओं की प्रशंसा एवं नायक-नायिकाओं के भेद

तथा राजा के सुख वैभव का वर्णन करना उनका कार्य था। यही कारण है कि इस कालखंड में साहित्य का चतुर्मुखी विकास नहीं हो सका, किंतु भारत में ब्रिटिश शासन की स्थापना के साथ ही इस स्थिति में परिवर्तन आया। ब्रिटिश शक्ति के सामने देशी राज्य टिक नहीं सके सभी एक-एक कर पराधीन होते गए। कवियों का राज्याश्रय भी समाप्त होने लगा। कवि राजाओं के विलास को छोड़कर जनता के संपर्क में आने लगे और परिणामतः जन साहित्य का प्रणयन शुरू हुआ। सन् 1792- 93 ई. से अंग्रेजी के माध्यम से उपयोगी ज्ञान की शिक्षा के लिए अंग्रेजों ने प्रयत्न शुरू किया था। सन् 1800 ई. में कलकत्ता में फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना हुई। सन् 1813 ई. में एक लाख रुपए की राशि वैज्ञानिक शिक्षा के लिए रखने की बात कही गई, किन्तु उस पर आगे कार्रवाई नहीं हुई। राजा राममोहन राय के प्रयत्न से सन् 1817 ई. में हिन्दू कॉलेज की स्थापना हुई। फिर धीरे-धीरे देश के कई भागों में कॉलेजों की स्थापना हुई। सन् 1823 ई. में आगरा कॉलेज, सन् 1824 ई. में दिल्ली कॉलेज, सन् 1837 ई. में बरेली कॉलेज, सन् 1817 ई. में कलकत्ता स्कूल बुक सोसाइटी तथा सन् 1856 ई. में बम्बई में ऐल्फिन्टसन कॉलेज की स्थापना हुई। इस प्रकार, शिक्षा के क्षेत्र में धीरे-धीरे प्रगति हो रही थी। सन् 1855 ई. तक भारत में अंग्रेज़ी भाषा का अच्छा खासा प्रचार हो गया था। नवीन शिक्षा द्वारा जनजागरण में तेजी आई। कविता के क्षेत्र में कवियों ने अतीत एवं वर्तमान दोनों को स्थान दिया। कवियों ने एक ओर कबीर, सूर और तुलसी के अनुकरण पर उपदेशात्मक एवं भक्तिपूर्ण रचनाएँ की तो साथ ही साथ बिहारी और मतिराम के अनुकरण पर श्रृंगारपूर्ण रचनाएँ भी की। दूसरी ओर, वर्तमान स्थिति से प्रभावित राष्ट्र-प्रेम एवं सामाजिक यथार्थ से पूर्ण रचनाएँ की गई। इस प्रकार पंरपरा को निभाते हुए कवियों ने नये-नये भावों एवं विचारों को कविता में स्थान दिया। इस काल की कविता जन-जीवन के साथ अपना पग मिलाने लगी। कवियों का उद्देश्य जनता में जागृति लाना था। जनता की अभिरूचि एवं प्रचार की सुविधा के लिए कविता में विभिन्न छन्दों का प्रयोग किया गया। भक्ति और रीतिकाव्य के कवित्त, दोहे, सवैया लिखे गए, साथ ही नए-नए साहित्यिक गीतों और लोक गीतों की रचना प्रारंभ हुई। लोक गीत-कजली, खेमटा, कहरवा, ठुमरी, गजल, होली, अद्धा, चैती, विरहा, लावनी आदि छंदों में लिखे गए। इस इकाई में कवियों की रचनाओं की चर्चा करते हुए हम उनके काव्य रचना के उदाहरणों द्वारा जानेंगे कि किस प्रकार कविता के छंदों में परिवर्तन आया।

भाषा के क्षेत्र में इस युग में क्रांतिकारी परिवर्तन आया। अब तक अवधी एवं ब्रजभाषा में ही काव्य रचनाएँ की जाती थीं। रीतिकाल में तो यह मान्यता हो गई थी कि ब्रजभाषा को छोड़कर अन्य भाषा में कविता हो नहीं सकती। धीरे-धीरे खड़ी बोली पद्य का आंदोलन प्रारंभ हुआ। कुछ लोगों ने परंपरानुकूल ब्रजभाषा का पक्ष लिया तो कुछ लोग नवीन दृष्टिकोण को लेकर खड़ी बोली की ओर बढ़े। इस प्रकार का आंदोलन सन् 1887 ई. से सन् 1890 ई. तक चलो। ब्रजभाषा के पक्षधरों में प्रतापनारायण मिश्र, राधाचरण गोस्वामी आदि थे तो खड़ी बोली के पक्ष में अयोध्याप्रसाद खत्री, श्रीधर पाठक आदि प्रमुख थे। धीरे-धीरे लोगों में खड़ी बाली के प्रति रुचि बढ़ती गई। और ब्रजभाषा का स्थान पिछड़ता गया। खड़ी बोली पद्य रचना की क्षीण परंपरा खुसरो की मुकरियों तथा कबीर के दोहों से शुरू होती है और आधुनिक काल तक पूर्ण विकास में परिणत होती है।

इस प्रकार हमने देखा कि तत्कालीन समय में किस प्रकार की राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक एवं साहित्यिक परिस्थितियाँ थीं और किस प्रकार उनमें परिवर्तन उपस्थित हो रहा था। यही वह समय था जब हिंदी भाषा साहित्य के इतिहास में एक ऐसे व्यक्तित्व का आगमन होता है जिसने अपनी प्रतिभा के बल पर हिंदी भाषा साहित्य में युगान्तकारी परिवर्तन उपस्थित किया। इस युगपुरुष का नाम था भारतेन्दु हरिश्चंद्र। आइए हिंदी भाषा साहित्य के इस आधार स्तम्भ के व्यक्तित्व एवं कृतित्व की संक्षिप्त जानकारी प्राप्त करें। उसके बाद हिंदी काव्य के इस परिवर्तन के विस्तार को अन्य कवियों के माध्यम से जानेंगे।

1.2.4 भारतेन्दु का आगमन

भारतेन्दु का जन्म काशी के एक समृद्ध परिवार में 9 सितंबर, सन् 1850 ई. को हुआ था। इनके पिता बाबू गोपालचन्द्र स्वयं उच्च कोटि के कवि थे। बचपन से ही इनमें काव्य रचना की प्रतिभा थी। पाँच वर्ष की अवस्था में ही उन्होंने एक दोहा कहा-

लै ब्योंढ़ा ठाड़े भये, श्री अनिरुद्ध सुजान।
बानासुर के सैन को, हनन लगे भगवान।

पिता ने बालक की प्रतिभा देखकर आशीर्वाद दिया कि वह एक दिन बहुत बड़ा आदमी बनेगा। पिता का आशीर्वाद प्रतिफलित हुआ। भारतेन्दु केवल बड़े आदमी ही नहीं, युग-निर्माता बने। बचपन में ही माता-पिता का साया उठ गया जिससे इनमें स्वछंद रहने की प्रवृत्ति बढ़ी। स्कूली शिक्षा नाम मात्र की ही हो पाई। ईश्वर प्रदत्त प्रतिभा तो थी ही, किसी भी रचना को एक बार पढ़ने पर कभी नहीं भूलते थे। हिंदी, संस्कृत, अंग्रेजी का अध्ययन लगन से किया। ग्यारह वर्ष की अवस्था में जगन्नाथ पुरी की यात्रा के समय बंगला भाषा का नाटक 'विधवा विवाह' के अध्ययन से बंगला भाषा के प्रति रुचि बढ़ी। यात्रा के दौरान देश की दशा को देखने का अवसर मिला। देश की दुर्दशा देखकर उनमें देश सेवा की भावना जगी। हिंदी भाषा का उद्धार एवं अंग्रेजी भाषा के प्रचार द्वारा राष्ट्र सेवा का व्रत लिया। सर्वप्रथम उन्होंने एक प्राइमरी पाठशाला ''चौखंभा स्कूल'' के नाम से खोली। यह पाठशाला आज भी ''हरिश्चंद्र कॉलेज'' के रूप में विद्यमान है। भारतेन्दु ने सात वर्ष की अवस्था में सन् 1857 ई. में भारतीय स्वतंत्रता का प्रथम संग्राम देखा था। भारतीय राजनीति में परिवर्तन हो चुका था। भारत इंग्लैण्ड का उपनिवेश बन चुका था। अंग्रेजों की शोषण नीति कायम थी। ब्रिटेन की महारानी द्वारा घोषित पत्र के लुभावने सपने से मोह भंग होने लगा था। यद्यपि भारतेन्दु का परिवार अंग्रेजी राज का भक्त था, लेकिन भारतेन्दु केवल राजभक्ति से ही नहीं जुड़े रहे, उन्होंने जहाँ राजभक्ति की कविताएँ लिखीं वहीं सरकार की शोषण नीति के विरोध में भी आवाज़ बुलंद की। उन्होंने राष्ट्र सेवा का व्रत लिया था और इस कार्य के लिए हिंदी भाषा को अपना अस्त्र बनाया। अंग्रेजी सरकार की कूटनीति केवल राजनीति तक सीमित नहीं थी बल्कि भाषा के विवाद को खड़ा कर वे अपना कार्य सिद्ध करना चाहते थे। उर्दू-हिंदी के झगड़े को बढ़ाकर वे हिंदू-मुसलमानों में दूरी बनाए रखना चाहते थे। इसके पीछे उनका उद्देश्य यह था कि वे नहीं चाहते थे कि हिंदू-मुसलमानों में एकता कायम हो। यह उनके लिए हानिकर हो सकता था। भारतेन्दु अंग्रेजों की नीति को भली-भांति समझते थे। उन्होंने हिंदी-उर्दू के झगड़े को समाप्त करने के लिए बीच का रास्ता निकाला। उन्होंने साहित्य रचना के लिए ऐसी भाषा की शुरुआत की, जो जनता के लिए ग्राह्य हो। उन्होंने घोषणा की, कि अपनी भाषा की उन्नति करके ही हम सभी प्रकार की उन्नति कर सकते हैं।

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।
बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल।।

तत्कालीन सामाजिक कुरीतियों से देश जर्जर हुआ जा रहा था। भारतेन्दु ने कुरीतियों के विरोध में लेखनी उठायी। निर्धनता, अकाल, बहु-विवाह, बाल विवाह, विधवा विवाह निषेध और उससे उत्पन्न व्यभिचार आदि का, अशिक्षा एवं अज्ञानता आदि का रोग, बैर, आलस्य, टैक्सों का आधिक्य, छुआ-छूत, अदालती बुराइयाँ, पुलिस के अत्याचारों आदि विषयों पर लिखकर भारतेन्दु ने नवजागरण का सूत्रपात किया। कलकत्ता में सन् 1826 ई. में प्रथम हिंदी पत्र ''उदंत मार्तण्ड'' का प्रारंभ कर पं. युगलकिशोर शुक्ल ने जिस परंपरा की शुरुआत की थी उसका विकसित रूप भारतेन्दु युग में मिलता है। स्वयं भारतेन्दु ने फिर से इस परंपरा की शुरूआत की। कवि वचन सुधा, हरिश्चंद्र मैगज़ीन आदि पत्रों द्वारा उन्होंने इस परंपरा को आगे बढ़ाया। हिंदी गद्य की विविध विधाओं की शुरूआत भारतेन्दु ने ही की। भारतेन्दु की दृष्टि किसी क्षेत्र विशेष पर सीमित नहीं थी। उन्होंने साहित्य में

तत्कालीन उन सभी विषयों पर लेखन किया जिनसे जीवन के विविध क्षेत्र में नवजागरण का उन्मेष हुआ। भारतेन्दु अभूतपूर्व प्रतिभा-सम्पन्न व्यक्तित्व लेकर आए थे। उनके साहित्यिक, सामाजिक आदि कार्यों का तत्कालीन सभी कवियों पर प्रभाव पड़ना अनिवार्य था। यही कारण है कि तत्कालीन कवियों की एक ऐसी मंडली तैयार हो गई जिसने भारतेन्दु द्वारा प्रारंभ किए गए जनजागरण के कार्य को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इस मण्डली को साहित्येतिहास में 'भारतेन्दु मण्डल' के नाम से प्रतिष्ठा मिली। आइए अब हम भारतेन्दु मण्डल के कवियों के बारे में एक-एक कर जानकारी प्राप्त करें तथा भारतेन्दु के काव्य के स्वरूप एवं विकास को जानें, उससे पहले कुछ बोध प्रश्नों के उत्तर दें।

बोध प्रश्न-1

1. क्या कारण थे कि भारतेन्दु युग से पूर्व के कवि परिपाटी के अनुसार ही काव्य रचना करते थे? दो तीन पंक्तियों में उत्तर दीजिए।

   ....

   ....

   ....

2. जनसाधारण की समस्याओं से संबंधित काव्य रचना प्रारंभ होने के पीछे क्या कारण थे? दो-तीन पंक्तियों मे उत्तर दीजिए।

   ....

   ....

   ....

3. नीचे कुछ शिक्षा संस्थाओं एवं उनकी स्थापना से संबंधित वर्ष दिए जा रहे हैं। आप इनका सही मिलान करें।

शिक्षा संस्थाएँ	स्थापना वर्षा
क) फोर्ट विलियम कॉलेज	सन् 1817 ई.
ख) हिंदू कॉलेज	सन् 1800 ई.
ग) आगरा कॉलेज	सन् 1824 ई.
घ) दिल्ली कॉलेज	सन् 1823 ई.
ङ) बरेली कॉलेज	सन् 1837 ई.
च) कलकत्ता स्कूल बुक सोसाइटी	सन् 1817 ई.
छ) ऐल्फिंसटन कॉलेज	सन् 1856 ई.

4. खड़ी बोली में पद्य रचना की प्रवृत्ति शुरुआत के किन कवियों में पायी जाती है?

   ....

   ....

   ....

5. भाषा के मामले में भारतेन्दु का क्या विचार था?

   ....

   ....

   ....

अभ्यास

1. भारतेन्दु युग की राजनीतिक परिस्थितियों की चर्चा करते हुए स्पष्ट कीजिए कि जनता में असंतोष के पीछे क्या कारण थे? दस पंक्तियों में उत्तर दीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

1.3 भारतेन्दु युगीन हिंदी काव्य का विकास

काव्य की दृष्टि से भारतेन्दु युग संक्रांति का युग है। इस समय एक ओर प्राचीन काव्य धारा का प्राचुर्य रहा तो दूसरी ओर नई काव्य धारा की शुरुआत भी हुई। इस युग के कवियों को तीन कोटियों मे रखा जा सकता है, प्रथम कोटि में ऐसे कवि आते हैं जिन्होंने आधुनिकता से अपने को बिल्कुल ही अलग रखा। सेवक, सरदार हनुमान कवि इस कोटि में आते हैं दूसरी कोटि में ऐसे कवियों को रखा जा सकता है जिन्होंने कविता लेखन का आरंभ तो प्राचीन परंपरा के अनुकूल किया किन्तु फिर वे आधुनिकता से युक्त काव्य रचना करते चले गए। ऐसे कवियों में स्वयं भारतेन्दु हरिश्चंद्र थे। इस कोटि के अन्य कवि थे बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन', प्रताप नारायण मिश्र और राधाकृष्ण दास। तीसरी कोटि में वैसे कवि आते हैं, जिन्होंने अर्वाचीन ढंग की काव्य रचनाएँ की इनमें बालमुकुन्द गुप्त का नाम प्रथम है। तत्कालीन हिंदी काव्य को नयी दिशा प्रदान करने का कार्य भारतेन्दु ने किया। उस समय के अन्य कवियों के लिए वे प्रेरणास्त्रोत बन गए थे। उनके द्वारा आरंभ किए गए कार्य को ही अन्य कवियों ने आगे बढ़ाया। बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन, राधाचरण गोस्वामी, प्रतापनारायण मिश्र, राधाकृष्ण दास इनमें प्रमुख थे।

1.3.1 पं. बदरीनारायण चौधरी ''प्रेमघन''

पं. बदरीनारायण चौधरी का जन्म सं. 1912 में जिला गोंडा के दत्तापुर गाँव में हुआ था। वर्षा ऋतु से इन्हें विशेष लगाव था। इसलिए उन्होंने अपना उपनाम भी ''प्रेमघन'' रखा था। ये भारतेन्दु के अंतरंग मित्र थे। प्रेमघन ने विपुल साहित्य की रचना की। भारतेन्दु द्वारा आरंभ किए गए कार्य को आगे बढ़ाया। जिस प्रकार भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने साहित्यिक गतिविधि को बढ़ाने के लिए ''तदीय समाज'' की स्थापना की थी उसी प्रकार प्रेमघन जी ने ''सद्धर्म सभा'' तथा ''रसिक समाज'' की स्थापना की। जिस प्रकार भारतेन्दु ने कविवचन सुधा, हरिश्चंद्र मैगजीन तथा बालाबोधिनी पत्रिकाएं निकाली थीं, उसी प्रकार इन्होंने भी साहित्य-सेवा के उद्देश्य से '' आनंद कादंबिनी'' मासिक तथा ''नागरी नीरद'' साप्ताहिक पत्र निकाला। प्रेमघन ने जितनी भी साहित्यिक रचनाएँ की वह ''प्रेमघन सर्वस्व'' नाम के संकलन में उपलब्ध है। उन्होंने प्रयाग रामागमन तथा वृद्ध विलाप के अलावा विपुल स्फुट काव्य की रचना की। विभिन्न अवसरों पर, काव्य रचना की प्रवृत्ति इनमें थी। महारानी विक्टोरिया की हीरक जयंती के अवसर पर, सनातन धर्म सम्मेलन के अवसर पर, नागरी लिपि के कचहरियों में प्रवेश के अवसर पर दादाभाई नौरोजी के

पार्लियामेंट में प्रवेश के अवसर पर तथा भारतेन्दु के निधन के अवसर पर कविताएँ लिखीं। आइए उनके स्फुट काव्य के कुछ उदाहरण देखें। इंग्लैण्ड में दादाभाई नौरोजी को काला कहकर मजाक उड़ाया गया उस समय प्रेमघन ने क्षोभ पूर्ण रचना की-

अचरज होत तुमहु सम गोरे बाजत कारे।
तासों कारे ''कारे'' शब्दुहु पर है वारे।।
कारे काम, राम, जलधर जल बरसनवारे।
यातै नीको है तुम कारे जाहु पुकारे
याहै असीस देत तुम कहँ, मिलि हम सब कारे।।

प्रेमघन, भारतेन्दु युग के उन कवियों में हैं जो प्राचीन पंरपरा से शुरू कर आधुनिकता की ओर बढ़ते गए हैं। प्राचीन पंरपरा से युक्त एक उदाहरण देखिए-

छहरै मुख पै घनश्याम से केश, इतै सिर मोर पखा फहरैं
उत गोल कपोलन मैं अति लोल अमोल लली मुक्ता भहरैं
इहि भांति सो बद्री नारायण जू दोऊ देखि रहे जमुना लहरैं
निति ऐसे सनेह सों राधिका श्याम हमारे हिये में सदा बिहरैं
''युगल मंगल स्त्रोत''

''बृजवंद पंचक'' प्रेमधन की भक्तिभावपूर्ण रचना है। इसमें दोहा, कुंडलियाँ तथा छप्पय है। ''कलिकाल तर्पण में प्रेमधन जी ने भारत के स्वर्ण अतीत एवं वर्तमान दुःखद दशा का चित्रण किया है। भारतेन्दु की रचना ''बकरी विलाप'' से प्रभावित होकर उन्होंने ''पितर प्रलाप'' की रचना की। इस रचना में राष्ट्रीयता का स्वर प्रबल है। ''शोकाकुल बिंदु'' पर रचना इन्होंने भारतेन्दु के देहावसान लिखी थी निम्नलिखित उदाहरण से आपको स्पष्ट होगा कि विशिष्ट अवसर पर कितनी अनुकूल रचना करते थे-

अथयो हरिश्चंद्र अमंद सो भारत चन्द चहुँ तम छाय गयो
तरू हिंदुन के हित उन्नति को बढ़तै अबहीं मुरझाय गयो
गुन रासि जवाहिर की गठरी अनमोल सो कौन उठाय गयो
नित जाके गरूर से चूर रह्यो वह हिन्द ते हाय हराय गयो।

तत्कालीन अंग्रेज़ी सरकार द्वारा टैक्स लगाए जाने पर कवियों के अंदर रोष प्रकट हुआ। प्रेमधन ने लिखा-

''जबसे लागहू इ टिक्कस हाय उड़ा होस मेरा
रोवे के चाहि, हंसी ढीढी उठाना कैसा''

वे आगे लिखते हैं-

रोओ सब क मुंह बाय बाय
हाय हाय टिक्कस हाय हाय
रोज कचहरी धाय धाय
अमलन के ढिंग जाय जाय

भारतेन्दु के समान प्रेमघन भी प्रथमतः राजभक्ति से पूर्ण रचना करते थे। 1857 की क्रांति की निंदा करते हुए उन्होंने लिखा-

देसी मूँढ सिपाह कछुक लै कुटिल प्रजा संग
कियो अमिट उत्पात रच्यो बिन नासन को ढंग

महारानी विक्टोरिया के हीरक जुबली अवसर पर वे लिखते हैं-

तेरी सुखद राज की कीरति रहै अटल इत
धर्मराज, रघु, राम प्रजा हिय में निमि अंकित

किंतु विदेशी सरकार की वास्तविकता को जानने के बाद उनमें देश के प्रति प्रेम जगा। भारत की प्रशंसा करते हुए वे लिखते हैं-

सब द्वीप की विद्या कला विज्ञान इत चली आवई
उद्यम निरत आरन प्रजा रहि सुख समृद्धि बढ़ावई
दुष्काल रोग अनीति नसि, सद्धर्म उन्नति पावई
भर बिवुध, अन्न, सुरत्न भारत भूमि नित उपजावई

''आनंद अरूणोदय'' में भारतीयों को उद्‌बुद्ध करने के लिए उन्होंने लिखा-

''उठो आर्य संतान सकल मिलि, बस न विलंब लगाओ''

भारतेन्दु युग के कवि जनता से जुड़ गए थे। लोक जीवन से संबंधित रचनाएँ होने लगी थीं। जिस प्रकार भारतेन्दु ने बारातों में गाए जाने के लिए उर्दू के सेहरा के ढंग पर एक बनरा लिखा था उसी प्रकार प्रेमघन जी ने भी बनरे लिखे, एक उदाहरण द्रष्टव्य है-

बनरा का ससि आया बनरा
सबके चखनि चकोर बनाया
जामा सुभग सियो दरजी तुव,
बग रुचिर रंगरेज सुहाया।
सुखमा सीस तिहारी माली
सजि सेहरा अति अधिक बढ़ाया।

कजरियों की रचना कर भारतेन्दु युग के कवियों ने साहित्य को जन-जीवन से जोड़ दिया था। लोक गीतों में कजली या कजरी बहुत ही प्रसिद्ध है। प्रेमघन ने कजरियों की रचना की। निम्नलिखित उदाहरण में कवि ने मनः स्थिति ब्रह्म का कितना सुन्दर वर्णन किया है-

तोहसे यार मिले के खातिर सौ सौ तार लगाईला।
गंगा रोज नहाईला, मंदिर में जाईला
कथा पुरान सुनीला, माला बेढि हिलाईला हो।

यह बनारसी लय से युक्त रचना है। प्रेमघन ने मुख्यतः ब्रजभाषा में कविता रचना की किन्तु, उन्होंने उर्दू में भी कुछ रचनाएँ की। एक गज़ल की कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य है-

मेरी जान ले, क्या नफा पाइएगा
छुड़ाकर ए दामन किधर जाइएगा।
जो कहता हूँ अब रहम हो जाए मुझपर
तो कहते हैं फिर आप आ जाइएगा।

प्रेमघन के काव्य में प्राचीनता का तत्व कम, नवीनता का अधिक है।

जिन रचनाओं में प्राचीनता के तत्व हैं, वे हैं अपूर्ण प्रबंध अलौकिक लीला, कवित्त संबंधों के संग्रह प्रेम पीयूष वर्षा, दोहों के संग्रह 'लालित्य लहरी' और शृंगार बिंदु। रामभक्ति, देशभक्ति, हिंदी के प्रति अनन्य प्रेम तथा हास्य आदि नवीनता के तत्व से युक्त रचनाएँ इस प्रकार हैं-

राजभक्ति- मंगलाशा, हार्दिक हर्षादर्श, भारत बधाई, आर्याभिनंदन और सौभाग्य समागम।

देशभक्ति- कलिकाल तर्पण, पितर प्रलाप, मंगलषा, हार्दिक हर्षादर्श, भारत बधाई, स्वागत पत्र, आनंद बधाई, आनंद आर्याभिनंदन के अलावा फुटकर संगीत काव्यों, कजली होली आदि।

हिंदी के प्रति अनन्य प्रेम- आनंद बधाई शीर्षक कविता में

हास्य- 'हास्य बिंदु' तथा 'होली की नकल''

प्रेमचंद के काव्य का अधिक भाग समसामयिक है। वे परंपरा से आरंभ कर नवीनता की ओर अग्रसर होते गए। वर्षा ऋतु से उन्हें विशेष प्रेम था। अतः अपनी कजलियों में वर्षा ऋतु का बहुत सुंदर वर्णन किया। होली, कजली, ठुमरी, दादरा, खेमटा, लावनी, गज़ल आदि की रचना की और काव्य को जन जीवन से जोड़ा। भारतेन्दु को छोड़कर वे उस युग के सबसे बड़े कवि थे। केवल प्रतापनारायण मिश्र को उनके समक्ष लाया जा सकता है। आइए अब प्रतापनारायण मिश्र के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के बारे में संक्षिप्त जानकारी प्राप्त करें।

1.3.2 प्रतापनारायण मिश्र

प्रतापनारायण मिश्र का जन्म 24 सितंबर सन् 1856 ई. को कानपुर में हुआ था। स्कूली शिक्षा ढंग से नहीं हो पायी। हिंदी अंग्रेजी के अलावा स्वाध्याय से इन्होंने उर्दू, फारसी तथा बंगला भाषा का ज्ञान प्राप्त किया। भारतेन्दु द्वारा प्रकाशित पत्रिका 'कविवचन सुधा' के द्वारा उनका झुकाव भारतन्दु की ओर हुआ। मिश्र जी की प्रथम काव्य रचना 'प्रेम पुष्पावली' की प्रशंसा स्वयं भारतेन्दु ने की। भारतेन्दु जैसे कवि की प्रशंसा पाकर मिश्र जी को बहुत बल मिला। उन्होंने लिखा-

श्री मुख जासु सराहना कीन्हीं श्री हरिचंद
तासु कलम- करतूति लखि, लहै न को आनंद।

मिश्र जी ने तत्कालीन अन्य कवियों की भाँति ही सन् 1883 ई. में 'ब्राह्मण' नामक मासिक पत्र निकाला। यह पत्र 50 वर्षों तक चला। भारतेन्दु युग में हिंदी भाषा साहित्य को नयी दिशा देने में तत्कालीन साहित्यकारों का बहुत बड़ा योगदान रहा। भारतेन्दु ने तो नयी-नयी विधाओं की शुरुआत की थी। उनके समय के अन्य लेखकों ने भी साहित्य की विविध विधाओं में लेखन किया। प्रतापनारायण मिश्र ने नाटक उपन्यास निबंध की भी रचना की। मिश्र जी की काव्य रचनाएँ इस प्रकार हैं-

1) प्रेम पुष्पावली
2) मन की लहर - (उर्दू, खड़ी बोली, संस्कृत, ब्रजभाषा, फारसी में 31 लावनियाँ)
3) श्रृंगार विलास
4) दंगल खंड (आल्हा)
5) ब्रेडला स्वागत
6) लोकोक्ति शतक - 100 कहावतों पर देश प्रेम भरी कविता

मिश्र जी प्रताप, प्रतापहरी, परतापनारायन, प्रेमदास आदि उपनाम से कविता करते थे। उर्दू में इनका तखल्लुस था बरहमन, भारतेन्दु एवं प्रेमघन की तुलना में इनकी कविताएँ कम हैं फिर भी उनमें नवीनता सबसे अधिक है। लोक गीतों की रचना कर अन्य समकालीन कवियों के समान उन्होंने कविता को जन सामान्य से जोड़ा। कजली, लावनी, होली, दादरा तो लिखा ही साथ ही आल्हा जैसे लोकप्रिय प्रबन्ध गीत की भी रचना की। कजली का एक उदाहरण देखिए-

कसके मारे रे करेजवा तोरे नैना बाँके बान
नहिं भूति जस यह दिन तानी बाकी भौंह कमान
जादू भरी रसीली चितवन, प्रेम भरी मुसकान
छिन-छिन पल-पल पर सुधि आवत, बिसरावत सब ज्ञान
अब 'परताप' न जीवत रहिहैं, बिना अधर रस दान
ध्यान आप गर लागु नियरवा, नाहिन निकसे प्रान

होली लोक गीत में मिश्र जी ने देश की दुर्दशा का चित्र खींचा है। उन्होंने एक दर्जन होलियाँ लिखीं। होली का एक सरस उदाहरण प्रस्तुत है-

आजु फगुवानो डोलै छैल
रंग-राते रसिया के मोरे, चलि न सकै कोउ गैल
जैसी आप सखा संग तैसो, काहू को न दबैल
आवत लखिकै कुल जुवतनि को, लगै मचावन कैल
ताकि ताकि जात हनै पिचकारी, दिधरक निलज अरैल
गावत निपट कुकारी गारी, लावत नाहि मन मैल
सबकी लाल लेन में दैया, गिनै सधारन सैल
'प्रेमदास' धौ काह करैगों, जसुमति का बिगरैल

भारतेन्दु युग की कविता का काल नवजागरण का काल था। कविता का प्रत्येक पक्ष एक नयी दिशा से पूर्ण स्फूर्ति के साथ आगे बढ़ रहा था। मिश्र जी कविता के लिए लोकहित और सरसता को प्रमुख मानते थे। भारतेन्दु युग के कवि जहाँ परंपरा के अनुकूल रचनाएँ करते थे वहीं धीरे-धीरे उनका रुझान आधुनिकता की ओर होता गया। मिश्र जी ने भी परंपरानुकूल वीर, भक्ति एवं श्रृंगारयुक्त रचनाएँ की। बाद में देश भक्ति, हास्य-व्यंग्य से युक्त रचनाएँ कीं। वीर भावना से युक्त रचनाएँ कम हैं लेकिन जो हैं वे उत्कृष्ट हैं। एक उदाहरण से आप इसे स्पष्ट समझ सकते हैं। 'हठी हमीर' रचना में युद्ध क्षेत्र का वर्णन बहुत सुन्दर है। इसमें चित्रात्मकता है-

कहूँ धन सों गरजै गजराज। कहूँ महि खूदहि कूदहि बाज।।
कहूँ झमकै रथ भातिन भांति। कहू फबि फैलि पदातिनु पांति।।
लसै अति सेन सजी चतुरंग। फबी फहिराहिं ध्वजा बहुरंग।।
बिराजहिं बीर सजे तन तानि। गहे कोउ शूल कोउ धनुबान।।
लिये कर पट्टिम तोमर कोय। जिन्हें लखि कालहू को भय होय।।
चमकि रहीं चहुँधा असि मग्र। सकैं करि परबत हूँ कहं भग्र।।
चढ़ी परवान भयंकर तोप। करै छिन मांहिं त्रिलोकहि लोप।।

परिस्थितियों की चर्चा करते समय हमने देखा कि भारतेन्दु युग के समय मत-मतान्तरों का जोर बढ़ रहा था। मिश्र जी ने अपनी भक्ति पूर्ण रचनाओं में स्पष्ट रूप से मतवाद से दूर रहने की बात कही-

झूठे झगड़ों से मेरा पिण्ड छुड़ाओ।
मुझको प्रभु अपना सच्चा दास बनाओ।
'प्रताप लहरी'

मिश्र जी की भक्ति पूर्ण रचनाओं में भक्तिकालीन कवियों की सी उपदेशात्मकता मिलती है। संसार के भयावह परिणामों से अवगत कराते हुए वे ईश्वर की ओर उन्मुख होने की बात करते हैं-

जागो भाई जागो रात अब थोरी।
काल चोर नहि करन चहत है जीवन धन की चोरी।।
औसर चूके फिर पछतैहो हाथ मीनि सिर कोरी।
काम करो नहि काम न एहै, बातै कोरी कोरी।।
जो कुछ बीती बीत चुकी सो चिंता से मुख मोरी।
आगे जागे बलै सो कीजै, करि तन मन इकठौरी।।
'प्रताप लहरी'

मिश्र जी की श्रृंगारपूर्ण रचनाएँ स्वाभाविकता से पूर्ण है। शकुन्तला के मुख पर एक भ्रमर मंडरा रहा है। दुष्यन्त यह दृश्य देख कर भ्रमर की सराहना करता है-

धन्नि भँवर बड़ि भाग तिहारे रे।
कौन तप करि कीन्हीं देहि कारी-कारीं रे।
फिर-फिर परिस-परिस भागत हौ,
बड़े-बड़े नैनन कीनीकै अनियारी रे।।
उड़ि-उड़ि गुंजत कानन के ढिग,
रस की कहत मानौ बाटै प्यारी-प्यारी रे।
भाजत होठन को रस लै-लै,
बाँह सो हटावै ज्यों-ज्यों यह सुकुमारी रे।।

रीतिकालीन परंपरा के अनुरूप मिश्र जी ने ऋतु वर्णन किया है। वसन्त ऋतु, विरहिणी के लिए सबसे दुखदायिनी होती है। इस ऋतु में नायिका की क्या स्थिति है, द्रष्टव्य है-

कीन्हौ कहा तरुन जु लूटि लीन्हों नाहक में,
दीन्हों बन कोकिलन सहज पुकारे में।
आगि सी लगाय दई किंसुक गुलाबन में,
भौरन को डार्‌यो बहि बरत अंगारे में।।
परताप नारायनहु को न करत डर,
काम की जगाव दिय हिरदय हमारे में।
सबहि सताय हाय लेकै रितुराज पापी,
जै है कि जमराजपुर आठ-अठवारे में।

'प्रताप लहरी'

भारतेन्दु युग राष्ट्रीय चेतना का युग है। ब्रिटिश साम्राज्य से उत्पन्न असंतोष सभी ओर फैल रहा था। मिश्र जी की कविताओं में भी यह असंतोष प्रकट हुआ है। प्रथमतः तो इन्होंने शासकों के छोटे-छोटे हितैषी कार्यों की मुक्त कंठ से प्रशंसा की। युवराज विक्टर का स्वागत करते हुए मिश्र जी कहते हैं कि यदि तुम महारानी से निवेदन करोगे तो वे भारतीयों के कष्ट का निवारण करेंगी-

कहु उपाय कर प्रजा वर्ग की बिपति बिदरिहै,
सहजहि मह आनन्द अमृत की वर्षा करिहै।।
फिर हम कबहूँ तुम्हरो गुण जिय ते न भूलैहैं।
कहिहै जय, जयकार सदा इमि आशिष देहैं।।
जुग-जुग जीवहु जय जय युत युवराज दुलारे,
जुग-जुग जीवहु श्री विजयिनि के प्रान पियारे।।

'ब्राह्मण खंड 6, संख्या 4 युवराज स्वागतन्ते'

किंतु जब उन्होंने देखा निवेदन का कोई प्रभाव नहीं, उन्होंने अंग्रेजों की भर्त्सना करनी प्रारंभ की। भारतीयों को जगाना शुरू किया।

आपनो काम आपने ही हाथन भल होई।
परदेशिन परधर्मिन ते आशा नहिं कोई।।
धन धरती जिन हरी सुकरि है कौन भलाई।
जोगी काके मीत कलंदर केहि के भाई।।
सब तजि गहौ स्वतंत्रता नहि चुप लौटे खाव।
राजा केरे त्यो न्याय है पांसा पेरे तो दाव।।

'लोकोक्ति शतक'

एकता के बिना देश की उन्नति संभव नहीं अतः लोगों में एकता स्थापित कर देश की उन्नति की कामना करते हुए मिश्र जी लिखते हैं-

प्रीति परस्पर राखहु मीत, जइहै सब दुख सहजहि बीत।
नहिं एकता सरिस बल कोय, एक-एक मिल ग्यारह होय।।

सामाजिक कुरीतियों से देश अधःपतन की ओर उन्मुख हो रहा है। बाल-विवाह की निन्दा करते हुए वे लिखते हैं-

बाल ब्याह ने बल नहिं रखा, चलते काया डोली है।
नहीं आने की मुख पर लाली, वृथा बिगाड़ी टोली है।।
'प्रताप लहरी'

समाज सुधारक एवं आर्य समाज के संस्थापक दयानंद के निधन पर वे ईश्वर को कोसते हैं-

करुणानिधि कहवाय हाय हरि आज कहा यह कीन्हों।
देश अधार जतन तत्पर वर पुरुष रतन हरि लीन्हों।।
जो ऐसे ही बोझ लगत हो काल चक्र तब हाथे।
कस न गिराय दियो काहू भारत कलंक के माथे।।

देश प्रेम विषयक रचनाओं से स्पष्ट है कि उनमें एक सच्चे देश भक्त की पुकार है, लोक भावना से परिपूर्ण रचनाओं में उस समय का चित्र साकार हो उठा है। कविताएँ जनता में स्फूर्ति, स्वाभिमान एवं राष्ट्रीय चेतना जगाने में समर्थ हैं।

मिश्र जी ने हास्य व्यंग्य से पूर्ण रचनाएँ की किंतु उनकी ऐसी रचनाएँ, कोरे हास्य को महत्व नहीं देतीं बल्कि उसमें समाजोपयोगी तत्व निहित रहते हैं-

गोरण्डदास उवाच
जग जाने इंगलिश हमैं, वाणी वस्त्रहि जोय।
मिटै वदन कर श्याम रंग, जन्म सुफल तब होय।।

1.3.3 श्री राधाचरण गोस्वामी

राधाचरण जी का जन्म 25 फरवरी सन् 1859 ई. को वृंदावन में हुआ था। इनके पिता गोस्वामी गल्लू जी स्वयं सुकवि थे। भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने 'हरिश्चंद्र मैगजीन' तथा 'हरिश्चंद्र चंद्रिका' नाम की पत्रिकाओं का प्रकाशन किया था। राधाचरण जी हरिश्चंद्र मैगजीन पढ़ा करते थे। इस पत्रिका के माध्यम से उनमें हिंदी के प्रति प्रेम बढ़ा। हिंदी के प्रचार के लिए इन्होंने 'कवि कुल कौमुदा' नामक एक संस्था की स्थापना की थी। तत्कालीन अंग्रेजी शासन द्वारा जन भाषा हिंदी के विकास को रोकने का षडयंत्र रचा जा रहा था। राधाचरण जी ने ऐसे समय में शिक्षा कमीशन के सामने हिंदी के पक्ष में 21 हजार लोगों के हस्ताक्षरयुक्त आवेदन प्रस्तुत किए। अन्य लेखकों के समान उन्होंने 'भारतेन्दु' नामक पत्र निकाला तथा इसके माध्यम से हिंदी साहित्य की सेवा की। राधाचरण जी ने गद्य-पद्य के लगभग छत्तीस ग्रंथों की रचना की। ब्रजभाषा से राधाचरण जी को अत्यंत प्रेम था। ब्रजभाषा के संबंध में वे लिखते हैं-

ब्रजभाषा भाषा भाषा ललित, कलित कृष्ण की केलि
या ब्रज मंडल में उठी, ताकी घर घर बेलि

सन् 1883 ई. में उन्होंने जब हिंदी के पक्ष में 21 हजार लोगों के हस्ताक्षर करवाए, उस समय हिंदी के संबंध में कहा-

कवि, पंडित, परिजन, प्रभृति, छात्र, रसिक रिझावार
राजा प्रेम सप्रेम बस, करि हिंदी को प्यार।
हिंदी हिन्दुस्तान की, भाषा विषद विशाल
जन्म लेत सवसो कहे, माँग माँ दादा बाल।

भारतेन्दु युगीन अन्य कवियों की भाँति ये अत्यंत भारत भक्त थे। उन्होंने अपनी रचनाओं में तत्कालीन अत्याचारी शासन की कटु आलोचना की, देश-दुर्दशा का अंकन किया तथा स्वदेश की प्रशंसा की है। पश्चिम का प्रभाव भारत पर बढ़ रहा था, ऐसा लगता था भारतीय संस्कृति समाप्त हो जायेगी। इसका गोस्वामी जी ने इस लावनी में चित्रण किया है।

मैं हाय हाय दै ध्याय पुकारी कोई
भारत की डूबी नाव ऊबारो कोई
उड़ गए वेद के बतदवान अति भोरे
ऋषिजन रस्सा नहि रहे खैंचनहारे
यामैं चिंतामणि सदृश रत्न की ढेरी
यामै अमृत सम औषधीन की फेरी
बह चली सकल यूरोप, हाय मति भोई
भारत की डूबी नाव ऊबारो कोई

राधाचरण जी की काव्य रचनाओं में राजभक्ति तथा देश भक्ति दोनों पायी जाती है। लेकिन तत्कालीन शासन की खुलकर आलोचना करने की प्रवृत्ति बढ़ती दिखायी देती है। भारत के स्वर्णिम अतीत का चित्रण कर उन्होंने लोगों में नवचेतना फैलाने का प्रयास किया। उनकी काव्य रचनाएँ इस प्रकार हैं: 1) नव भक्तमाल 2) दामिनी दूतिका 3) शिशिर सुषमा 4) इश्क चमन- प्रेम संबंधी दोहे 5) भ्रमर गीत 6) निपट नादान बारहमासी 7) प्रेम बगीची - 17 पद, 8) भारत संगीत - 19 पद 9) विधवा विलाप-50 दोहे 10) भू-भार हरणार्थ प्रार्थना - 12 छप्पय 11) श्री गोपिका गीतम (संस्कृत में), 12) पातित स्त्रोत, रेलवे स्तोत्र, यमलोक की यात्रा (परिहास रूपी रचनाएँ)।

1.3.4 राधाकृष्ण दास

राधाकृष्ण दास का जन्म 7 अगस्त, सन् 1865 ई. को काशी में हुआ था। ये भारतेन्दु मण्डल के मुख्य कवियों में से थे। साथ ही भारतेन्दु हरिश्चंद्र के फुफेरे भाई भी थे। हिंदी भाषा साहित्य के विकास के लिए उन्होंने अथक प्रयास किया। सन् 1893 ई. में स्थापित 'नागरी प्रचारिणी सभा' काशी के सभापति पद पर रहे तथा इसके माध्यम से हिंदी भाषा साहित्य को गौरवमय स्थान दिलाने का प्रयास किया। जब सन् 1895 ई. में अंग्रेजी सरकार ने हिंदी के लिए रोमन लिपि चलाने का षडयंत्र रचा, उस समय उन्होंने रोमन लिपि की अपूर्णता बताई तथा देवनागरी लिपि की प्रशंसा की। अदालतों में होने वाले कार्यों में हिंदी के प्रयोग के लिए आंदोलन में भी सहयोग दिया। राधाकृष्ण दास ग्रंथावली के अनुसार इनकी समस्त काव्य रचनाएँ इस प्रकार हैं-

1) मेकडानेल पुष्पांजलि, 2) विजयिनी विलाप 3) पृथ्वीराज प्रयाण 4) भारत बारहमासा 5) जुबिली 6) देश दशा 7) छप्पन की बिदाई, नए वर्ष की बधाई 8) राम जानकी 9) प्रताप विसर्जन 10) रहिमन विलास 11) विनय 12) फुटकर कविता, सुनीति।

अन्य साहित्यकारों की भांति उन्होंने विभिन्न साहित्यिक विधाओं - लेख, जीवनचरित, नाटक आदि में लेखन कार्य किया। इन्होंने अनुवाद एवं संपादन का कार्य भी किया। राधाकृष्ण दास जी बल्लभ संप्रदाय में दीक्षित कृष्ण भक्त थे, अतः कृष्ण भक्ति से संबंधित रचनाएँ भी की। राधा संबंधी एक पद द्रष्टव्य है-

हमारो चौथ चंदा का करिहै
श्री बृजचंद चंद मुख प्रेमी, औरन सों का डरिहै।
कुल बोरिन सब कहत गाँव में और नाम का धरिहै।
'दास' कलंकहु हम प्रेमिन के ढिग आवत थरहरिहै।

राधाकृष्ण दास ने संस्कृत के 14 नीति श्लोकों का अनुवाद दोहों में किया। एक उदाहरण देखिए-

नदी, शस्त्रधारी, नखी, शृंगी, राजा, नारि
भूमि न इन्है पतीजिए, बुधजन कहत बिचारि

इन्होंने रहीम के दोहों पर कुंडलियाँ बनाई। उस युग में कुंडलियाँ बनाने की परंपरा पड़ी थी। भारतेन्दु ने भी बिहारी के दोहों पर कुंडलियाँ बनाई थीं। ये तो थीं परंपरा के अनुकूल रचनाएँ। आधुनिकता से युक्त रचनाओं में राजभक्ति एवं देशभक्ति से संबंधित रचनाओं को देखिए।

राजभक्ति से संबंधित दो रचनाएँ हैं- 'जुबिली' और 'विजयिनी विलाप', जुबली में 4 छप्पय हैं, जिनमें विक्टोरिया की हीरक जयन्ती का वर्णन है। एक उदाहरण देखिए -

परम दुःखमय तिमिर जबै भारत मैं छायो
गृह-विछेद बहु खंड राज्य, सब प्रजा सतायो।
तबहि कृपा करि ईश ब्रिटिश सूरज प्रगटायो
जिन उजरत कर कृपा बहुरि यह देस बसायो।
'विजयिनी विलाप' में विक्टोरिया की मृत्यु पर शोक प्रकट किया गया है-
तिरसठ बरस जासु छाया सुख कीनो भारतवासी
ताको अनायास हरि लीनी, सब कहु आसा नासी
रे बीसवीं सदी तेरी पैरी कैसो जग आयो
या बसुधा को अमल चंद्र हरि, चहुं दिसि तम फैलायो

देशभक्ति पूर्ण रचनाओं में तीन प्रकार की प्रवृत्ति मिलती है। 1) वर्तमान दुःख दैन्य के प्रति हार्दिक सहानुभूति, 2) हिंदी के प्रति प्रेम, 3) अतीत गौरव। पहली प्रवृत्ति का एक उदाहरण देखिए-

लायो असाढ़ सुहावना, सब देस मिलि आंनद करें
यूरप अमेरिका फ्रांस जरमन, मोह जिय में नहिं धरैं
एक हम अभागे देस भर के, बैठि के रोवत रहैं
नहिं काम काज करनो हमें, बस व्यर्थ दिन खोवत रहैं

वे ईश्वर से प्रार्थना कर अनुनय विनय करते हैं कि पृथ्वी पर आकर दुःख दरिद्र दूर करे-

प्रभु हो पुनि भूतल अवतरिए
अपुने या प्यारे भारत को पुनि दुःख दरिद्र हरिए
'विनय'

18 अप्रैल, सन् 1900 ई. को कचहरियों के काम काज में हिंदी को प्रवेश मिला। राधाकृष्ण दास ने इस अवसर पर लिखा-

धनि मेकडानेल लाट प्रजा के दुःख निवारे
कचहरिया लीला सों सबके प्रान उबारे
धन उनइस सौ सन्, धन धन यह मास एपरिल
धन तारिख अठारह, जन हिय कमल गए खिल
जब लौ हिंदू हिंदी रहै, यह शुभ दिन न बिसारिहै
मेकडानेल नाम पवित्र यह, निज सादर उच्चारिहै

अतीत गौरव संबंधी उन्होंने दो रचनाएँ लिखीं 1) पृथ्वीराज प्रयाण तथा 2) प्रताप 'विसर्जन'। 'पृथ्वीराज प्रयाण' में पृथ्वीराज बंधकर गजनी जा रहे हैं, उस समय भारत माता से विदा लेते वे कहते हैं-

जननी हमें सीख अब दीजे
परम कपूत पूत तेरो यह ताहि विदा अब कीजे

इस प्रकार तत्कालीन कवियों ने समसामयिक विषयों पर रचना कर जहाँ कविता को जन-जीवन से जोड़ा वहीं समाज में जागृति फैलाने का कार्य किया। इन प्रमुख कवियों के अलावा कुछ और कवि हुए जिनमें प्राचीनता एवं नवीनता दोनों का समावेश था।

बोध प्रश्न 2

1. उचित शब्द रखकर रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

   क) हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार के लिए भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने .... की स्थापना की।

   ख) .... ने विभिन्न अवसरों में संबंधित काव्य रचनाएँ कीं।

   ग) साहित्यिक गतिविधि को बढ़ाने के लिए 'प्रेमघन' ने .... की स्थापना की।

   घ) प्रतापनारायण मिश्र .... उपनाम से कविता करते थे।

2. भारतेन्दु युग के कवियों ने पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन करके साहित्यिक एवं सामाजिक कार्य किया। नीचे पत्रिकाओं एवं प्रकाशकों के नाम दिए जा रहे हैं। आप उनका सही मिलान कीजिए।

पत्रिकाएँ	**प्रकाशक**
कविवचन सुधा	प्रेमघन
बालाबोधिनी	प्रतापनारायण मिश्र
आनंद कादंबिनी	हरिश्चंद्र
नागरी नीरद	राधाचरण गोस्वामी
ब्राह्मण	प्रेमघन
भारतेन्दु	हरिश्चंद्र

3. भारतेन्दु युग के कवियों ने हास्य युक्त रचनाएं उपयोगिता की दृष्टि से की है। चार पंक्तियों में स्पष्ट कीजिए।

   ....

   ....

   ....

अभ्यास

4. भारतेन्दु युग के कवियों ने भारतेन्दु द्वारा शुरू किए गए कार्य को आगे बढ़ाया। दस-बारह पंक्तियों में स्पष्ट कीजिए।

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

1.4 भारतेन्दु युगीन हिंदी काव्य की विशेषताएँ

आधुनिक काल के प्रारंभ में संसार के देशों में परिवर्तन आ रहा था। यूरोप के देशों में विशेषकर इंग्लैण्ड में औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप जो प्रगति हुई उसने मानव जीवन के विभिन्न पक्षों को प्रभावित किया। परिस्थितियों की चर्चा करते हुए आपने पढ़ा कि भारत में अंग्रेजी शासन के प्रारंभ होने के साथ ही एक ओर जहाँ जनता का शोषण प्रारंभ हुआ, वहीं वैज्ञानिक साधनों एवं यातायात की व्यवस्था से जनता में जागृति भी आई। उस युग के लेखकों ने जन-जागरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। समाज सुधारक नेताओं द्वारा सामाजिक, धार्मिक रूढ़ियों एवं अंधविश्वासों से ग्रसित समाज में परिवर्तन लाने के लिए आंदोलन शुरू किया गया। अंग्रेजों ने देशी राज्यों को हराया। अब राजाओं की व्यक्तिगत स्वतंत्रता नहीं रह गयी। कवियों का राज्याश्रय समाप्त होने लगा। अब कवि जनता के संपर्क में आए। रीतिकालीन दरबारी कविता का रूप बदलने लगा। पहले जहाँ आश्रयदाताओं की व्यक्तिगत इच्छा अनिच्छा के अनुसार कविताएं की जाती थी, वहाँ अब सामाजिक जरूरतों को स्थान दिया जाने लगा। हिंदी साहित्य में परिवर्तन के इस दौर को प्रारंभ करने का श्रेय भारतेन्दु हरिश्चंद्र को है। यद्यपि भारतेन्दु परंपरागत धारा से प्रभावित अवश्य थे, किन्तु नवयुग की चेतना ही उनमें मुखरित होती गई। इसे हम एक उदाहरण द्वारा समझें। भारतेन्दु से पूर्व काव्य में प्रकृति का चित्रण आलम्बन, उद्दीपन तथा उपेदशात्मक रूप में होता था। अब प्रकृति चित्रण सामाजिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर किया जाने लगा। नवीन युग की चेतना के कारण काव्य नायक-नायिका के प्रेम सीमा से मुक्त होकर जीवन के विशाल क्षेत्र को प्रभावित करने लगा। भारतेन्दु जब होली का वर्णन करते हैं, उस समय वे भारत की दयनीय दशा को नहीं भूलते।

> भारत में मची है होरी
> धूर उड़त सोई अबीर उड़ावत सबको नैन भोरी
> दीन दशा असुअन पिचकारी सक लिलार भिजयोरी।

विदेशी शासन द्वारा भारत में निष्क्रियता, निरीहता, अज्ञान आदि का वातावरण बना दिया गया था। कवि ने प्रकृति के साथ जोड़कर इनका किस प्रकार वर्णन किया है द्रष्टव्य है-

> छाई अंधियारी भारी सूझत नहि राह कहूँ।
> गरजि गरजि बादर से जवन सब डरावै।।
> चपला सी हिन्दुन की बुद्धि वीरतादि भई।
> छिपे वीर तारागन कहूँ न दिखावे।
> सुजस चंद मंद भयो कायरता घास बढ़ी।

उपर्युक्त वर्णन में शैली तो प्राचीन है किन्तु उपयोगिता की दृष्टि से नवीनता का समावेश है। भारतेन्दु ने प्रकृति का वर्णन तो यहाँ किया है लेकिन भारतीय वीरों की बात करते समय उनका कहना है कि जिस प्रकार बिजली चमक कर छुप जाती है उसी प्रकार यहाँ के लोगों की वीरता क्षण भर के लिए ही दिखती है। जिस प्रकार घास दूर-दूर तक घने रूप में फैल रही है, मानों यहाँ के लागों में कायरता भी उसी प्रकार फैल गयी है।

भारतेन्दु युग में हिंदी काव्य में परिवर्तन का दौर आरंभ हुआ। केवल विषयवस्तु की दृष्टि से ही नहीं, बल्कि भाषा शैली एवं छंद विधान की दृष्टि से भी परंपरा से चली आ रही परिपाटी को छोड़कर काव्य रचना आरंभ हुई। आइए इस युग के काव्य की संरचनागत विशेषताओं को एक-एक कर देखें।

1.4.1 विषयवस्तु

विषयवस्तु की दृष्टि से भारतेन्दु युग की कविता में परिवर्तन आया। इस युग के कवियों ने जहाँ प्राचीन परंपरा से चली आ रही विषयवस्तु को स्थान दिया वहीं अब धीरे-धीरे

उनका झुकाव नवीनता की ओर होने लगा। समसामयिक समस्याओं को काव्य में स्थान दिया जाने लगा। शृंगार, हास्य-व्यंग्य, ईश्वर भक्ति के अलावा देश प्रेम की रचनाएँ प्रमुख हो चलीं। हम विभिन्न प्रकार की राजनीतिक, सामाजिक, एवं आर्थिक विषयों से संबंधित रचनाओं के उदाहरण से इसे और स्पष्ट रूप से समझेंगे कि तत्कालीन युग के कवियों ने किस प्रकार विषयवस्तु चुनी। सबसे पहले प्राचीन काव्य धारा विषयक उदाहरण लें।

शृंगारिक रचनाएँ: तत्कालीन कवि परंपरा से अपने को अलग नहीं रख पाए। सभी कवियों ने रीतिकालीन परिपाटी के अनुसार काव्य रचनाएँ कीं। नायिका भेद के अंतर्गत भारतेन्दु का यह सवैया सुंदर उदाहरण है-

गोरो से रंग उमंग भर्‌यो चित्त, अंग अनंग को मंग जगाए
काजर रेख खुभी दृग में, दोऊ भौहन काम कमान चढ़ाए
आवनि बोलनि डोलनि ताकी, चढ़ी चित्त में अति चोप बढ़ाए
सुंदर रूप सो नैनन में बस्यो, भूलत नाहिनै क्योंहू भुलाए
'कर्पूर मंजरी'

इसी प्रकार अन्य कवियों ने शृंगारिक रचनाएँ की।

भक्तिपरक रचनाएँ: परंपरा से चली आ रही परिपाटी के अनुसार कवि गण भक्तिपरक रचनाएँ करते थे, भारतेन्दु युग में भारतेन्दु आदि कवियों ने भक्तिपरक रचनाएँ की। ईश्वर की प्रशंसा करते हुए भारतेन्दु लिखते हैं-

हरि लीला सब विधि सुखदाई।
कहत सुनत देखत जिय आनत देहि भयति अधिकाई।।
प्रेम बढ़त, अघ नसत, पुन्य रति जिय में उपजत आई
याहि सों 'हरिश्चंद'' करत सुनि नित हरि-चरित बड़ाई।।

कृष्ण का रूप वर्णन करते हुए 'प्रेमघन' लिखते हैं-

छहरै मुख पै घनश्याम से केश, इतै सिर मोर पंखा फहरे
उत मोल कपोलन पै अति लोल अमोल लली मुकट लहरै
निति ऐसे सनेह सों राधिका श्याम हमारे हिये में सदा बिहरै।

राजभक्तिः

इसी प्रकार, अन्य कवियों ने भी भक्तिपरक रचनाएँ की। किन्तु इस काल में भक्ति एवं रीति विषयक काव्य रचना की ओर से हटकर कवियों ने नए-नए विषयों की ओर विशेष ध्यान दिया। तत्कालीन राजनीतिक परिस्थिति ऐसी थी कि कवियों ने राजभक्ति से संबंधित रचनाएँ की। भारतेन्दु ने अनेकों रचनाएँ कीं, जिसमें राजभक्ति निहित है। महारानी विक्टोरिया की प्रशंसा करते हुए वे लिखते हैं-

पूरी अमी की कटोरिया की चिरजीओ सदा विक्टोरिया रानी
सूरज चंद प्रकाश करे जब लौ रहै सातहू सिंधु में पानी
राज करौ सुख सों तब लौं निज पुत्र औ पौत्र समेत सयानी
पालो प्रजाजन को सुख सो जग कीरति - जान करे गुनी जानी

''प्रेमघन'' ने लिखा-

तेरे सुखद राज की कीरति रहे अटल इत
धर्मराज, रघु, राम, प्रजा हिय में जिमि अंकित

सन् 1890 ई. में राजकुमार विक्टर के भारत आगमन पर प्रतापनारायण मिश्र ने लिखा-

हरि शशि संवत पांच मँह, सित पख अगहन मास
श्री विक्टर आगमन से, भयो हिंद सुख रास

इस प्रकार राजभक्ति से संबंधित रचनाएँ कवियों ने कीं किन्तु अत्याचारी अंग्रेजी शासन के प्रति जल्दी ही लोगों का मोह भंग हो गया। कवियों ने राजभक्ति की जगह पर देशभक्ति से पूर्ण रचनाएँ आरंभ कीं। -

देशभक्तिः

भारत के स्वर्णिम अतीत की याद दिलाकर लोगों में जागरण के लिए प्रयत्न शुरू हुआ। भारतेन्दु ने लिखाः-

कहँ गए बिक्रम भोज राम बनि कर्ण युधिष्ठिर
चंद्रगुप्त चाणक्य कहाँ नासे करिकै थिर
कहँ छत्री सब मो जो सब गए कितै गिर
कहाँ राज को तौन साज जोहि जानत है चिर

भारत की दुर्दशा से व्यथित होकर सभी को मिलकर देश दशा पर विचार करने के लिए लिखते हैं-

रोअहु सब मिलिकै आवहु भारत भाई
हा हा! भारत दुर्दशा न देखी जाई।

भारत की दुर्दशा पर प्रेमघन लिखते हैं-

मची है भारत में कैसी होली, सब अनीति गति हो ली
पी प्रमाद मदिरा अधिकारी, लाज सरम सब धो ली

सन् 1885 ई. में अखिल भारतीय कांग्रेस पार्टी की स्थापना हुई जिसके द्वारा भारतीय जनता ने अंग्रेजों के खिलाफ आंदोलन शुरू किया। प्रतापनारायण मिश्र पार्टी की प्रशंसा करते हुए लिखते हैं-

जय जयति भगवति कांगरेस असेष मंगल कारिनी

तत्कालीन कवियों ने भाषा प्रेम से संबंधित रचनाएँ कीं। भारतेन्दु ने लिखा-

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल
बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को शूल

भारतेन्दु का विचार था कि सभी देशों से ज्ञान की बातें लेकर उसे अपनी भाषा में ही प्रचार करने से कल्याण होगा।

विविध कला शिक्षा अमिट ज्ञान अनेक प्रकार
सब देसन से लै करहुँ भाषा मांहि प्रचार

प्रतापनारायण मिश्र देवनागरी को गले लगाने के लिए भारतीयों को आदेश देते हैं-

देवनागारिहि गरे लगाओ पैहो मोद महान
रहो निशंक मद माते श्री परताप समान

भारत की आर्थिक स्थिति पर भी तत्कालीन कवियों ने अपने विचार व्यक्त किए। भारतेन्दु ने जगह-जगह इस विषय पर लिखा है-

अंगरेज राज सुख साज सजे सब भारी
पै धन विदेश चलि जात इहै अति ख्वारी

टैक्स लगाने पर वे लिखते हैं-

चना हाकिम लोग जो खाते
सब पर दूना टिकस लगाते

''प्रेमघन'' लिखते हैं-

रोओ सब मुँह बाय बाय
हाय टिकस हाय हाय

इस प्रकार, भारतेन्दु युगीन कवियों ने जहाँ परंपरागत विषयों पर काव्य रचनाएँ की वहीं परिस्थितिनुकूल नवीन विषयों पर भी उनका ध्यान गया। देश प्रेम, समाज सुधार, भाषा प्रेम आदि विषयों पर रचनाएँ करके उन्होंने भारतीयों में जनजागरण फैलाने का प्रयत्न किया।

1.4.2 भाषा शैली

भारतेन्दु युग से पूर्व काव्य का आधार मध्य युग में भक्ति भावना फिर रीतिकाल में शृंगार तथा प्रेम भावना एवं चमत्कारप्रियता की प्रमुखता थी। आधुनिक काल में इस प्रवृत्ति में बदलाव आया। यह परिवर्तन केवल भावों एवं विचारों में ही नहीं बल्कि भाषा के क्षेत्र में भी आया। भारतेन्दु युग से पूर्व ब्रजभाषा एवं अवधी को ही काव्य के लिए उपयुक्त समझा जाता था। रीतिकाल में तो ब्रजभाषा का मान इतना बढ़ गया था कि कविगण ब्रजभाषा छोड़ किसी अन्य भाषा में कविता करते ही नहीं थे और मान्यता यह हो गई थी कि ब्रजभाषा के अलावा किसी अन्य भाषा में कविता हो ही नहीं सकती। भारतेन्दु युग में यह धारणा दूर हुई। अब खड़ी बोली में काव्य रचना की प्रवृत्ति बढ़ी। भक्तिकाल में कवियों ने कविता को भक्तिभाव से पूर्ण बना दिया था। रीतिकाल में छंद, अलंकार का चमत्कार दिखाने के लिए भाषा को जनसामान्य से दूर कर दिया गया। भारतेन्दु युग में कवियों ने भाषा को कृत्रिमता के घेरे से बाहर निकाला। इस कार्य की शुरुआत भी भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने ही की। उन्होंने भाषा को अलंकृत करने का परिश्रम नहीं किया। तत्सम शब्दों का बहिष्कार तथा तद्भव शब्दों का प्रयोग करके उन्होंने भाषा को सरल एवं सर्वग्राह्य बनाया। पूर्व प्रचलित भुआल, बयन, चक्कवै, सायर, लोयन आदि शब्दों का पूर्ण बहिष्कार किया। एक उदाहरण देखिए-

मारग प्रेम को को समुझै, ''हरिचंद'' यथारथ हो यथा है
लाभ कछु न पुकारन में, बदनाम ही होने की सारी कथा है
जानत है हिय मेरो भली विधि, और उपाय सबै विरथा है
बावरे हैं बृज के सगरे, मोहिं नाहक पूछत कौन विथा है।

इस सवैये में भारतेन्दु ने मार्ग, यथार्थ, व्यथा, वृथा के स्थान पर मारग, यथारथ, बिथा और विरथा का प्रयोग किया है। इस प्रकार उनकी रचनाओं में सैकड़ों शब्द खोजे जा सकते हैं।

उर्दू का प्रयोग

उर्दू के प्रचलित शब्दों का प्रयोग कर उन्होंने भाषा को बोधगम्य बनाया-

राजपाट हय गय रथ प्यादे बहुविधि अन धन धाम सभी
हीरा मोती पन्ना मानिक कनक मुकुट उर दाम सभी
खाना पीना नाच तमाशा लाख ऐश आराम सभी
जैसे विंजन नमक बिना त्यौं राम बिना बेकाम सभी

इस उदाहरण में खाना, तमाशा, ऐश-आराम, बेकाम आदि उर्दू के शब्द हैं।

भारतेन्दु युग के कवि काव्य की भाषा को जन-साधारण से जोड़ देना चाहते थे। वे ऐसे सरल एवं प्रचलित शब्दों का प्रयोग करते थे जो जन-सामान्य के लिए बोधगम्य हो।

प्रतापनारायण मिश्र ने उर्दू का प्रयोग इसी दृष्टि से किया। ''प्रेम प्रसंग'' से एक उदाहरण देखिए।

गरचे यह तर्क की वला है इश्क।
तो भी देता अजब मजा है इश्क़।।
बुलहवास को तो खेल सा है इश्क़।
आशिकों के लिए कज़ा है इश्क़।।

अंग्रेज़ी आदि शब्दों का प्रयोग

भारतेन्दु युग के कवियों ने अंग्रेज़ी आदि शब्दों का प्रयोग भी किया किन्तु ऐसा प्रयोग अधिकांशतः हास्य रस की रचनाओं में हुआ। भारतेन्दु ने 'परिहासिनी' में लिखा-

1) क्रास वाच इस्टार हुए महराज बहादुर नाम सभी

2) टिकस पिया मोरि लाज को रखल्लयो ऐसे बनो न कसाई। तुम्हें कैसर की दुहाई।।

''वैदिकी हिंसा'' में वे लिखते हैं-

विष्णु वाहनी पोर्ट, पुरुषोत्तम भय मुरारि
शैंपन शिव, गौरी गिरिश, ब्रांडी ब्रह्म विचारि।।

नीचे के उदाहरण में देखिए प्रतापनारायण मिश्र ने अंग्रेजी एवं अरबी के शब्दों का कैसा प्रयोग किया है-

हमरी ही जाति हमहीं को दोष लगावै।
'सेलफिश' की नैया बूड़त कोउ न बचावै।।
सुनि न्याय नाम बिलखत बीतत दिन राती।
यह बिल भई सबति हमारि जरावत छाती।।

मुहावरों एवं कहावतों का प्रयोग-

भाषा को सजीव एवं बोधगम्य बनाने के लिए भारतेन्दु युग के कवियों ने अपनी रचनाओं में मुहावरों एवं कहावतों का प्रयोग किया। भारतेन्दु की रचनाओं में जगह-जगह निम्नलिखित मुहावरों एवं कहावतों का प्रयोग मिल जाएगा -

मुहावरे- फरियादु पिया की हाय आँख भरि आई
'हरिचंद्र' घर घर के भौंरा तुम मतलब के मीत

लोकोक्ति-जल पान के पूछनी जाति नहीं
माछर मारे जल ही हाथ
ऊँची दुकान की फीकी मिठाई

प्रतापनारायण मिश्र की 'तारापात पचीसी' में मुहावरे का प्रयोग देखिए-

तब मुख दरशन बिना, नहिं भनिहि मन मोर।
कस न दिखावै लाख कोऊ, नभ के तारे तोर।।
हाय टिक्कस हाय हाय

'लोकोक्ति शतक' में कहावत का इनका प्रयोग देखिए-

व्यापक ब्रह्म सदा सब ठौर, बादि चारिधामन की दौर।
का न देखु मन नयन उधारि, कनियाँ लरिका गाँव गुहार।।

भारतेन्दु युग के कवि जागरुक थे। इन्होंने राष्ट्रीयता के प्रचार के लिए जनसभाओं-बुन्देली, अवधी, खड़ी बोली- को काव्य का माध्यम बनाया। खड़ी बोली में रचनाएँ करके

कवियों ने इसको विस्तार प्रदान किया। खड़ी बोली की जो क्षीण परंपरा अमीर खुसरो की मुकरियों एवं कबीर के दोहों से प्रारंभ होती है उसे इस युग में विस्तार मिला। युग की नवचेतना श्रृंगारिका एवं कोमलकांत पदावली के बोझ से लदी ब्रजभाषा द्वारा संभव नहीं थी। खड़ी बोली में वह शक्ति थी जो नवचेतना एवं ज्ञान विज्ञान को जन-सामान्य तक पहुँचा सकती थी। भारतेन्दु युग के कवियों ने सरल खड़ी बोली में कविताओं की रचना करके अपने उपदेशात्मक स्वर को जन-सामान्य तक पहुँचाया।

शैलीः भारतेन्दु युग में हिंदी काव्य को नए साँचे में ढाला गया। इस युग के कवियों ने जहाँ प्राचीन काव्य शैलियों का प्रयोग किया वहीं तत्कालीन आवश्यकतानुकूल नवीन शैलियों को प्रमुख स्थान दिया। प्राचीन काव्य शैली में वीर भावना, भक्ति भावना, श्रृंगार भावना थी तो नवीन काव्य शैली में देश प्रेम, हास्य तथा प्रकृति का आवश्यकतानुकूल वर्णन है। अमीर खुसरो की तरह भारतेन्दु ने नये जमाने की मुकरी लिखी-

सब गुरुजन को बुरा बतावै।
अपनी खिचड़ी अलग पकावै।
भीतर तत्व न झूठी तेजी।
क्यों सखि साजन नहीं अंग्रेज़ी।

एक और सुंदर उदाहरण देखिए-

सीटी देकर पास बुलावै
रूपया ले तो निकट बिठावै।
ले भागे मोहि खेलहि खेल।
क्यों सखि साजन नहीं सखि रेल।

प्रस्तुत पाठ में आपने देश प्रेम, हास्य व्यंग्य आदि शैलियों को देखा है। यहाँ एक दूसरे प्रकार की शैली के बारे में जानें। भारतेन्दु ने प्राचीन एवं नवीन शैली का प्रयोग किया। अपने पूर्ववर्ती कवियों का अनुसरण करते हुए उन्होंने कला के क्षेत्र में नवीन प्रयोग भी किए। हिंदी एवं उर्दू शैलियों को मिलाकर उन्होंने नवीन शैली बनायी। निम्नलिखित उदाहरण देखिए-

जहाँ देखो वहाँ मौजूद मेरा कृष्ण प्यारा है।
उसी का सब है जलवा जो जहाँ में अशकारा है।।
मरवलूक खालिक की सिक्त समझे कहाँ कुहरत।
इसी से नेति-नेति ए यार वेदों ने पुकारा है।।

प्रकृति वर्णन कवियों की मुख्य प्रवृत्ति रही, लेकिन जहाँ पूर्ववर्ती कवियों ने नायक-नायिकाओं के प्रेम-विरह आदि के लिए ही प्रकृति वर्णन किया, वहाँ अब प्रेम की सीमा से बाहर जीवन के विशाल क्षेत्र को ध्यान में रखकर प्रकृति वर्णन किया जाने लगा। देश—दशा का चित्रण करते हुए भारतेन्दु होली का वर्णन करते समय लिखते हैं-

भारत में मची है होरी
धूर उड़त सोई अबीर उड़ावत सबको नैन भोरी
हीन दशा असुअन पिचकारी सब लिलार भिजयोरी।

विदेशी शासन के फलस्वरूप भारत में निष्क्रियता, निरीहता, अज्ञान आदि का वातावरण बन गया था। भारतेन्दु ने प्रकृति से जोड़कर जिस प्रकार की शैली अपनाई है वह दर्शनीय है-

छायी अंधियारी भारी सूझत नहि राह कहूँ।
गरजि गरजि बादर से जवन सब डरावै।।
चपला सी हिन्दुन की बुद्धि वीरता भई।
छिपे वीर तारागन कहूँ न दिखावे।
सुजस चंद मंद भयो कायरता घास बढ़ी।

उपर्युक्त वर्णन में शैली तो प्राचीन है किन्तु उपयोगिता की दृष्टि से नवीनता का समावेश है। कवि प्रकृति का वर्णन तो कर रहा है, लेकिन जब भारतीयों की वीरता की बात करता है तो उसका कहना है जिस प्रकार बिजली चमक कर छुप जाती है उसी प्रकार यहाँ के वीरों की बुद्धि एवं वीरता क्षण भर को ही दिखती है। जिस प्रकार घास दूर-दूर तक घने रूप में फैली रहती है, मानों उसी प्रकार यहाँ के लागों में कायरता फैल गयी है। इस प्रकार शैली की दृष्टि से भारतेन्दु युग में परिवर्तन आया।

1.4.3 छंदोविधान

भारतेन्दु यूग के कवियों ने जहाँ रीतिकाल से चले आते हुए पंरपरागत छंदों, दोहा, कवित्त, सवैया, चौपाई, पद, छप्पय, कुण्डलियाँ, सोरठा आदि का प्रयोग किया, वहीं उर्दू तथा लोक गीत के छंदों का भी प्रयोग किया। हम एक-दो उदाहरणों के साथ देखेंगे कि इस युग के कवियों ने किस प्रकार के छंदों का प्रयोग किया।

दोहाः चंद्रभानु नृप-नंदिनी चंद्रानलि सुकुवांरि।

कृष्णचंद्र-मनहारिनी जय चंद्रावलि नारि।

भक्त सर्वस्व, भारतेन्दु हरिश्चंद्र

छवि सागर नागर नवल सब गुन गन आगार।
छैल छबीले रसिक वर, प्रेमिका प्राण अधार।।

वर्षारम्भ, प्रतापनारायण मिश्र

पदः

सर्व	**धर्म**	**पर**	**धर्म**	**गई**	**बस।**
''	''	''	''	''	''
''	''	''	''	''	''

यह सुख पावै जो प्रताप सो, सुखमय देखे सत्य दिशा दस

प्रतापलहरी, प्रतापनारायण मिश्र

प्रगटे द्विजकुल- सुखकर चंद।
भक्ति-सुधा-रस निस-दिन वरषत सब विधि परम अमंद
मायावाद परम अधिकारी दूरि कियो दुख-द्वंद
भक्त-हृदय-कुमुदित प्रफुलित भई भयौ परम आनंद।
काशी नभ मह किरिन प्रकाशी बुध सब नखत सुछंद।
'हरीचंद' मन सिंधु बढ्यौ लखि रसमय मुख सुखकंद।

भारतेन्दु युग में कवित्त छंद का प्रयोग परंपरा के अनुसार मिलता है। ''कृष्ण चरित्र'' में भारतेन्दु के एक कवित्त का उदाहरण देखिए-

ओ री प्रान प्यारी बिन देखे मुख तेरो मेरे
जिय में बिरह घटा घहरि घहरि उठै।
त्यों ही 'हरिचंद' सुधि भूलत न क्यों हूँ तेरो
लबो केस रैन-दिन छहरि छहरि उठै।
गड़ि-गड़ि उठत कुटीले कुच कोर तेरी
सारी सी लहरदार लहरि लहरि उठै।
सालि सालि जात आधे आधे नैन बन तेरे
घूँघट की फहरानि फहरि-फहरि उठै।

प्रतापनारायण मिश्र द्वारा रचित एक कवित्त का उदाहरण देखिए-

जात ही पथिक लोग मधुपुर जो भरोसों है,
तुमहूँ प्रताप हरि सी गाढ़ तान गहियो।

भारतेन्दु युग में घनाक्षरी छन्दों का प्रयोग कवियों ने किया। 'प्रेममाधुरी' में भारतेंदु ने इस छंद का सुंदर प्रयोग किया। एक उदाहरण देखिए-

बाजौ करे वंशी धुनि बाजि बाजि श्रवनन
जोरी जोरी मुख की छवि चितहि चुराए लेत।
हंसनि हंसावत जगत सो तिहारी मुरि,
मुरानि प्यारी मन सब सौं मुराए लेत।
हरिचंद बोलनि चलनि बतरानि पीत,
पट फहरानि मिलि धीरज मिटाए लेत।
जुलफै तिहारी, लाज कुलफन तोरे प्रान,
प्यारे नैन सैन प्रान सेज ही लगाए लेत।।

इस युग में कवियों ने सवैया छंदों में रचनाएँ कीं। ब्रजभाषा का लोक-प्रचलित रूप ग्रहण कर कवियों ने सवैये छंदों की रचनाएँ कीं। इस काल के कवियों ने कुण्डलियों तथा छप्पय छंदों में भी प्रचुर रचनाएँ की। लोक जीवन की अभिव्यक्ति करने के लिए इस काल के कवियों ने लावनी, कजरी, होरी, बारहमासा, गाली, सेहरा, चैता आदि छंदों का प्रयोग किया। इनमें से कुछ उदाहरण देखिए-

लावनी-

बीत चली सब रात न आए अब तक दिल जानी।
खड़ी अकेली राह देखती बरस रहा पानी।
अंधेरी छाप रही भारी।
सुझत कहूँ न पंथ सोच करे मन मन में नारी
न कोई समझावनवारी।
चौंकि चौंकि के उझकि झरोख झांक रही प्यारी।
खड़ी अकेली राह देखती रही बरस रहा पानी।

वर्षा विनोद, 'भारतेन्दु'

वर्षा ऋतु में प्रियतमा अपने प्रिय के इंतजार में किस प्रकार व्याकुल है, भारतेन्दु ने उसका सुंदर चित्रण इस लावनी में किया है-

कजली-

प्यारी झूलन पधारों झुकि आए बदरा
ओढ़ो सुरुख चुनरी तापै श्याम चदरा।
देखो बिजुरी चमक्कै बरसै अदरा।
''हरिचंद'' तुम बिन पिय अति कदरा।

'वर्षा विनोद', भारतेन्दु

होली- कवियों ने विभिन्न वर्ण्य विषय जैस श्रृंगार, भक्ति, देश दशा आदि पर होली लिखी। भारतेन्दु द्वारा रचित विभिन्न वर्ण्य विषय की होली देखिए-

भक्ति

हम चाकर राधा रानी के
ठाकुर श्री नंद नंदन के, वृषभानी लले ठकुरानी के
निरभय रहत बदन नहिं काहू, डर नहिं डरत भवानी के
'हरिचंद' नित रहत दिवनि सूरत अजब सिवानी के

होली

विशुद्ध शृंगार

तेरी अंगिया में चोर बसें गोरी
इन चोरन मेरो सरबस लुट्यो मन लीने जोरा जोरी
छोड़ि देइ दिल बंद चोलिया पकरे चोर हम अपनी री
'हरिचंद' इन दोउन मेरी नाहक कीनी चित चोरी
'स्फुट कविताएँ'

देश दशा

जुरि आए फांके मस्त होली होय रही
घर में भूंजी भांग नहीं है तो भी न हिम्मत पस्त
होली होय रही
मंहगी परी, न पानी बरसा, बजरौ नहिं सस्त
धन सब गवा, अकिल नहिं आई, तो भी कंजली मस्त
होली होय रही
परबस कायर कूर आलसी आधे पेट परस्त
सूझत कुछ न बसंत मांहि, ये भी खराब और खस्त
होली होय रही
'मधुमुकुल'

इस प्रकार भारतेन्दु युग में जहां परंपरानुकूल छंदों का प्रयोग किया गया, वहीं लोक-जीवन एवं तत्कालीन सामाजिक समस्याओं को उठाने के लिए नए छंदों का भी प्रयोग किया। इस युग के कवियों ने किसी मतवाद से आबद्ध न होकर भावाभिव्यक्ति के अनुरूप ही छंदों का प्रयोग किया।

बोध प्रश्न-3

1. विषयवस्तु की दृष्टि से भारतेन्दु युग के काव्य में क्या परिवर्तन आया। दो-तीन पंक्तियों में स्पष्ट कीजिए।

   ....

   ....

   ....

   ....

2. क्या कारण थे कि भारतेन्दु के समय तक खड़ी बोली में काव्य रचना करने में संशय बना रहता था।

   ....

   ....

   ....

   ....

3. भारतेन्दु युग के काव्य में प्रकृति वर्णन में क्या परिवर्तन आया?

   ....

   ....

   ....

4. काव्य को जन-साधारण से जोड़ने के लिए भारतेन्दु युग के कवियों ने छंद विधान में क्या परिवर्तन किया?

....

....

....

अभ्यास

1. भारतेन्दु युग के कवियों ने भारतेन्दु द्वारा शुरू किए गए कार्य को आगे बढ़ाया। दस-बारह पंक्तियों में स्पष्ट कीजिए।

....

....

....

1.5 सारांश

- भारत में अंग्रेज़ी साम्राज्य की स्थापना के साथ यहाँ के लोगों का शोषण प्रारंभ हुआ। जनता के अंदर इस शोषण के खिलाफ असंतोष जमा होता गया। परिणाम था 1857 ई. की क्रांति। किंतु इसके साथ राजनीतिक क्षेत्र में भी परिवर्तन आया। शासन अब इंग्लैण्ड की महारानी के हाथ में चला गया। शोषण का नया दौर प्रारंभ हो गया। राज्याश्रय समाप्त होने पर कवि जनता के संपर्क में आए। देश दशा एवं समाज की गिरती दशा पर कवियों को ध्यान गया। काव्य रचनाकारों द्वारा जनता में जागृति लाने का प्रयत्न शुरू हुआ। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप भारतेन्दु युगीन हिंदी काव्य की पृष्ठभूमि की व्याख्या कर सकते हैं।

- भारतेन्दु हरिश्चंद्र का आगमन इस युग की महत्वपूर्ण घटना थी। हिंदी भाषा साहित्य को नयी दिशा प्रदान करने के लिए उन्होंने महत्वपूर्ण कार्य किया। आप भारतेन्दु द्वारा आरंभ किये गए कार्य का विश्लेषण प्रस्तुत कर सकते हैं।

- प्रेमघन, प्रतापनारायण मिश्र, राधाचरण गोस्वामी, राधाकृष्ण दास आदि कवियों ने भारतेन्दु द्वारा शुरू किये गए कार्य को आगे बढ़ाया। आप इन कवियों के योगदान को स्पष्ट कर सकते हैं।

- भारतेन्दु युग में जहाँ परंपरागत काव्य भाषा ब्रजभाषा में काव्य रचना हुई, वहीं अब खड़ी बोली में काव्य रचना की प्रवृति बनने लगी। भाषा को जनसामान्य के अनुकूल बनाया गया। विषयवस्तु के अनुकूल भाषा को ढाला गया। परंपरागत विभिन्न प्रकार के छंदों के साथ लावनी, होली, कजरी, बारहमासा आदि छंदों का प्रयोग कर काव्य को जनसामान्य के निकट लाया गया। आप भारतेन्दु युगीन हिंदी काव्य के शिल्प विधान की विशेषताएँ बता सकते हैं।

1.6 उपयोगी पुस्तकें

- **गुप्त, किशोरीलाल** : भारतेन्दु और अन्य सहयोगी कवि, हिंदी प्रचारक पुस्तकालय बनारस

- **संपादक, हेमन्त शर्मा** : भारतेन्दु समग्र, प्रचारक ग्रन्थावली परियोजना, हिंदी प्रचारक संस्थान, बनारस

- **'चन्द्र' शुक्ल, सुरेशचन्द्र** : प्रतापनारायण मिश्र, जीवन, जीवन और साहित्य अनुसंधान प्रकाशन, आचार्य नगर, कानपुर
- **वार्ष्णेय, लक्ष्मीसागर** : हिंदी साहित्य का इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद

1.7 बोध प्रश्नों / अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1. भारतेन्दु युग से पूर्व के कवि राजा के आश्रय में रहते थे। अपनी जीविका चलाने के लिए ही वे साहित्य रचना करते थे। यदि अपने आश्रयदाता की प्रशंसा के अलावा किसी विषय पर काव्य रचना करते तो हो सकता था कि उन्हें राज्याश्रय से हटा दिया जाए। इन्हीं कारणों से ये परिपाटी के अनुसार ही काव्य रचना करते थे।

2. अंग्रेजी ताकत के हाथों देशी राज्य पराजित होते गए अतः कवियों का राज्याश्रय भी जाता रहा। अब कवियों को भोग विलास की दुनिया से अलग हट कर जनता के संपर्क में आना पड़ा, अतः उन्होंने जन साहित्य की रचना प्रारंभ की।

3.

	शिक्षा संस्थाएँ	स्थापना दिवस
क)	फोर्ट विलियम कॉलेज	1800 ई.
ख)	हिंदू कॉलेज	1817 ई.
ग)	आगरा कॉलेज	1823 ई.
घ)	दिल्ली कॉलेज	1824 ई.
ङ)	बरेली कॉलेज	1837 ई.
च)	कलकत्ता स्कूल बुक सोसाइटी	1817 ई.
छ)	ऐल्फिन्सटन कॉलेज	1856 ई.

4. खड़ी बोली में पद रचना की शुरुआत अमीर खुसरो तथा कबीर की रचनाओं से होती है

5. भाषा के मामले में भारतेन्दु का यह विचार था कि वे अपनी भाषा की उन्नति के द्वारा ही सभी प्रकार की उन्नति मानते थे।

अभ्यास

1. अंग्रेज़ भारत में व्यापार करने आए थे। तत्कालीन भारत के राजनीतिक क्षेत्र में विद्वेषतापूर्ण वातावरण था। राजे आपस में लड़ा करते थे। इस परिस्थिति का लाभ उठाकर अंग्रेज़ों ने राजनीतिक क्षेत्र में दखल शुरू किया। कूटनीति के बल पर उन्हें सफलता मिली। वे यहाँ के शासक बन बैठे। जब तक पूर्ण रूप से व्यापार चलता रहा, भारत की आर्थिक स्थिति पर कोई असर नहीं पड़ा, किन्तु इंग्लैण्ड की औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप यह स्थिति उलट गई। भारत के कच्चे माल का प्रयोग इंग्लैण्ड की मशीन के उत्पादन के लिए होने लगा तथा तैयार माल का बाज़ार भारत ही बना। भारत के कुटीर उद्योग नष्ट होने लगे। तरह-तरह से शोषण प्रारंभ हुआ। भारतीय जनता निर्धन होती गई। समय-समय पर तरह-तरह के प्रतिबंध एवं टैक्स के कारण जनता में असंतोष इकट्ठा होने लगा।

बोध प्रश्न-2

1. क) तदीय समाज ख) प्रेमघन ग) सद्धर्म सभा, रसिक-समाज घ) प्रेमदास

2. कविवचन सुधा - हरिश्चंद्र

   बालाबोधिनी - हरिश्चंद्र

   आनंद कादंबिनी - प्रेमघन

   नागरी नीरद - प्रेमघन

   ब्राह्मण - प्रतापनारायण मिश्र

   भारतेन्दु - राधाचरण गोस्वामी

3. भारतेन्दु युग के कवि समाज में हो रही बुराइयों पर नज़र रखते थे, उन बुराइयों को दूर करने के लिए जनता को सतर्क करना चाहते थे। जैसे जब नये जमाने की मुकरी लिखते समय भारतेन्दु कहते हैं कि भय दिखाकर सब लूटते हैं और उनके फंदे में जो पड़ता है कभी नहीं छूटता, वह कौन है? वह पुलिस है। यहाँ वे पुलिस द्वारा हो रहे शोषण की ही बात करते हैं।

अभ्यास

1. भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने हिंदी भाषा साहित्य को एक नयी दिशा दी। साहित्य में नई विधाओं का प्रणयन किया। काव्य में विविध विषयों का समावेश किया। सामाजिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर काव्य रचना की। भारतेन्दु युग उथल-पुथल का युग था। विदेशी शासन से जनता त्रस्त थी। साहित्य में राजनीतिक, सामाजिक समस्याओं को स्थान देकर जनता में जन-जागरण लाने का कार्य शुरू किया गया। भारतेन्दु ने प़त्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन किया और इसके माध्यम से साहित्यिक गतिविधियों को बढ़ाया। भारतेन्दु के प्रभाव से तत्कालीन सभी कवियों में देशप्रेम एवं भाषा प्रेम बढ़ा, कवियों ने पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन किया। काव्य में राजनीतिक-सामाजिक समस्याओं को स्थान दिया। इस प्रकार उन्होंने भारतेन्दु द्वारा शुरू किए गए कार्य को विस्तार प्रदान किया।

बोध प्रश्न-3

1. भारतेन्दु युग परिवर्तन के दौर का था। कवियों ने जहाँ परंपरा के अनुकूल काव्य रचनाएँ की, वहीं तत्कालीन समाजोपयोगी रचनाएँ भी कीं। अब काव्य में केवल शृंगार, भक्ति या वीर भाव की ही नहीं बल्कि देश प्रेम एवं सामाजिक समस्याओं पर भी रचनाएँ की जाने लगीं

2. ब्रजभाषा एवं अवधी में काव्य रचनाएँ होती थी। ब्रजभाषा का मान इतना बढ़ गया था कि धारणा ही बन गई थी कि ब्रजभाषा के अलावा किसी अन्य भाषा में (खड़ी बोली आदि) काव्य रचना नहीं की जा सकती। यही कारण है कि खड़ी बोली में काव्य रचना करने का प्रयास नहीं होता था।

3. भारतेन्दु युग में प्रकृति वर्णन में बदलाव आया। जहाँ पहले नायक-नायिका के प्रेम को बढ़ाने में प्रकृति का चित्रण किया जाता था, वहाँ अब सामाजिक उपयोगिता आदि को ध्यान में रखा गया। उदाहरण स्वरूप अब कवि जब प्रकृति चित्रण करते हैं तो भारत की दयनीय दशा तथा समाज में हो रहे दुराचार को नहीं भूलते।

4. भारतेन्दु युग के कवियों ने परंपरागत छंदों का प्रयोग किया। साथ ही काव्य को जन-सामान्य-विशेषकर ग्रामीण जनता के साथ जोड़ने के लिए कजरी, लखनी, होली, बारहमासा, चैता के साथ उर्दू आदि के विभिन्न छंदों का प्रयोग किया।

इकाई 2 भारतेन्दु और उनकी कविता

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 पृष्ठभूमि

2.3 भारतेन्दु हरिश्चंद्र : कवि परिचय

2.3.1 जीवन परिचय

2.3.2 काव्य रचनाएँ

2.4 भारतेन्दु का काव्यः प्रमुख प्रवृत्तियाँ

2.4.1 प्राचीन प्रवृत्तियाँ

2.4.2. नवीन प्रवृत्तियाँ

2.5 संरचना शिल्प

2.5.1 भाषा

2.5.2 काव्य रूप

2.5.3 छंदोविधान

2.5.4 रस

2.5.5 अलंकार

2.6 सारांश

2.7 शब्दावली

2.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

2.9 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

2.0 उद्देश्य

अब आप इस खंड की दूसरी इकाई का अध्ययन कर रहे हैं। इस इकाई से पूर्व आपने 'भारतेन्दु युगीन हिंदी काव्य का स्वरूप और विकास' इकाई का अध्ययन कर लिया है। अब आप कवि 'भारतेन्दु हरिश्चंद्र' इकाई का अध्याय करने जा रहे हैं। इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- भारतेन्दु के आगमन से हिंदी कविता में आए नवजागरण को समझा सकेंगे;
- भारतेन्दु का जीवन परिचय दे सकेंगे तथा उनके कृतित्व के बारे में बता सकेंगे;
- भारतेन्दु काव्य की मूल संवेदना को स्पष्ट कर सकेंगे; और
- भारतेन्दु काव्य की संरचनागत विशेषताओं का विश्लेषण कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

आपने पूर्व की इकाई में 'भारतेन्दु युगीन हिंदी काव्य का स्वरूप और विकास' का अध्ययन कर लिया है। उस इकाई के माध्यम से आपने यह जाना है कि भारतेन्दु से पूर्व कौन-

कौन सी राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियाँ थीं और किस प्रकार विदेशी शासन द्वारा उनमें परिवर्तन आया। तत्कालीन परिस्थितियों में भारतेन्दु एवं उनके मण्डल के कवियों की रचनाओं ने नवजागरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। परिवर्तन का दौर साहित्यिक क्षेत्र में भिन्न-भिन्न विधाओं के माध्यम से आया। कविता में नवीनता का समावेश भाषा, शैली, विषयवस्तु सभी क्षेत्रों में हुआ। हिंदी साहित्य में यह महान परिवर्तन भारतेन्दु हरिश्चंद्र के द्वारा प्रारंभ किया गया। पूर्व इकाई के अध्ययन द्वारा आपने अनुमान लगा लिया होगा कि भारतेन्दु जैसे प्रतिभाशाली व्यक्तित्व ने तत्कालीन हिंदी साहित्य को किस प्रकार प्रभावित किया। तत्कालीन अन्य कवियों को उनकी रचनाओं से प्रेरणा मिली, उनके व्यक्तित्व ने अन्य कवियों में देशभक्ति की ज्योति जलाई। इस इकाई से हम इन्हीं महान व्यक्तियों के बारे में विस्तार से जानकारी प्राप्त कर सकेंगे। भारतेन्दु ने हिंदी साहित्य को एक नई रोशनी दिखाई। यही कारण है कि उन्हें आधुनिक हिंदी साहित्य का जन्मदाता कहा जाता है। हिंदी काव्य, नाटक, लेख अनुवाद आदि के द्वारा उन्होंने हिंदी साहित्य में नवचेतना का संचार किया। इसके साथ ही उनके द्वारा एक और महत्वपूर्ण कार्य हुआ। वह था पत्र पत्रिकाओं का प्रकाशन। हिंदी साहित्य को नया आयाम देने के लिए इसके विकास एवं विस्तार के लिए इन पत्र-पत्रिकाओं ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। राष्ट्रीयता, समाज सुधार आदि विविध विषयों से संबंधित रचनाओं पर चर्चा करते हुए हम उनके कार्यों को जानेंगे तथा यह समझने का प्रयत्न करेंगे कि हिंदी साहित्य में भारतेन्दु का क्या महत्व है। आइए हम पहले इस महान साहित्य स्रष्टा के जीवन परिचय से पूर्व तत्कालीन भारत की राजनैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति पर एक नजर डाल लें।

2.2 पृष्ठभूमि

भारतेन्दु के आगमन से पूर्व भारत की राजनीतिक परिस्थितियों में परिवर्तन हो रहा था। हिन्दुस्तान के शासन की बागडोर धीरे-धीरे खिसक कर अंग्रेजों के हाथ में चली गई थी। भारत में व्यापार करने के लिए जितनी भी यूरोपीय जातियाँ आई उनमें भी आपस में संघर्ष हुआ, किन्तु चालाकी एवं धूर्तनीति के बल पर अंग्रेजों को ही सफलता मिली। तत्कालीन भारत की राजनीतिक स्थिति से लाभ उठाकर अंग्रेजों ने यहाँ की राजनीति में हस्तक्षेप शुरू कर दिया। भारतीय राजाओं से संधि एवं संघर्ष करके ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने राजनीतिक लाभ उठाए। सन् 1757 ई. में बंगाल के शासक सिराज़्द्दौला के साथ प्लासी की लड़ाई में विजय हासिल करके अंग्रेजों ने बंगाल पर प्रभुत्व जमा लिया। धीरे-धीरे सन् 1849 ई. में सिक्खों के साथ हुए द्वितीय युद्ध के बाद समस्त भारत पर उनका अधिकार हो गया। चूँकि भारत के राजाओं में आपसी शत्रुता अधिक थी और ऐसे शासकों पर अंग्रेजों ने विजय पाई थी, मनमाने ढंग से उन्होंने यहाँ शेषण शुरू कर दिया। ईसाई धर्म को फैलाने के लिए पादरी इस देश में बहुत वर्ष पूर्व आ गए थे। लेकिन जब अंग्रेजों ने यहाँ पर शासन करना शुरू कर दिया तब पादरियों को अपने कार्य करने में और सहायता मिली। भारतीयों को अंग्रेज असभ्य और जंगली समझते थे। यहाँ के किसी भी सामाजिक धार्मिक रीति-रिवाज को नष्ट करके उन्हें गर्व होता था। भारतीय कुटीर उद्योग नष्ट होते जा रहे थे। इन सभी कारणों से भारतीयों के मन में विद्रोह शुरू हो गया। ऐसा लगने लगा कि फिरंगी अब वापस लौट जायेंगे किन्तु ऐसा हुआ नहीं। विद्रोह में तालमेल न होने के कारण सफलता नहीं मिल पाई। भारत की राजनीति में फिर एक मोड़ आया। शासन की बागडोर ईस्ट इण्डिया कम्पनी के हाथ से निकल कर सीधे इंग्लैण्ड की महारानी के हाथों में चली गई। महारानी ने सुधार की कई घोषणाएँ कीं। आधुनिक तरीकों से प्रगति के लिए कई योजनाएँ बनाई गई। भारतीयों को महारानी की घोषणा से लगा कि सचमुच ही उनकी उन्नति के लिए कार्य किया जाएगा। किन्तु यातायात की सुविधा रेल, डाक, तार आदि साधनों का प्रयोग यहाँ की उन्नति के लिए नहीं बल्कि शासन तंत्र को मजबूत करने के लिए किया गया। अंग्रेजी सरकार, द्वारा वैज्ञानिक साधनों का प्रयोग अप्रत्यक्ष रूप से भारतीयों में एकता एवं जागृति लाने में सहायक सिद्ध हुआ। महारानी के लुभावने घोषणा पत्र एवं ईस्ट

इंडिया कम्पनी के अत्याचारों की तुलना करने के बाद जनता एवं कवियों के मन में एक आशा बंधी, किन्तु अकाल, महामारी, बेकारी, टैक्स में बढ़ोतरी आदि से जनता एवं रचनाकारों की आँखें खुल गई। कई अंग्रेज शासकों को इसकी परवाह नहीं थी। कवियों ने महामारी आदि का इस रूप में मार्मिक वर्णन किया है कि भारत का धन विदेशों को चला जा रहा है। इससे यहाँ की आर्थिक स्थिति खराब हो रही है।

अंग्रेज राज सुख साज सजे सब भारी।
पै धन विदेश चलि जात इहै अति ख्वारी।।

सामाजिक सुधार के लिए, तत्कालीन मत-मतान्तरों की आलोचना की गई।

रचि बहुविधि के वाक्य पुरानन मांहि घुसाए।
शैव शाक्त वैष्णव अनेक मतत प्रगति चलाए।।
जाति अनेकन करी, नीच अरु ऊँच बनायो।
खान पान सम्बन्ध सबन सो बरुजि छुड़ायो।।

इस प्रकार विभिन्न राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक परिस्थितियों में एक परिवर्तन का दौर शुरू हो गया गया था। भारतेन्दु के जन्म के सात वर्ष बाद 1857 की क्रांति हुई। भारतेन्दु जब युवावस्था के हुए तब तक अंग्रेजी सरकार की नीतियों में परिवर्तन हो चुका था। यह परिवर्तन किसी उन्नति के लिए नहीं बल्कि भारत के शोषण के तरीकों में बदलाव के लिए किया गया। भारतेन्दु ने गहराई से तत्कालीन परिस्थितियों का निरीक्षण किया था, यही कारण है कि उनकी रचनाओं में तत्कालीन परिस्थितियों के अनुरूप राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक चेतना का स्वरूप मिलता है। आइए इस युग प्रवर्तक की जीवनी को संक्षेप में जानें।

2.3 भारतेन्दु हरिश्चंद्र : कवि परिचय

2.3.1 जीवन-परिचय

भारतेन्दु हरिश्चंद्र का जन्म काशी के प्रतिष्ठित अग्रवाल सेठ के परिवार में 9 सितम्बर सन् 1850 ई. में हुआ था। इनके पिता श्री गोपालचन्द्र उर्फ गिरिधरदास प्रतिभाशाली कवि तथा हिंदी-उर्दू एवं संस्कृत भाषा के प्रकाण्ड विद्वान थे। इस प्रकार साहित्यिक वातावरण उन्हें विरासत में ही मिला था। अपने परिवार की वंशावली का वर्णन भारतेन्दु ने पद रचनाओं में किया है। जैसा कि प्रायः देखा जाता है संसार के कई महापुरुषों के जीवन में उनके माता-पिता की छत्र छाया बचपन में ही उठ जाती है। भारतेन्दु के जीवन में भी ऐसा ही हुआ। जब वे पाँच वर्ष के हुए तब उनकी माता का निधन हो गया और जब उनकी अवस्था दस वर्ष की हुई तब पिता की छत्र-छाया उठ गई। इस प्रकार दस वर्ष की आयु से ही उन्हें कई प्रकार के संघर्ष झेलने पड़े। बचपन से स्नेह से वंचित होने पर उनका हृदय प्रेम के प्रतिदान के लिए लालायित रहता था। उनकी यह इच्छा समाज सेवा, राष्ट्रप्रेम, मातृभाषा की उन्नति के रूप में पूरी हुई। चूँकि स्वयं भारतेन्दु के पिता ही साहित्यानुरागी थे अतः उनका साहित्य के प्रति विशेष झुकाव होना स्वाभाविक था। गोपालचन्द्र जी ने एक सरस्वती भवन की स्थापना की थी जिसमें साहित्यानुरागियों का दरबार लगता था। साहित्यिक वातावरण का प्रभाव भारतेन्दु के जीवन पर पड़ा। एक बार जब उनके पिता 'बलराम-कथामृत' में उषा-हरण का प्रकरण लिखवा रहे थे, उस अवसर पर भारतेन्दु ने एक दोहा कहा-

लै व्योढ़ा ठाढ़े भये श्री अनिरुद्ध सुजान।*
बानासुर के सैन को, हनन लगे भगवान।।

*व्योढ़ा (अरगल)- वह लंबी गोलाकार लकड़ी जो दरवाजा बंद करके अंदर से खुलने से रोकने के लिए लगाई जाती है।

अरगल लेकर अनिरुद्ध खड़े हो गए और बानासुर की सेना का वध करने लगे। पिता को बालक भारतेन्दु में ऐसी प्रतिभा देख कर अति प्रसन्नता हुई। उन्होंने आशीर्वाद दिया कि भविष्य में वह बड़ा कवि बनेगा। पिता की भविष्यवाणी सच हुई, भारतेन्दु हिंदी भाषा एवं साहित्य के पथ प्रदर्शक बने।

शिक्षाः शिक्षा के लिए बनारस के क्वींस कॉलेज में भर्ती हुए किन्तु विमाता की उपेक्षाभाव के कारण पढ़ाई आगे बढ़ नहीं सकी। कालेज से नाता टूट जाना उनके जीवन के लिए एक नई राह बनाने का आधार बना। ज्ञान प्राप्ति एवं विद्यार्जन करने की ललक के कारण उन्होंने स्वयं ही संस्कृत, उर्दू, हिंदी, बांगला एवं गुजराती भाषाओं के साहित्य का गहन अध्ययन किया।

यात्राएँ: भ्रमणशील होने के कारण उन्होंने देश के विभिन्न भागों की यात्राएँ कीं। प्रथम यात्रा जो उन्होंने सपरिवार की वह भी पुरी के जगन्नाथ मन्दिर की यात्रा। इसी दौरान उन्होंने बंगला भाषा का नाटक 'विधवा विवाह' पढ़ा। सामाजिक अवस्था से परिचित हुए। यात्राओं से उनके मन में देश भक्ति की भावना जगी। हिंदी भाषा के प्रसार-प्रचार के लिए उन्होंने प्रतिज्ञा ली। चौखम्भा स्कूल की स्थापना करके उन्होंने देश सेवा एवं हिंदी के विकास-विस्तार का महत्वपूर्ण कार्य किया। यह स्कूल आज भी हरिश्चंद्र कालेज के नाम से मौजूद है। हिंदी के समाचारपत्रों के प्रकाशन का कार्य करके उन्होंने भाषा एवं साहित्य की उन्नति के लिए एक महत्वपूर्ण कार्य किया। सबसे पहले 'कवि वचन सुधा' नामक पत्र निकाला। इसमें तत्कालीन सभी लेखकों की रचनाएँ छपती थीं। अक्टूबर सन् 1873 ई. में इन्होंने 'हरिश्चंद्र मैगजीन' नाम की पत्रिका निकाली। आठ अंकों के प्रकाशन के बाद इस पत्रिका का नाम बदलकर 'हरिश्चंद्र चंद्रिका' रख दिया गया। यह पत्रिका सन् 1880 ई. तक प्रकाशित होती रही। सन् 1884 ई. में भारतेन्दु ने एक और पत्रिका 'नवोदिता हरिश्चंद्र चंद्रिका' निकालना शुरू किया। किन्तु इसके दो अंक ही प्रकाशित हो सके। भारतेन्दु की ही प्रेरणा से तत्कालीन लेखकों ने 'आनंद कादम्बिनी', 'हिंदी प्रदीप', 'ब्राह्मण', 'काशी पत्रिका' 'मित्र विलास' तथा 'भारत मित्र' नामक पत्रिकाओं का प्रकाशन किया। इन पत्रिकाओं के माध्यम से हिंदी भाषा एवं साहित्य के विकास, विस्तार में बहुत सहायता मिली। नारी उत्थान के कार्य के प्रति भी भारतेन्दु सक्रिय रहे। 'बालाबोधिनी' पत्रिका के माध्यम से उन्होंने इस कार्य को आगे बढ़ाया।

हिंदी भाषा एवं साहित्य के भंडार को उन्होंने 238 ग्रंथों की रचना करके समृद्ध किया। नाटक, पद्य, इतिहास, कथा, कहानी, निबंध, जीवन-चरित्र, आलोचना आदि साहित्यिक विधाओं में रचना की तथा हिंदी भाषा साहित्य को पारंपरिक वातावरण से बाहर निकाला। भाषा, शैली एवं विषयगत नवीनताओं का समावेश करके साहित्य को गति प्रदान की। भारतेन्दु का व्यक्तित्व भी प्रतिभाशाली एवं आकर्षक था। सन् 1870 ई. में वे आनरेरी मजिस्ट्रेट बनाए गए। छह वर्ष तक म्यूनिसिपल कमिश्नर रहे, पंजाब विश्वविद्यालय में संस्कृत भाषा के परीक्षक का काम किया तथा कई देशी राजाओं ने उन्हें सम्मानित किया। 18 सितंबर 1870 को 'सारसुधा निधि' में प्रस्ताव पास करके हिंदी जगत ने उन्हें 'भारतेन्दु' की पदवी से विभूषित किया था। सन् 1882 ई. में राजस्थान के मेवाड़ यात्रा से वापस आने पर वे अस्वस्थ हो गए और 6 जनवरी सन् 1885 ई. में 35 वर्ष की अल्पायु में उनका स्वर्गवास हो गया। भारतेन्दु का व्यक्तित्व कैसा था यह स्वयं उनकी इस रचना द्वारा स्पष्ट होता हैः

सेवक गुनीजन के, चाकर चतुर के हैं,
कविन के मीत, चित हित गुनगानी के

सीधेन सों सीधे, महाबाँके हम बाँकने सों,
हरीचन्द नगद दमाद, अभिमानी के,

चाहिवे की चाह, काहू की न परवाह,
नेही नेह के दिवाने सदा सूरत निवानी के,
सरबस रसिक के, सुदास दास प्रेमिन के,
सखा प्यारे कृष्ण के, गुलाम राधा रानी के।।

भारतेन्दु ने अपने जीवन का हर क्षण साहित्यसेवा, राष्ट्रसेवा में लगाया। उन्होंने विपुल साहित्य की रचना की। आइए उनकी काव्य रचनाओं के बारे में संक्षिप्त जानकारी प्राप्त करें।

2.3.2 काव्य रचनाएँ

भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने लगभग 21 काव्य ग्रंथों, 48 प्रबंध काव्य तथा सैकड़ों मुक्त काव्य रचनाएँ की। इसके अतिरिक्त नाटक, गद्य एवं विविध विधाओं में रचनाएँ की। नीचे उनकी काव्य रचनाएँ तथा विभिन्न विधाओं में की गई रचनाओं की तालिका तथा महत्वपूर्ण रचनाओं का संक्षिप्त परिचय दिया गया है।

1. भक्त सर्वस्व
2. प्रेम मालिका
3. फूलों का गुच्छा
4. जैन कुतूहल
5. प्रेमसरोवर
6. प्रेमाश्रु वर्षण
7. **प्रेम फुलवारी**: यह 93 पदों का ग्रंथ है, इसमें दैन्य भाव के विरह संबंधी, प्रीति, राधा स्तुति के पद हैं। यह पदों की विशुद्ध शैली में लिखित भारतेन्दु जी के, अत्यंत श्रेष्ठ एवं प्रौढ़ ग्रंथों में से है। इसके अनेक पद चंद्रावली नाटिका में है।
8. भक्तमाला उत्तरार्ध।
9. वैसाख महात्म्य
10. **प्रेम तरंग**: यह भारतेन्दु रचित महत्वपूर्ण ग्रंथ है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें पदों का नहीं बल्कि गानों का संकलन है। इसमें साधारण जनता में प्रचलित लोकगीतों को साहित्यक रूप दिया गया है। इसमें ब्रजभाषा, खड़ी बोली, उर्दू, बंगला, पंजाबी आदि कई भाषाओं की रचनाएँ हैं।
11. प्रेम प्रलाप
12. गीत गोविन्द
13. सतसई सिंगार
14. होली
15. मधु मुकुल
16. वर्षा विनोद
17. **प्रेम माधुरी**: यह भारतेन्दु के कवित्त सवैयों का एकमात्र संग्रह है। यह ग्रंथ भारतेन्दु को रीतिकालीन परंपरा से जोड़ता है। इस ग्रंथ में रीतिकालीन कवि घनानंद, ठाकुर बोधा, रसखान द्वारा वर्णित प्रेम विरह के समान ही विरह की अत्यन्त सुन्दर अभिव्यजंना हुई है।
18. विनय प्रेम पचासा
19. कृष्ण चरित
20. कार्तिक स्नान
21. श्राग संग्रह

भारतेन्दु ने 48 प्रबंध काव्यों की रचनाएँ की जिनमें रामभक्ति, भक्ति संबंधी तथा विविध विषयों से संबंधित रचनाएँ हैं

राजभक्ति संबंधी- इसके अन्तर्गत श्री राजकुमार शुभागमन वर्णन, भारत भिक्षा, भारत वीरत्व, विजय वल्लरी, विजयिनी विजय पताका या वैजयंती, जातीय संगीत एवं रिपनाष्टक मुख्य हैं।

भक्ति काव्य- कृष्ण काव्य, प्रबोधिनी आदि मुख्य है।

विविध- चतुरंग बसंत होली, उर्दू का स्यापा, बकरी विलाप, बंदर सभा, नए जमाने की मुकरी तथा हिंदी की उन्नति पर व्याख्यान मुख्य हैं।

भारतेन्दु ने 24 नाटकों की रचना की जिनमें मुख्य हैं-

1. विद्या सुन्दर
2. पाखंडविडम्बन
3. वैदिकी हिंसा हिंसा न भवित
4. सत्यहरिश्चंद्र
5. प्रेमजोगिनी
6. विषस्य विषमौषधम
7. चंद्रावली
8. भारत दुर्दशा
9. भारत जननी
10. नीलदेवी
11. दुर्लभबन्धु (अनुवाद)
12. अंधेर नगरी।

भारतेन्दु रचित काव्य कृतियों के परिचय मात्र से आपने यह अनुमान लगा लिया होगा कि उन्होंने जीवन के विविध पक्षों को काव्य में स्थान दिया। एक ओर परंपरा से चली आ रही परिपाटी का पालन किया, वहीं दूसरी ओर तत्कालीन आवश्यकताओं के अनुरूप विविध विषयों का चयन किया। हम भारतेन्दु के काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियों को जानें उससे पहले कुछ बोध प्रश्नों का उत्तर दें-

बोध प्रश्न-1

1. रिक्त स्थानों में उचित शब्द रखकर वाक्य पूर्ति कीजिएः

   क) भारतेन्दु हरिश्चंद्र के पिता का नाम .... था। वे स्वयं अच्छे .... थे।

   ख) भारतेन्दु हरिश्चंद्र के पिता ने उषा हरण प्रकरण लिखवाते समय भारतेन्दु द्वारा .... कहने पर बड़ा .... बनने का आशीर्वाद दिया।

   ग) भारतेन्दु हिंदी के अलावा .... आदि भाषाओं की अच्छी जानकारी रखते थे।

   घ) पुरी यात्रा के दौरान बंगला भाषा का नाटक .... पढ़ने पर भारतेन्दु में सामाजिक चेतना जगी।

   ङ) हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार के लिए भारतेन्दु ने .... की स्थापना की।

च) भारतेन्दु ने सर्वप्रथम .... नामक पत्र निकाला।

छ) हिंदी जगत ने सन् 1870 ई. में हरिश्चंद्र को .... की पदवी से विभूषित किया।

ज) सन् 1885 ई. में .... की अल्पायु में भारतेन्दु हरिश्चंद्र का स्वर्गवास हो गया।

2. भारतेन्दु में साहित्यिक रुचि पैदा होने का प्रमुख कारण क्या था?

....

....

....

3. नारी उत्थान के लिए भारतेन्दु द्वारा किया गया प्रथम प्रयास क्या था?

....

....

....

4. पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन के पीछे भारतेन्दु का मुख्य उद्देश्य क्या था?

....

....

....

अभ्यास

1. तत्कालीन भारत की किन-किन परिस्थितियों ने कवियों में चेतना फैलाई? दस पंक्तियों में उत्तर दें।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

2.4 भारतेन्दु का काव्यः प्रमुख प्रवृत्तियाँ

भारतेन्दु हरिश्चंद्र हिंदी भाषा साहित्य के उन महाकवियों में हैं जिन्होंने न केवल अपने पूर्व परंपरा पर चलते हुए काव्य रचनाएँ की, वरन् स्वयं अपनी एक परंपरा भी प्रारंभ की। भारतेन्दु हिंदी के पूर्ववर्ती साहित्य से पूरे प्रभावित हैं, उनके काव्य में परंपरागत सभी धाराओं का प्रतिनिधित्व मिल जाता है। 'विजयिनी विजय वैजयंती' तथा 'विजय वल्लरी' में वीरगाथा काव्य की झलक मिलती है, भक्ति काव्य में भक्तिकाल की कृष्णाश्रयी एवं रामाश्रयी दोनों सगुण धाराओं तथा ज्ञानाश्रयी धारा का प्रतिबिंब मिलता है। भारतेन्दु के भक्ति काव्य में कबीर, सूरदास, तुलसी की झलक है। भारतेन्दु वल्लभ सम्प्रदाय के वैष्णव थे। इसलिए उन्होंने कृष्ण काव्य की रचना प्रचुर मात्रा में की। भारतेन्दु का बचपन रीतिकाल में बीता था इसलिए इसके प्रभाव से बच निकलना असंभव था। उन्होंने घनानंद, रसखान, ठाकुर, बोधा, आलम आदि स्वछंद कवियों का अनुकरण किया। उनके अनेक कवित्त सवैये रीति परंपरा पर हैं और उनमें नायक नायिकाओं के अच्छे उदाहरण मिल सकते हैं। परकीया के विरह का जो स्वाभाविक एवं सरस चित्रण भारतेन्दु ने किया है उसकी तुलना घनानंद की रचनाओं से की जा सकती है। विरह का अस्वाभाविक अत्युक्तिपूर्ण ऊहात्मक वर्णन उन्होंने नहीं किया है। भक्त कवियों में जिन्होंने पद रचना की उनमें भारतेन्दु विद्यापति एवं मीरा के समान और सूर को छोड़कर अष्टछाप के सभी कवियों से आगे हैं। कवित्त-सवैया रचना करने वाले शृंगारी कवियों में वे देव, पद्माकर, ठाकुर घनानंद एवं रसखान की कोटि के हैं।

भारतेन्दु आधुनिक काव्य के प्रवर्तक हैं। हिंदी काव्य रीतिकाल में जन जीवन से दूर चला गया था। भारतेन्दु ने साहित्य को जीवन से जोड़कर इस विच्छेद की खाई को पाट दिया। राजभक्ति, देश भक्ति, समाज सुधार, देश प्रेम, हिंदी प्रेम आदि विषयों पर कविताएँ लिख कर काव्य की संकीर्ण सीमा का विषय विस्तार किया।

काव्य में हास्य रस प्रायः अछूता रहा है। भारतेन्दु पहले कवि थे जिन्होंने हास्य रस से संबंधित रचनाएँ की, किन्तु उनका हास्य निरर्थक न होकर सोद्देश्य है। हास्य रचना कर वे सामाजिक कुरीतियों पर कुठाराघात करते हैं। इकाई में आगे हम उदाहरणों द्वारा इसे जानेंगे।

लोकगीतों को साहित्योपयोगी बनाकर उन्होंने अपनी स्वच्छंद प्रकृति का परिचय दिया। भारतेन्दु पहले कवि हैं जिन्होंने प्रचुर मात्रा में रस से युक्त गानों का प्रणयन किया। काव्य रूपों के क्षेत्र में भी भारतेन्दु ने नवीनता का समावेश किया। भारतेन्दु हिंदी के पहले कवि हैं जिन्होंने पहले-पहल अंग्रेजी के ढंग पर निबंध काव्यों, कलाकाव्यों एवं संबद्ध मुक्तकों की रचनाएँ की।

भारतेन्दु से पूर्व हिंदी के कवियों में जहाँ किसी एक शैली में प्रवीणता दिखाई वही भारतेन्दु ने प्रायः प्रत्येक पूर्ववर्ती काव्य शैली में सफलता प्राप्त की है, साथ ही नवीन काव्य शैलियों का प्रणयन भी किया। भारतेन्दु ब्रजभाषा के कवि हैं, किन्तु आधुनिक खड़ी बोली में सर्वप्रथम परीक्षात्मक प्रयोग कार्य उन्होंने ही किया। भारतेन्दु से पूर्व अमीर खुसरो एवं कबीर के काव्य में खड़ी बोली की क्षीण परंपरा मिलती है, किंतु जागरुक रूप से प्रयास भारतेन्दु द्वारा ही प्रारंभ हुआ। जब गद्य रचना के लिए खड़ी बोली समर्थ भाषा के रूप में सामने आई तब प्रश्न यह उठा कि गद्य एवं पद्य की दो भिन्न भाषाएँ कहाँ तक समीचीन हैं। इसी अस्वाभाविकता को दूर करने के लिए भारतेन्दु ने खड़ी बोली में काव्य लेखन का प्रयोग किया।

आइए भारतेन्दु काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियों को जानें। संपूर्ण भारतेन्दु काव्य को हम मुख्य रूप से दो भागों में बाँट कर उनके काव्य की प्रवृत्तियों को पहचान सकते हैं। पहले के अन्तर्गत प्राचीन प्रवृत्तियों को रखा जा सकता है तथा दूसरे को नवीन प्रवृत्तियों के अन्तर्गत।

2.4.1 प्राचीन प्रवृत्तियाँ

भारतेन्दु परंपरा से अधिक प्रभावित थे। वल्लभ संप्रदाय में दीक्षित होने के कारण उन्होंने भक्ति से संबंधित रचनाएँ की। सूर एवं तुलसी की भाँति उन्होंने विनय के पदों की रचना की। वे हरि-चरित की बड़ाई करने का कारण बताते हैं-

हरि लीला सब विधि सुखदाई।
कहत सुनत देखत जिय आनत देति भगति अधिकाई।
प्रेम बढ़त, अघ नसत, पुन्य-रति जिय मैं उपजत आई।।
याही सों ''हरचिंद'' करत सुनि नित हरि-चरित बड़ाई।
श्री राम लीला

आत्म निवेदन के पद में भारतेन्दु का हृदय अन्य भक्त कवियों की भांति उदार हो जाता है।

नहि ईश्वरता अँटकी वेद में।
तुम तो अगम अनादि अगोचर सो कैसे मतभेद में।।

कृष्णपदावली : जिस प्रकार सूरदास ने प्रायः चार सौ पदों में कृष्ण चरित का वर्णन किया उसी प्रकार भारतेन्दु ने पाँच सौ से अधिक पदों में कृष्ण चरित का वर्णन किया है। जन्म, बाल लीला, पूर्वराग, विविध लीलाएँ, राधा कृष्ण विवाह, रूप, युगल विहार, खंडिता मान, मंगलमय ब्रज, प्रवास विप्रलंभ, भ्रमर गीत, कृष्ण का अभिषेक, रथ यात्रा, उपसंहार आदि विषयों पर कृष्ण चरित लिखा है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं। वे कृष्ण के जन्म का वर्णन इस प्रकार करते हैं-

प्रगटे रसिक जनन के सरबस।
जसुमति उदर अलौकिक वारिधि श्याम कलानिधि विधि रस।
पसरति चंद्र कला सो पूरब उज्ज्वल विमल विसद जस।
''हरीचंद'' ब्रजवधु चकोरी सहजहि कीन्हीं निज बस।।

जिस प्रकार सूरदास ने राम-कृष्ण को आँगन में साथ-साथ खेलते हुए दिखाया है यथाः

भावत हरि को बाल बिनोद
श्याम -राम मुख निरखि निरखि, सुख मुदित रोहिनी जननि जसोद।
सूरसागर-115/737

उसी प्रकार भारतेन्दु ने भी चित्रण किया है-
सखी री देखहु बाल विनोद,
खेलत राम कृष्ण दोऊ आँगन किलकत हँसत प्रमोद।
प्रेममालिका-6

सूरदास ने नयनों पर प्रायः दो सौ पद लिखे, भारतेन्दु ने भी इस पर करीब एक दर्जन पद लिखे। एक सुन्दर उदाहरण देखिए। कन्हैया की एक मुद्रा ने बेचारी राधा को बुरी तरह आकृष्ट किया है और उसके नेत्र उस छवि को भूलने में अपने को असमर्थ पा रहे हैं-

नैना वह छवि नाहिन भूले
दया भरी चहुँ दिसि को चितवनि नैन कमल दल फूले
वह आवनि वह हँसनि छबीली, वह मुसकनि चित चोरै
'' '' ''
'' '' ''

परवस भए फिरत है नैना, एक छन टरत न टारे
''हरीचंद'' ऐसी छवि निरखत, तन मन धन सब हारे।
प्रेम मालिका - 20

चीरहरण लीला पर सूर ने 34 पद लिखे। भारतेन्दु ने इससे संबंधित चार पदों की रचना की। एक सुंदर पद देखिए। स्नान कर लेने के उपरान्त गोपियाँ अपने वस्त्रालंकार न पा व्याकुल हो गई।

खोजत वसन ब्रज की बाल
निकसिकै सब लेहु, छिपिकै कह्यो स्याम तमाल
सुंनत चंचल चित चहुँ दिसि चकित निरखत नारि
मधुर बैननि हिओ फरकत जानिकै बनबारि
कदम पर तै दरस दीनों, गिरिधिरन घनश्याम
अंग अंग अनूप शोभा, मथन कोटिक काम
सिर मुकुट की लटक चटकत, वसन सोभित प्रीत
चरन तक वनमाल सोभित, मनहु लपटी प्रीत
फैलि रहि सोभा चहूँ दिसि मन लुभावत पास
नैन ते 'हरीचंद' के छवि टरत नहीं इक साँस
स्फुट - 13

इसी प्रकार राधा कृष्ण विवाह से लेकर प्रवास, विप्रलंभ एवं भ्रमर गीत के साथ रथ यात्रा एवं उपसंहार तक कृष्ण चरित से संबंधित पदों की रचना की।

कथाकाव्यः भारतेन्दु ने प्रबंध काव्य या कथाकाव्य लिखने में रुचि दिखाई लेकिन वस्तुतः उनकी ऐसी रचनाएँ मुक्तक के रूप में ही हैं। 'देवी छद्म लीला', 'तन्मय लीला', 'दान लीला', 'रानी छद्म लीला', वेणुजोति आदि उनके कथा काव्य हैं। सभी रचनाएँ छोटी-छोटी और कृष्ण लीला से संबंधित हैं।

रीतिकाव्यः भारतेन्दु पूर्व का युग रीतिकाव्य का है। भारतेन्दु के समय में भी रीतिबद्ध श्रृंगार काव्य की रचनाएँ प्रचुर मात्रा में हो रही थीं। स्वयं भारतेन्दु ने कोई रीतिबद्ध ग्रन्थ की रचना तो नहीं की, किन्तु उनके आधे से अधिक कवित्त, सवैयों, रीति काव्य रचना के सफल उदाहरण हैं। 'सुंदरी तिलक' सवैयों के संग्रह में भारतेन्दु ने नायिका-भेद के क्रम का अनुसरण किया है। भारतेन्दु ने साहित्यशास्त्र का गहन अध्ययन किया था। वे विभिन्न विषयों पर तर्कपूर्ण स्वतन्त्र सम्मति रखते थे उनके आधे से अधिक कवित्त सवैये नायिका भेद संबंधी हैं। नायिका भेद ग्रंथों में पहले नायिका का ही उदाहरण दिया जाता है। नायिका रूप, गुण एवं यौवन से युक्त होनी चाहिए। भारतेन्दु रचित यह सवैया देखिए-

गोरों सो रंग, उमंग भर्‌यो नित, अंग अनंग की मंत्र जगाए,
काजर रेख खुभी दृग मैं, दोउ भौंहन काम कमान चढ़ाए
आवनि बोलनि डोलनि ताकी, चढ़ी चित में अति चाँद बढ़ाए
सुंदर रूप सो नैनन में बस्यो, भूलत नाहिनै क्योंहू भुलाए।
कर्पूर मंजरी

विवरणात्मक काव्यः जिस काव्य में कार्य विशेष या किसी दृश्य का विवरण प्रस्तुत किया जाए उसे विवरणात्मक काव्य कहते हैं। भारतेन्दु ने दो विवरणात्मक काव्य की रचना की 1. हिंडोला तथा 2. होली।

हिंडोला- यह विवरणात्मक काव्य है। इसका रूप पद का सा है, पहली पंक्ति छोटी है, फिर 190 पंक्तियाँ नाप-जोख की हैं। चार-चार चरणों की एक कड़ी होती है और इसके पश्चात पहले छोटे चरण की आवृति है। प्रत्येक चरण में 14,12 के विराम से 26 मात्रायें हैं। एक उदाहरण देखिए- सुंदर उपवन में चढ़कर पेड़ की मोटी डाल पर झूला डाल दिया गया है। झूले का वर्णन अत्यंत सुन्दर है-

तहँ झमकि झूलत होड़ बदि बदि उमंगि करहिं कलोल
खेले, हँसै गेदंक चलावै, गाई मीठे बोल
झोटा बढ़यो रमकत दोऊ दिसि डार परसत जाई
फहरत अचल खुलत बैनी अंग परत दिखाई
टूटि मोती माला मुक्ता गिरत भूपै आई
मनु मुक्त जन अधिकार गत लखि देत धरनि गिराई
कसी कंचुकि होत ढीली खुलि तनो के बंद
सिथिल कवरी उड़त सारी, गिरत कर के छंद
प्रगट बदन दुरात, झूलत मैं तहाँ सानंद
मनु प्रेम सागर मनत इत उत तरह कढि बहुचंद

'होली लीला' भी हिंडोला के ढंग की रचना है। इसका काव्य सौष्ठव एवं रचना प्रणाली हिंडोला के समान ही है।

काव्य कौतुकः भारतेन्दु में कौतुक की प्रवृत्ति थी। उनके काव्य में भी यह प्रवृत्ति देखी जा सकती है। काव्य प्रवृत्ति से संबंधित भारतेन्दु की निम्नलिखित रचनाएँ हैं।

1. अलबरत अन्तर्लिपिका
2. श्रीजीवन जी महाराज
3. चतुरंग
4. वसन्त होली-काव्य
5. मूक प्रश्न
6. फूल बुझौवन काव्य
7. रिपनाष्टक का आठवाँ छन्द
8. नए जमाने की मुकरी
9. समधिन मधुमास
10. मनोमुकुल माला

इस प्रकार भारतेन्दु काव्य का अधिकांश भाग प्रवृत्तियों से संबंधित है। परंपरा से चली आ रही प्रवृत्ति को उन्होंने अपनाया किन्तु तत्कालीन परिस्थितियों ने उनमें नवीन प्रवृत्ति के लिए प्रेरणा प्रदान की। आइए भारतेन्दु काव्य की नवीन प्रवृत्ति को जानें।

2.4.2 नवीन प्रवृत्तियाँ

अब तक के अध्ययन से आपको स्पष्ट हो गया होगा कि आधुनिक काव्य धारा के उद्देश्य के पीछे तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियाँ उत्तरदायी थीं। भारतेन्दु काव्य में इस आधुनिक नवीन काव्य धारा की प्रवृत्तियों को निम्नलिखित विषयों में देखा जा सकता है।

1. राजभक्ति
2. देशभक्ति
3. समाज सुधार
4. अर्थनीति
5. भाषा-प्रेम
6. परिहास काव्य
7. लोकगीत
8. निबंध काव्य
9. प्रकृति वर्णन

आइए एक-एक उदाहरण सहित इन्हें जानें:

1. **राजभक्तिः** भारतेन्दु का परिवार अंग्रेजी हुकूमत का समर्थक था। प्रत्येक रईस की भाँति भारतेन्दु में भी राजभक्ति निहित थी। राजभक्ति प्रदर्शित करने का उन्हें जहाँ भी अवसर मिला वहाँ उन्होंने यह कार्य किया है। राजपरिवार के सुख, दुःख, हर्ष, विषाद सभी अवसरों पर काव्य रचनाएँ कीं। राजभक्ति से संबंधित रचनाएँ इस प्रकार हैं-

- अलवरत अन्तर्लिपिका, 1918
- श्री राजकुमार सुस्वागत पत्र, 1926
- काशी में ग्रहण के हित महाराजकुमार के आने के हेतु कवित्त, 1926
- सुमनोन्जलि, 1927
- कविता, 1928
- भारत भिक्षा, 1932
- मानसोपायन, 1933
- मनोमुकूल, 1934
- भारत वीरत्व, 1935
- विजय पल्लरी, 1938
- विजयिनी विजय पताका या बैजयंती, 1913
- जातीय संगीत,1941
- रिपनाष्टक, 1941
- स्फुट

स्फुट रचना में से एक प्रसिद्ध रचना उदाहरणस्वरूप प्रस्तुत है। मुद्राराक्षस नाटक के अन्त में कवि ने रानी विक्टोरिया की प्रशंसा में इस सवैये की रचना की है।

पूरी अमी की कटोरिया सी चिरजीओं सदा विक्टोरिया रानी
सूरज चंद प्रकाश करै जब लौं रहे सातहू सिंधु मैं पानी
राज करौ सुख सों तब लौं निज पुत्र और पौत्र समेत सयानी
पालौ प्रजाजन को सुख सो जग कीरति जान करै गुन जानी।

भारतेन्दु का परिवार अंग्रेजी शासकों का समर्थक था। भारतेन्दु केवल इसी कारण से ही राजभक्त नहीं थे कि उनका वंश भी राजभक्त था, बल्कि इसके पीछे कारण था। 'भारत वीरत्व' रचना में हम इस कारण को देख सकते हैं-

जासु राज सुख बस्यौ सदा, भारत भय त्यागी
जासु बुद्धि नित प्रजा पुंज, रंजन महँ पागी

उन्हें यह आशा थी कि विक्टोरिया के शासन से देश में सुख शांति रहेगी।

2. **देश भक्तिः** लगभग सन् 1931 ई. तक भारतेन्दु राजभक्त बने रहे। उस समय तक वे अंग्रेजी सरकार को न्याय, धर्म तथा दया का अवतार समझते रहे। किन्तु उन्हें सहज ही ज्ञात हो गया कि कोरी राजभक्ति से काम नहीं चलेगा। विदेशी शासन की बुराइयों से परिचित होने पर उनमें राष्ट्रीयता के अंकुर प्रस्फुटित होने लगे। कविताओं में अंग्रेजी शासन की आलोचना, अतीत पर गर्व, वर्तमान पर क्षोभ, भगवतप्रार्थना तथा मंगलाशा के अन्तर्गत उन्होंने देशभक्ति की भावना व्यक्त की।

   भारत के अतीत की याद से संबंधित रचनाएँ हैं-'विजयिनी विजय वैजयंती', 'प्रबोधिनी', 'भारत भिक्षा', 'भारत वीरत्व', 'राजकुमार शुभागमन वर्णन'। एक उदाहरण देखिए-

कहँ गए विक्रम भोज राम बलि कर्ण युधिष्ठिर
चंद्रगुप्त चाणक्य कहाँ नासे करिकै थिर
कहँ क्षत्री सब मरे जरे सब गए कितै गिर
कहाँ राज को तौन साज, जेहि जानत है चिर
कहँ दुर्ग सैन-धन, बल गयो, धूरहि धूर दिखात जग
जागो अब तौ खल-बल दलन, रक्षहु अपुनो आर्य मग
प्रबोधिनी छंद - 19

अतीत की याद तो आती है साथ ही वर्तमान दशा पर जब उनका ध्यान जाता है तब कलेजा दो टूक हो जाता है। 'भारत दुर्दशा' तथा 'नीलदेवी' में इस निराशा को देखा जा सकता है।

सब भाँति दैव प्रतिकूल होई एहि नासा
अब तजहुँ बीरवर भारत को सब आसा
-नीलदेवी

रोअहु सब मिलकै आवहु भारत भाई
हा हा। भारत दुर्दशा न देखी जाई
-भारत दुर्दशा

'वर्षा विनोद', 'मधुमुकुल', 'अंधेर नगरी', रचनाओं में वर्तमान दशा पर क्षोभ व्यक्त किया गया है।

भगवतप्रार्थना: देश की दुर्दशा पर क्षोभ व्यक्त करने के बाद वे ईश्वर से प्रार्थना करते हैं, और देश की दशा सुधारने की मांग करते हैं।

हाय सुनत नहि, निठुर भए क्यों, परम दयाल कहाई
सब विधि बुड़त लखि देसहि लेहु न अवहूँ बचाई
-नीलदेवी

मंगलाशा: कवि अतीत पर गर्व, वर्तमान पर क्षोभ प्रकट करने के बाद भविष्य के लिए मंगलाशा भी करता है-

सब देसन की कला सिमिटिकै इतहै आवै
कर राजा नहि लेह प्रजन पै हेत बढ़ावै
गाय दूध बहु देहि तिनहि कोऊ न नसावै
द्विज गन आस्तिक होइ मेघ सुभ जल बरसावै
तजि क्षुद्र वासना पर सबै निज उदार उन्नति करहि
कहि कृष्ण राधिक नाथ जय, हमहुँ जिय आनंद भरहि
- प्रबोधिनी छंद

समाज सुधार: भारतेन्दु के समय सामाजिक क्षेत्र में परिवर्तन का दौर शुरू हो गया था। समाज में दो तरह के लोगों का दल बन गया था। एक दल रूढ़िवादी था, वे परंपरा के अनुकूल रहना चाहते थे। समाज में किसी प्रकार के परिवर्तन के पक्ष में वे नहीं थे। दूसरा दल समाज में आमूल परिवर्तन चाहता था। किन्तु भारतेन्दु इस प्रकार के खेमे से बाहर थे। वे न तो आमूल परिवर्तन के पक्ष में थे और न ही रूढ़ि को पूर्ण समर्थन करते थे। उनका रास्ता बीच का था। वे समाज की जरूरतों के अनुसार आवश्यक सुधार चाहते थे। उनकी कविताओं में जगह-जगह सुधार की बातें कही गई है। समाज में किस प्रकार का दोष घर कर गया है उसकी चर्चा 'भारत दुर्दशा' में की गई है।

रुचि बहुविधि के वाक्य पुरानन मांहि घुसाए,
शैव शाक्त वैष्णव अनेक मत प्रगटि चलाए
जति अनेकन करी, नीच अरु ऊँच बनायो
खान पान संबंध सबन सो बरजि छुड़ाओ
x x x x x x
रोकि विलायत गमन कूप मंडूक बनायो
औरन को संसर्ग छुड़ाइ प्रचार घटायो।

वे जाति-पाति की भावना को समाज के लिए कलंक मानते थे। खान-पान तथा विभिन्न मत मतान्तरों के कारण समाज छोट-छोटे टुकड़े में बँट गया था। वे चाहते थे कि समाज से ऐसी भिन्नतायें दूर हों। समुद्र पार करना पाप समझा जाता था। भारतेन्दु इसे कूप मंडूकता कहते थे। जिस प्रकार कुएँ का मेंढक कुएँ तक की जगह को सारा संसार मानता है उसी प्रकार भारतीय संसार से दूर रह कर भारत तक ही सीमित है। वे इन सब बुराइयों को दूर करना चाहते थे।

'वैदिकी हिंसा-हिंसा न भवति' में मदिरा पान एवं मांस भक्षण आदि पर करारा व्यंग्य करते हुए वे कहते हैं-

यहि असार संसार में चार वस्तु है सार
जुआ मदिरा मांस अरु नारी संग विहार

लोक गीतों में भारतेन्दु ने समाज सुधार की बातें कही हैं।

अर्थनीति अंग्रेजी शासन की शोषण नीति के कारण भारत की आर्थिक स्थिति खराब होती जा रही थी। भारत का धन विदेश चला जा रहा था। भारतेन्दु लिखते हैं-

अंग्रेज राज सुख साज सजे सब भारी।
पै धन विदेश चलि जात इहै अति ख्वारी।
-भारत दुर्दशा

विदेशी वस्तुओं की लोकप्रियता के कारण भारतीय उद्योग धंधों पर बुरा असर पड़ रहा था। विदेशी वस्तुओं के इस्तेमाल से भारत का धन विदेश चला जा रहा था। भारतेन्दु भारतीयों की इस प्रवृत्ति से दुःखी थे-

मारकीन मलमल बिना चलत कहू नहि काम
परदेशी जुलाहन के मानहुँ भए गुलाम
वस्त्र काँच कागज कलम चित्र खिलौने आदि
आवत सब परदेश सो नितहि जहाजन लादि

भाषा प्रेमः भारतेन्दु युग की काव्य प्रवृत्तियों में एक नवीन महत्वपूर्ण प्रवृत्ति का उदय हुआ था, वह था भाषा प्रेम। भारतेन्दु ने भाषा को इस रूप में व्यक्त किया-

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।
बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को शूल।।

वे सभी प्रकार की उन्नति के लिए अपनी भाषाओं की उन्नति को मूल रूप में मानते हैं। वे सभी भाषाओं के सम्मान की बात करते थे हिंदी भाषा के प्रचार के लिए वे जनता में जागृति लाना चाहते थे। सन् 1877 ई. में 'हिंदीवर्द्धिनी सभा' में हिंदी की उन्नति पर व्याख्यान देते समय पढ़ा-

प्रचलित करहु जहान में, निज भाषा करि जत्न
राज काज दरबार में, फैलावहु यह रत्न
भाषा सोधहु आपनी, होइ सबै एकत्र
पढ़हु पढ़ावहु लिखहु मिलि, छपवावहु कहुँ पत्र।

परिहास काव्यः भारतेन्दु से पूर्व परिहास का भोंडा रूप मिलता है। कविगण, एक दोहे में हास्य रस का लक्षण लिखकर कवित्त या सवैये में उदाहरण दे देते थे। भारतेन्दु ने सर्वप्रथम सोद्देश्य हास्य रचनाएँ प्रारंभ की। उनका परिहास काव्य राष्ट्रीय दृष्टिकोण से ही लिखा गया है। भारतेन्दु का परिहास काव्य निम्नलिखित रचनाओं में है-

1 उर्दू का स्यापा	2 बंदर सभा एवं होली बंदर सभा
3 समधिन मधुमास	4 रामलीला के अन्तर्गत गारी
5 नए जमाने की मुकरी	6 परिहासिनी के अन्तर्गत मुशायरा।

'नए जमाने की मुकरी' से एक उदाहरण द्रष्टव्य है-

रूप दिखावत सरबस लूटै
फंदे में जो पड़ै न छूटे
कपट कटारी हिय में हूलिस
क्यों सखि साजन, नहिं सखि पुलिस

लोकगीतः भारतेन्दु युग पूर्व का हिंदी काव्य जनसाधारण से दूर था। भारतेन्दु युग में काव्य को जनसाधारण से जोड़ने का कार्य किया गया। इस कार्य का शुभारंभ भी भारतेन्दु ने किया। लोकगीत के सौन्दर्य ने भारतेन्दु को लोकगीतों की रचना के लिए प्रेरित किया। कजरी, होली, बारहमासा, लावनी, गाली, सेहरा, चैता के अलावा ठुमरी, पूरबी, खेमटा, झिझोटी, दादरा आदि लोकगीतों में भारतेन्दु ने काव्य रचनाएँ कीं। वर्षा विनोद, स्फुट कविताएँ, होली मधुमुकूल, फूलों का गुच्छा, प्रेम तरंग, कर्पूर मंजरी तथा प्रेम प्रलाप रचनाएँ लोक गीतों की हैं। प्रेम तरंग से लोक गीत का एक उदाहरण द्रष्टव्य है-

श्याम सलोने गात मलिनियाँ
बड़े-बड़े नैन, भौहें दोऊ बाँकी, जोबन सो इठलात,
सुनत नहीं कछु बात कोऊ के, राधे के ढ़िग जात
'हरिचंद' कहु जान परे नहि, घूँघट में मुस्कात।
-प्रेम तरंग

निबंध काव्यः किशोरी लाल गुप्त ने अपनी पुस्तक भारतेन्दु एवं अन्य सहयोगी कवि में कुछ रचनाओं को निबंध काव्य की संज्ञा दी। किसी विषय पर सम्यक रूप से तथा सुसंबद्ध रूप से लगातार कई छंदों में रचना को निबंध काव्य कहते हैं। भारतेन्दु ने ही हिंदी में निबंध काव्य की प्रणाली चलाई। भारतेन्दु से पूर्व मुक्तक रचना का रिवाज था। किसी विषय पर सुसंबद्ध रूप से छंद रचना नहीं की जाती थी। भारतेन्दु ने राजभक्ति संबंधी, देशभक्ति संबंधी तथा प्रकृति संबंधी निबंध काव्य लिखे। इसके अलावा विविध विषयों पर भी निबंध काव्यों की रचना की। भारतेन्दु के निबंध काव्य निम्नलिखित हैं-

1. राजभक्ति संबंधी : श्रीरामकुमार सुस्वागत पत्र, प्रिंस ऑफ वेल्स के पीड़ित होने पर कविता, मुँह दिखावनी, भारत भिक्षा, मनोमुकुल माला, भारत वीरत्व, विजयिनी विजय-वैजयंती।

2. देशभक्ति संबंधी : प्रबोधिनी, हिंदी की उन्नति पर व्याख्यान

3. प्रकृति संबंधी : प्रातः समीर

4. विविध : बकरी विलाप

हिंदी की उन्नति पर व्याख्यान में भारतेन्दु ने हिंदी भाषा के हित के लिए सभा होने पर प्रसन्नता प्रकट की है-

अहो अहो मम प्रान प्रिय आर्य भ्रात जन आज।
धन्य दिवस जो यह जुड़ो हिंदी हेतु समाज।।

इसके बाद भाषा से संबंधित 98 दोहे हैं। अंत में यह निवेदन किया गया है कि विलंब न करके हिंदी भाषा की उन्नति के लिए कार्य करें-

करहु विलंब न भ्रात अब, उठहुँ मिटावहु सूल।
निज भाषा उन्नति करहु, प्रथम जो सब कर मूल।

ऊपर की चर्चा से आपको यह स्पष्ट हो गया होगा कि एक ओर भारतेन्दु ने परंपरा से चली आ रही प्रवृत्तियों का अनुसरण किया, वहीं तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक आदि आवश्यकताओं के अनुरूप नवीन प्रवृत्तियों को जन्म भी दिया। चूँकि भारतेन्दु युग से पूर्व का काव्य क्षीण भक्ति काव्य एवं रीति काव्य है अतः उस परंपरागत काव्य से प्रभावित होना स्वाभाविक था, किन्तु तत्कालीन जरूरतों के अनुसार जिन नई प्रवृतियों का प्रारंभ भारतेन्दु ने किया वह उनका हिंदी भाषा साहित्य के इतिहास में युगान्तकारी योगदान है।

बोध प्रश्न-2

1. भारतेन्दु काव्य की प्राचीन प्रवृत्तियाँ कौन-कौन सी हैं?

....

....

....

2. भारतेन्दु काव्य में नवीन प्रवृत्ति के उद्‌भव के पीछे क्या कारण थे?

....

....

....

3. कृष्णपदावली रचना करते हुए भारतेन्दु ने किस भक्त कवि का अनुसरण किया?

....

....

....

4. विवरणात्मक काव्य का तात्पर्य स्पष्ट कीजिए।

....

....

....

5. भारतेन्दु ने राजभक्ति संबंधी रचनाएं क्यों की?

....

....

....

6. भारतेन्दु से पूर्व परिहास्य काव्य का स्वरूप क्या था?

....

....

....

7. लोकगीतों की रचना के पीछे भारतेन्दु का क्या उद्‌देश्य था?

....

....

....

8. निबंध काव्य का तात्पर्य क्या है?

....

....

....

9. नीचे भारतेन्दु काव्य से प्राचीन एवं नवीन प्रवृत्तियों से संबंधित विषय एवं रचनाएँ दी जा रही हैं, आप उनका सही मिलान करें।

	विषय	रचनाएँ
1.	कथाकाव्य	प्रेम मालिका
2.	कृष्णपदावली	देवीछद्‌मलीला
3.	नायिक भेद	हिंडोला
4.	विवरणात्मक काव्य	सुंदरी तिलक
5.	श्रीराजकुमार सुस्वागत पत्र	मनोमुकुल माला
6.	काव्य कौतुक	राजभक्ति

2.5 संरचना शिल्प

अब तक हमने भारतेन्दु काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियों के बारे में जानकारी प्राप्त की है। अब हम भारतेन्दु काव्य के संरचनागत विशेषताओं पर विचार करेंगे। इसके अन्तर्गत भाषा, काव्य रूप, छंद, रस, अलंकार पर चर्चा की जाएगी। आइए सर्वप्रथम भाषा पर विचार करें।

2.5.1 भाषा

भारतेन्दु ने काव्य रचना के लिए सरल, सरस, प्रचलित परिष्कृत ब्रजभाषा का प्रयोग किया। परंपरा से चली आ रही कृत्रिम भाषा का प्रयोग उन्होंने नहीं किया। उनकी काव्य भाषा प्राकृत है। भारतेन्दु ने काव्य रचना के लिए तद्‌भव शब्दों का प्रचुर प्रयोग किया है। तत्सम शब्दों को वे अपनी काव्य रचना से दूर ही रखते हैं। अप्रचलित शब्दों जैसे- बयन, सायर चकवै, भुआल, लोचन आदि को उन्होंने छोड़ दिया है। उन्होंने काव्य की ब्रजभाषा का परिस्कार किया और उसे एक चलता एवं सर्व साधारण, बोधगम्य, निखरा रूप प्रदान किया। एक उदाहरण से इसे समझें-

मारग प्रेम को समुझै, हरीचंद यथारथ होता यथा है।
लाभ कछू न पुकारन में, बदनाम ही होन के सारी कथा है।।
जानत है जिप मेरो भली विधि, और उपाय सबै विरथा है।
बाबरे है बृज के सगरे, मोहि नाहक पूछत कौन विथा है।।

इस सवैये में कवि ने मार्ग, यथार्थ, व्यथा, वृथा तत्सम शब्दों के स्थान पर मारग, यथारथ, विथा और विरथा तद्‌भव शब्दों का प्रयोग किया। इस प्रकार उनकी रचनाओं में सैकड़ों शब्द ढूँढे जा सकते हैं।

उर्दू के शब्दों का प्रयोगः भारतेन्दु कई भाषाओं के जानकार थे। उर्दू का उन्हें अच्छा ज्ञान था किन्तु उन्होंने उर्दू के प्रचलित एवं सर्वसाधारण बोधगम्य शब्दों का प्रयोग किया। एक उदाहरण द्रष्टव्य है-

खाना-पीना नाच-तमाशा, लाख ऐश-आराम सभी
जैसे बिंजन नमक बिना, त्यों राम बिना वे काम सभी।
-स्फुट पद

ऊपर के उदाहरण में खाना, तमाशा, ऐश-आराम, बेकाम उर्दू के प्रचलित शब्द हैं।

अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोगः अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग हास्य व्यंग्य से संबंधित रचनाओं के लिए किया है। एक उदाहरण देखिए-

विष्णु बावनी, पोर्ट पुरुषोत्तम, भद्‌य मुरारी।
शैंपेन शिव, गौरी गिरीश, ब्रांडी ब्रहम् बिचारी।।
लंहगा दुपट्‌टा नीक नहिं लागे।
मेमन का गौन मंगाये नहि देत्यों।।

स्थानीय शब्दों का प्रयोगः लोकगीतों में भारतेन्दु ने स्थानीय बनारसी शब्दों का प्रयोग किया है। भाषा को सर्वसाधारण के लिए बोधगम्य बनाने के लिए यह आवश्यक था। भारतेन्दु के गीत जनसाधारण में लोकप्रिय हुए इसका मुख्य कारण था भाषा का सरल होना।

एक उदाहरण देखिए-

काकरौं गोइयाँ गई अखियाँ
कैसे छिपाऊँ छिपत नहीं सजनी, छैला मद-माती भई मधु-मखियाँ।
सावरों रूप देख परबस भई, इन कुल-लाज तनिक नहीं रखियाँ।
'हरीचंद' बदनाम भई मैं तो, ताना मारत तब सँग की सखियाँ।।
-प्रेम तरंग

इस प्रकार भारतेन्दु काव्य पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट हो जाता है कि भारतेन्दु ने काव्य भाषा को जनसामान्य योग्य बनाने के लिए तद्‌भव, उर्दू, अंग्रेजी तथा स्थानीय शब्दों का सफल प्रयोग किया है। वस्तुतः भाषा को जनसामान्य के निकट लाकर भारतेन्दु ने एक ऐसा स्वरूप खड़ा कर दिया जिसके आधार पर खड़ी बोली हिंदी कविता में प्रमुख स्थान पाने में सफल हो सकी।

2.5.2 काव्य रूप

किशोरीलाल गुप्त के अनुसार मुक्तक एवं प्रबंध काव्य के बीच की रचनाओं को निबंध काव्य, वर्णात्मक काव्य, काव्य कहानी नामों से अभिहित किया जा सकता है। हिंदी साहित्य में ऐसी रचनाओं का प्रारंभ भारतेन्दु ने किया।

निबंध काव्यः किसी विषय पर चिंतन करके पद्यबद्ध लेख के रूप में प्रस्तुत रचना को निबंध काव्य की संज्ञा दी जाती है। ऐसी रचना में कोई कथा सूत्र नहीं होता है। हिंदी की उन्नति पर व्याख्यान, बकरी विलाप, प्रातः समीर, रिपनाष्टक ऐसी ही रचनाएँ हैं।

वर्णनात्मक काव्यः बिना कथा सूत्र के किसी दृश्य का वर्णन करते हुए जो काव्य रचना की जाती है उसे वर्णनात्मक काव्य कहते हैं। भारतेन्दु ने होली लीला, मधुमुकुल छंद, हिंडोला आदि वर्णनात्मक काव्य रचनाएँ कीं।

विवरणात्मक काव्यः जिस रचना में कथा का लघु एवं क्षीण सूत्र वर्तमान हो और जिसमें किसी घटना का विवरण प्रस्तुत किया जाये उसे विवरणात्मक काव्य की संज्ञा दी जाती है। भारतेन्दु की ऐसी रचनाएँ हैं- विजयिनी विजय वैजयंती, भारत वीरत्व एवं भारत भिक्षा।

मुक्तकः मुक्तक ऐसी काव्य रचनाएँ हैं जिनमें किसी प्रकार का बंधन नहीं रहता। जिनका प्रत्येक छंद स्वतंत्र एवं काव्य आनन्द देने में पूर्ण होता है। मुक्तकों को भी दो प्रमुख भागों में बाँटा जा सकता है। एक वे जो गाये जाने के लिए ही लिखे जाते हैं, इनमें राग-रागनियों का बंधन होता है। दूसरे प्रकार के मुक्तक को साधारण मुक्तक या 'मुक्तक' कह सकते हैं। भारतेन्दु संगीत प्रेमी थे, उनका कण्ठ भी सुरीला था वे स्वयं कई प्रकार के वाद्य बजा सकते थे। यही कारण है कि उन्होंने अधिकांश रचनाएँ प्रगीत मुक्तकों में लिखीं। प्रगीत मुक्तक दो प्रकार के होते हैं- एक भक्तों की प्राचीन परंपरा से चली आई हुई पद-प्रणाली की, और दूसरी लोकगीतों के रूप में। भारतेन्दु ने पहले प्रकार के प्रगीत (पद-प्रणाली) की रचनाएँ अधिक संख्या में कीं। प्रेम मालिका, कार्तिक स्नान, प्रेमाश्रु वर्णन, जैन कुतूहल, प्रेम तरंग, प्रेम-प्रलाप, गीत-गोविदानंद, होली, मधु मुकुल, राग संग्रह, वर्षा विनोद, विनय-प्रेम पचासा, प्रेम फुलवारी, कृष्णचरित, देवी छद्मलीला, दैन्य प्रलाप, उलाहना, तन्मय लीला, बोधगीत, भीष्मस्वराज आदि 800 रचनाएँ पद में हैं।

लोकगीतों में, कजरी, होली, दादरा, ठुमरी, साँझी, लावनी, गजल, चैती, पूरबी, बारहमासा आदि लगभग 200 रचनाएँ कीं।

स्त्रोत काव्यः भारतेन्दु ने प्रातः स्मरण, भजनपाठ स्वरूप चिंतन, सर्वोत्तम स्त्रोत, प्रातः स्मरण स्तोत्र, अपवर्गादाष्टक, श्रीनाथ स्तुति, अपवर्ण पंचक, श्री सीता वल्लभ स्तोत्र, स्तोत्रों की रचनाएँ कीं।

प्राचीन प्रणालीः भारतेन्दु ने लगभग एक सौ दोहे, एवं ढाई सौ के करीब कवित्त सवैयों की रचनाएँ कीं।

2.5.3 छन्दोविधान

भारतेन्दु ने अधिकाशंतः प्रगीत मुक्तकों की रचना की है। इन मुक्तों का छन्द विधान पिंगलशास्त्र में मिलना कठिन है। इन मुक्तक रचनाओं को विषम मात्रिक छन्द के अन्तर्गत लिया जा सकता है। भारतेन्दु के गीतों की गति मात्राओं पर निर्भर है। चरणों की संख्या असमान है। किसी पद में चार चरण हैं तो किसी में दस। प्रायः पहली पंक्ति छोटी है। यही दशा उनके अधिकतर लोकगीतों में है। गति और लय के अनुसार भारतेन्दु के गीतों का विवेचन किया जा सकता है। एक उदाहरण देखें-

फबी छवि भारे ही सिंगार
बिना कंचुकी, बिनु कर कंकन, सोभा बढ़ी अपार।
खसि रहि तन में, मन सुखसारी खुलि रहे सोध बार।
हरिचंद मनमोहन प्यारे, रिझ्यो है रिझवार।।

उपर्युक्त पद की प्रत्येक पंक्ति में मात्राएं एक सी नहीं है। अनेक यतियाँ लगाकर छन्द में प्रभाव बढ़ाने का प्रयास किया गया है।

भारतेन्दु ने कृष्ण काव्य परंपरा में पद-प्रणाली ग्रहण की। पदों में विविध राग रागनियों के आधार पर अभिव्यक्ति में स्वर एवं लय का पूरा ध्यान रखा है। एक उदाहरण देखिए-

धनि ये मुनि वृंदावन-वासी
दरसन हेतु बिहंगम हैं रहे मूरति मधुर व्यासी।
नव कोमल दल पल्लव द्रुम पै मिलि बैठत है आई।
नैननि मूँदि त्यागि कोलाहल-सुनहि वेनुधुनि भाई।
प्राननाथ के मुख की बानी करहि अमृत रस पान।
हरीचंद हम कौ सोऊ दुर्लभ यह विधि की गति आन।।

रीतिकालीन काव्य से भारतेन्दु ने दोहा, कवित्त और सवैया छंदों को ग्रहण किया है। भारतेन्दु के दोहों में रीतिकालीन कवियों की तरह चमत्कार विलक्षणता नहीं है। सरलता

एवं भावाभिव्यक्ति में पूर्णता ही इनके काव्य की विशेषता है। एक उदाहरण देखिए-

तन तरु चढ़ि रस चूसि सब, फूली न रीति
प्रिय अकास वेली भई, तुव निर्मूलक प्रीति।

भारतेन्दु के कवित्त रीतिकालीन घनानंद, देव एवं पद्माकर की याद दिलाते हैं। एक उदाहरण देखिए-

नेह हरी सो नीकों लागै
सदा एक रस रहत निरंतर, छिन-छिन अति रस पावै।
नहि वियोग- भय नहिं हिंसा, जहँ सतत मधुर ह्वै जागे।
हरीचंद तेहि तजि मूरख क्यों, जगत जाल अनुरागै।।
-प्रेम फुलवारी

भारतेन्दु ने देवघनाक्षरी तथा रूप-घनाक्षरी छन्दों का सफल प्रयोग किया है। प्रेम माधुरी से एक उदाहरण प्रस्तुत है-

रूप-घनाक्षरी-

बाजी करै वंसी धुनि, बाजि बाजि श्रवनन
जोरा-जोरी मुख-छवि चितही चुराए लेत।
हँसनि हँसावति जगत सों तिहारी मुरि
मुरनि पियारी मन सब सों मुराए लेत।
हरीचंद बोलनि चलनि बतरानि, पीत-
फट फहरानि मिलि धीरज मिटाए लेत
जुलफैं तिहारी लाज- कुलफन तोरै प्रान,
प्यारे नैन-सैन प्रान, संग ही लगाए लेत।

देवघनाक्षरी का एक उदाहरण देखिए-

आजु कुंज मंदिर मैं छके रंग दोऊ बैठे
केलि करै लाज छोड़ि रंग सों जहकि जहकि।
सखीजन कहत कहानी हरीचंद तहाँ,
नेह भरी केकी कीर पिक सी चहकि चहकि।
एक टक बदन निहारें बलिहारी लै लै,
गाढ़े भुज भरी लेत नेह सो लहकि लहकि।
गरे लपटाय प्यारी बारबार चूमि मुख
प्रेम भरी बातैं करैं मद सो बहकि बहकि।

भारतेन्दु ने मत्तगयंद, अरसात, सुन्दरी, किरीट सवैयों की रचना की। कुछ स्थानों पर मिश्रित सवैयों की रचना की। वर्णनात्मक काव्य के लिए रोला छंद का प्रयोग किया। लोक जीवन की अभिव्यक्ति के लिए उन्होंने लावनी, कजरी, होली आदि छंदों का प्रयोग किया। इसके अलावा बंगला, उर्दू फारसी आदि भाषाओं के छंदों का प्रयोग उनके काव्य की विशेषता है। भारतेन्दु ने काव्य रचना के लिए किसी मतवाद से आबद्ध न होकर भावाभिव्यक्ति के अनुरूप ही छंदों का प्रयोग किया है।

2.5.4 रस

भारतेन्दु हरिश्चंद्र के व्यक्तित्व में दो रूप स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ते हैं। एक भक्त का दूसरा कवि का। भारतेन्दु के समग्र काव्य का अवलोकन करने पर यह तथ्य सामने आता है कि भारतेन्दु शांत एवं श्रृंगार रस के कवि हैं। भारतेन्दु काव्य में यही दो रस प्रमुख हैं। भारतेन्दु विनोदी प्रकृति के कवि थे इसलिए हास्य रस की रचनाएँ भी पर्याप्त मात्रा में है। अन्य रसों की रचनाएँ प्रसंगवश मिल जाएँगी, लेकिन उनकी संख्या कम है।

श्रृंगार रस रसों का राजा है। भारतेन्दु ने श्रृंगार रस के दोनों प्रकार संयोग एवं वियोग का सुन्दर प्रयोग किया है। संयोग श्रृंगार का एक उदाहरण- 'प्रेममाधुरी' रचना से यहाँ प्रस्तुत है-

आज कुंज मंदिर अनंद भरि बैठे श्याम
श्यामा संग रंगन उमंग अनुराग है
घन घहरात बरसात होत जात ज्यों-ज्यों
त्यों ही त्यों अधिक दोऊ प्रेम-पुंज पागे है
'हरीचंद' झलके कपोल पै सिमिट रही
बारि बुंद चूअत अतिहि नीके लागे है
भीजि भीजि लपटि सतराई दोऊ
नील पीत मिलि नए एकै रंग बाजे हैं।
-प्रेम माधुरी

इस कवित्त में कवि ने युगल स्वरूप का मधुर चित्रण किया है। बरसात के मौसम में प्रिय प्रियतमा एक स्थान पर हैं। वर्षा की फुहारें उनमें उत्तेजना बढ़ा रही है। राधा के संग कृष्ण मानों एकाकार हो गए हैं। श्याम पीत-अबंर भी मिलकर एक रंग के होते जा रहे है।

भारतेन्दु वल्लभ संप्रदाय के वैष्णव भक्त थे इसलिए विनय, आत्म समर्पण एवं दैन्य संबंधी पदों की रचना की हैं। वैराग्य रस से संबंधित एक उदाहरण देखिए-

नाथ तुम अपनी ओर निहारो
हमरी लखते अबलौ गुन-औगुन अपने गुन बिसराई।
तौ तरते किमि अजामेल से पापी देहु बताई।
अबलौ तो कबहुँ नहि देख्यो जन के औगुन प्यारे।
तौ अब नाथ नई क्यों ठानत भारबहु बार हमारे।
तब गुन क्षमा दया सों मेरे अघ नहिं बडे कन्हाई।
तासों तारि लेहू नंद नंदन 'हरीचंद' को धाई।।

भारतेन्दु ने वीस रस की रचनाएँ देश भक्ति से संबंधित कविताओं में की हैं। 'विजयिनी विजय वैजयंती' से एक उदाहरण देखिए-

उठहुँ बीर तरवार खींचि, माडहु धर संगर।
लोह लेखनी लिखहु आर्य बल जवन हृदय पर।

'राज संग्रह' में श्री नृसिंह- चतुर्दशी बधाई में रौद्र भयानक तथा अद्भुत रस एक साथ देखा जा सकता है। 'उर्दू का स्यापा' हास्य रस से संबंधित रचना का अच्छा उदाहरण है-

है है उर्दू हाय-हाय। कहाँ सिधारी हाय हाय।
मेरी प्यारी हाय हाय। मुंशी मुल्ला हाय हाय
बिल्ला बिल्ला हाय हाय। रोये पीटे हाय हाय।
टाँग घसीटे हाय हाय। सब छिन सोंचे हाय हाय।

2.5.5 अलंकार

भारतेन्दु पूर्व रीति साहित्य का युग था। रीतिकाल के कवियों ने कविता को अलंकारों के भार से दुरूह बना दिया था। चमत्कार प्रदर्शन के लिए अलंकारों का प्रयोग अनावश्यक हो गया था। भारतेन्दु के आगमन के बाद काव्य की प्रवृत्ति को दूर किया गया। भारतेन्दु सीधी-सादी भाषा लिखने के पक्ष में थे। काव्यालंकारों से बोझिल काव्य से उन्हें मोह नहीं था। उनके काव्य में जहाँ भी अलंकार आए हैं वे सहज-सरल एवं स्वाभाविक हैं। हम यहाँ एक-एक अलंकारों के उदाहरण से इसे समझेंगे।

अनुप्रासः भारतेन्दु ने सहज, सरल स्वाभाविक अनुप्रास का प्रयोग किया है-

'तरनि तनूजा तट तमाल तरुवर बहु छाए'

यमकः भारतेन्दु यमक नामक अलंकार का प्रयोग अधिक करते हैं। 'मानलीला' 'फूल बुझोवल' का प्रत्येक दोहा यमक अलंकार से युक्त हैः

'अमल कमल कर पद बदन, जमल कमल से नैन।
क्यों न करत कमला विमल, कमल नाभ संग सैन।।

इस दोहे में कमल शब्द चार बार आता है।

पुनरुक्ति प्रकाश

एक शब्द को दो-दो बार दुहराने पर पुनुरुक्ति अलंकार की संज्ञा दी जाती है। भारतेन्दु में यह प्रवृत्ति बहुत अधिक हैः

वह वन वन विहरन कुंज कुंज तरु पात
वह गल भुज डालन प्रीति प्रीति की घातै
वह चंद चाँदनी और निराला रातैं
एक एक की सौ सौ जी में खटकती बातें
'हरीचंद' बिना भई रो रो हाथ दिबानी
पिय प्यारे की मैं कब लौ कहौ कहानी

भारतेन्दु ने उपमा, रूपक, उत्पेक्षा, व्यतिरेक, संदेह आदि अलंकारों का प्रयोग भी किया है।

उपमाः नागरी रूप लता सी सोहै
कमल सो बदन पल्लव से कद, पद देखत ही मनमोहे।।
अलसी कुसुम सी बनी नासिका, जलज पत्र से नयन।
बिम्ब से अधर कुन्द दन्तावलि, मदन वान सी सयन।।

उक्त पद में विभिन्न उपमाओं के द्वारा नायिका के नख-सिख सौन्दर्य का सजीव चित्रण किया गया है। इस प्रकार भारतेन्दु ने काव्य रचना में अलंकारों का प्रयोग किया है लेकिन परंपरानुकूल अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन को छोड़कर।

बोध प्रश्न-3

1. भारतेन्दु के काव्य भाषा की दो विशेषताएँ बताइए।

....

....

....

....

2. भारतेन्दु ने काव्य रचना में अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग किस उद्देश्य से किया है?

....

....

....

....

3. भारतेन्दु ने मुक्तक एवं प्रबंध काव्य के बीच की जिन रचनाओं का प्रारंभ किया उनके नाम लिखिए।

....

....

....

4. वर्णनात्मक काव्य क्या है? भारतेन्दु द्वारा रचित दो वर्णनात्मक काव्य के नाम लिखिए।

....

....

....

5. मुक्तक रचना किसे कहते हैं? भारतेन्दु द्वारा अपनाये गए दो प्रकार के मुक्तकों के नाम लिखिए।

....

....

....

....

6. भारतेन्दु ने वर्णनात्मक काव्य एवं लोकजीवन की अभिव्यक्ति के लिए किन-किन छंदों का प्रयोग किया?

....

....

....

....

7. भारतेन्दु काव्य में श्रृंगार एवं शांत रस के काव्यों की प्रधानता है, कारण बताइए?

....

....

....

....

8. भारतेन्दु काव्य अलंकारों के भार से मुक्त हैं, स्पष्ट कीजिए।

....

....

....

....

2.6 सारांश

- अंग्रेजों के आगमन के बाद भारत के राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में परिवर्तन आया। बदली हुई परिस्थितियों का प्रभाव तत्कालीन साहित्य पर पड़ा। अंग्रेजों की शोषण नीतियों ने जहाँ भारतीय जनता में विद्रोह की अग्नि भड़काई वहीं तत्कालीन कवियों में चेतना फैलाई। भारतेन्दु इस चेतना के अग्रदूत बने। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप हिंदी कविता में आए परिवर्तन को बता सकते हैं।

- भारतेन्दु का आगमन हिंदी भाषा साहित्य के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण था। उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व ने हिंदी काव्य को एक नई दिशा प्रदान की। आप इस युग पुरुष के व्यक्तित्व एवं कृतित्व की विशेषताओं को स्पष्ट कर सकते हैं।

- तत्कालीन परिस्थितियों ने कवियों के अंदर नई चेतना का संचार किया। यद्यपि भारतेन्दु पारंपरिक प्रवृत्तियों से जुड़े रहे लेकिन नई चेतना उनके काव्य की मुख्य विषयवस्तु के रूप में सामने आई इकाई का अध्ययन करने के उपरांत आप भारतेन्दु की मूल संवेदना को स्पष्ट कर सकते हैं।

- भारतेन्दु का आगमन जिस समय हुआ यह रीतिकाल का समय था। रीति कालीन परंपरा का प्रभाव उन पर था लेकिन काव्य की विषयवस्तु, भाषा शैली आदि में उन्होंने नए प्रयोग किए। ब्रज भाषा ही काव्य भाषा हो सकती है, इस भ्रम को उन्होंने दूर किया। इकाई के अध्ययन के बाद आप भारतेन्दु काव्य की संरचनागत विशेषताओं को बता सकते हैं।

2.7 शब्दावली

प्रतिदान = लौटाना, वापस करना, किसी की दी हुई वस्तु के बदले में मिलने वाली वस्तु।

प्रकरण = ग्रंथ के अन्तर्गत उसका छोटा विभाग, अध्याय।

पूर्ववर्ती = पहले का, जो पहले रह चुका हो

ऊहात्मक = बढ़ा-चढ़ा कर वर्णन करना।

अष्टछाप = गोसाई विट्ठलनाथ जी का निश्चित किया हुआ आठ सर्वोत्तम पुष्टि मार्गी कवियों का एक वर्ग।

कुठाराघात = गहरी चोट।

समीचीन =उपयुक्त, उचित, बाजिब, ठीक-ठीक।

मुद्रा = खड़े होने, बैठने आदि में शरीर के अंगों की कोई स्थिति।

कौतुक = विनोद, तमाशा, कुतुहल, दिल्लगी।

2.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- **गुप्त, किशोरी लाल**: भारतेन्दु और अन्य सहयोगी कवि, हिंदी प्रचारक पुस्तकालय, बनारस

- पूर्व इकाई में उल्लेखित पुस्तकों को प्रयोग में लाएँ।

2.9 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1. (क) श्री गोपालचन्द्र, कवि (ख) दोहा, कवि, (ग) संस्कृत, उर्दू, बंगला (घ) विधवा विवाह (ङ) चौखम्भा (च) कविवचन सुधा (छ) भारतेन्दु (ज) 35
2. भारतेन्दु में साहित्यिक रुचि पैदा होने का प्रमुख कारण था घर में साहित्यिक वातावरण का होना। उनके पिता स्वयं कवि थे एवं साहित्यकारों की सभा का आयोजन करते थे। घर के साहित्यिक माहौल ने उनके अंदर के कवि को प्रेरणा दी।
3. बंगला भाषा का नाटक 'विधवा विवाह' पढ़ने के बाद भारतेन्दु में सामाजिक चेतना जगी। नारी उत्थान के लिए उनके द्वारा किया गया पहला प्रयास था ''बाला बोधिनी'' नामक पत्रिका का प्रकाशन।
4. पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन के पीछे भारतेन्दु का मुख्य उद्देश्य था साहित्य के माध्यम से लोगों में जागरण पैदा करना।

अभ्यास

1. देखिए उपभाग 2.2.1

बोध प्रश्न -2

1. भारतेन्दु काव्य की प्राचीन प्रवृत्तियाँ हैं- कृष्णपदावली आदि भक्ति काव्य, कथा काव्य रीति काव्य, विवरणात्मक काव्य एवं काव्य कौतुक।
2. तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, परिस्थिति के परिणामस्वरूप भारतेन्दु काव्य में नवीन प्रवृत्तियों का उदय हुआ।
3. कृष्णपदावली की रचना करते हुए भारतेन्दु ने भक्त कवि सूरदास का अनुसरण किया।
4. जिस काव्य में किसी दृश्य या कार्य का विवरण प्रस्तुत किया जाए उसे विवरणात्मक काव्य कहते हैं।
5. भारतेन्दु का वंश राजभक्त था साथ ही भारतेन्दु को भी तत्कालीन गोरी सरकार से कई आशाएँ थीं अतः उन्होंने राजभक्ति संबंधी रचनाएँ कीं।
6. भारतेन्दु पूर्व परिहास काव्य का स्वरूप भोंडा था। भारतेन्दु ने सोद्देश्य परिहास काव्य की शुरूआत की।
7. लोकगीतों की रचना के पीछे भारतेन्दु का मुख्य उद्देश्य था साहित्य को जनता से जोड़ना।
8. किसी विषय पर सुसंबद्ध रूप से छन्दबद्ध रचना को निबंध काव्य कहते हैं।
9.

	विषय	रचनाएँ
1.	कथाकाव्य	देवी छद्मलीला
2.	कृष्णपदावली	प्रेममालिका
3.	नायिका भेद	सुंदरी तिलक
4.	विवरणात्मक काव्य	हिंडोला
5.	श्री राजकुमार सुस्वागत	राजभक्ति
6.	काव्य कौतुक	मनोमुकुलमाला

बोध प्रश्न-3

1. भारतेन्दु के काव्य भाषा की दो निम्नलिखित विशेषताएँ हैं
   - सरल प्रचलित शब्दों का प्रयोग
   - परिष्कृत एवं सरस पदावली
2. भारतेन्दु ने काव्य रचना में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग व्यंग्य एवं हास्य के लिए किया है।
3. भारतेन्दु मुक्तक एवं प्रबंध काव्य के बीच की निम्न रचनाओं को प्रारंभ किया-

   निबंध काव्य

   वर्णनात्मक काव्य

   विवरणात्मक काव्य
4. जिन काव्य रचनाओं में बिना कथा सूत्र के किसी दृश्य का वर्णन किया जाये उसे वर्णनात्मक काव्य कहते हैं। भारतेन्दु रचित दो वर्णनात्मक काव्य रचना के नाम हैं 'होली लीला' एवं 'हिंडोला'।
5. मुक्तक काव्य उन रचनाओं को कहते हैं जिनका एक-एक छंद स्वतंत्र एवं काव्य आनंद प्रदान करने में सक्षम होते हैं। भारतेन्दु ने 'पद' और 'लोकगीत' मुक्तकों की रचना की है।
6. भारतेन्दु ने वर्णनात्मक काव्य के लिए रोला छंद तथा लोक जीवन की अभिव्यक्ति के लिए लावनी, कजरी, होली आदि छंदों का प्रयोग किया।
7. भारतेन्दु भक्त एवं कवि दोनों थे। भक्त होने के कारण उन्होंने विनय एवं भक्ति से संबंधित रचनाएँ की। फलतः शांत रस का होना आवश्यक था। दूसरी ओर रीतिकालीन परंपरा से उनका संबंध था। यही कारण है कि उन्होंने श्रृंगारिक रचनाएँ कीं।
8. भारतेन्दु काव्य रचना करते समय सीधी-सीधी भाषा का प्रयोग करते थे। वे काव्य को जनसामान्य से जोड़ना चाहते थे। रीतिकालीन कवियों ने काव्यभाषा को अलंकारों के भरपूर प्रयोग से दुरूह एवं सीमित बना दिया था। भारतेन्दु ने इस प्रवृत्ति को बदला। यही कारण है कि उनका काव्य अलंकारों के भार से मुक्त है।

इकाई 3 द्विवेदी युगीन हिंदी काव्यः स्वरूप और विकास

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 युगीन पृष्ठभूमि

3.3 द्विवेदी युग

- 3.3.1 काल निर्धारण और नामकरण
- 3.3.2 महावीर प्रसाद द्विवेदीः युगकर्ता की शक्तियाँ और सीमाएँ

3.4 द्विवेदी युग के प्रमुख कवि

- 3.4.1 मैथिलीशरण गुप्त
- 3.4.2 अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'
- 3.4.3 रामनरेश त्रिपाठी
- 3.4.4 नाथूराम शंकर शर्मा
- 3.4.5 सियाराम शरण गुप्त

3.5 द्विवेदी युगीन काव्य की साहित्यिक प्रवृत्तियाँ

- 3.5.1 काव्य-विषयों की व्यापकता
- 3.5.2 राष्ट्रीयताः जागरण, सुधार, और देशभक्ति
- 3.5.3 उपेक्षितों और सामान्य व्यक्तियों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण
- 3.5.4 स्वच्छंदतावादी काव्य के आरंभिक संकेत
- 3.5.5 द्विवेदी युगीन काव्य में प्रकृति का स्थान
- 3.5.6 उदात्त प्रेम की संयत अभिव्यक्ति
- 3.5.7 परंपरानुवर्ती कविता की झलक
- 3.5.8 इतिवृत्तात्मकता

3.6 द्विवेदी युगीन काव्य का अभिव्यंजना शिल्प

- 3.6.1 काव्य रूपों की विविधता
- 3.6.2 द्विवेदी युगीन काव्य भाषा : खड़ी बोली
- 3.6.3 प्रतीक एवं बिंब-विधान
- 3.6.4 उपमान योजना (अलंकार)
- 3.6.5 छंद विधान

3.7 सारांशः द्विवेदी युगीन काव्य का मूल्यांकन

- 3.7.1 प्रमुख प्रदेय
- 3.7.2 सीमाएँ

3.8 शब्दावली

3.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

3.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- द्विवेदी युगीन काव्य की पृष्ठभूमि का उल्लेख कर सकेंगे;
- द्विवेदी युग से भारतेन्दु युग का संबंध बता सकेंगे; और
- महावीर प्रसाद द्विवेदी के युगकर्त्ता व्यक्तित्व का परिचय दे सकेंगे;
- द्विवेदी युग के प्रमुख कवियों के विषय में बता सकेंगे;
- द्विवेदी युगीन काव्य की विविध विशेषताओं का विवेचन कर सकेंगे; और
- द्विवेदी युग के प्रमुख प्रदेय और उसकी सीमाओं की चर्चा कर सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

इस खंड की पिछली इकाइयों में आप भारतेन्दु युगीन कविता के बारे में पढ़ चुके हैं। आपने देखा कि किस प्रकार भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने अपनी प्रतिभा और लगन से साहित्य की धारा को नयी दिशा दी और अपने समय के रचनाकारों को प्रभावित किया। इस तरह 19वीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध हिंदी साहित्य में भारतेन्दु युग के नाम से जाना जाने लगा। बीसवीं शताब्दी के आरंभ के साथ साहित्य की इस धारा के विकास के नए मार्ग खुले। इस इकाई में हम इन नए मार्गों की विस्तृत चर्चा करेंगे। साहित्य के विकास के इस नए मोड़ को द्विवेदी युग के नाम से जाना जाता है। कुछ विद्वान यह भी कहते हैं कि द्विवेदी युग का जन्म भारतेन्दु युग की प्रतिक्रिया स्वरूप हुआ था क्योंकि भारतेन्दु युग में स्वीकृत ब्रजभाषा कविता, रीतिकालीन परंपराबद्धता और शिल्पयोजना का द्विवेदी युग में खुलकर विरोध हुआ था। किन्तु इस विरोध को प्रतिक्रिया मानने की बजाय भारतेन्दु युग में सूत्रपात हुई और अंकुरित स्थितियों का सहज प्रस्फुटन और विकास मानना ज्यादा उपयुक्त होगा। भारतेन्दु युग में जो बातें रचनाकार महसूस करने लगा था उनके प्रति विश्वास और दृढ़ता उसने द्विवेदी युग में आकर पायी। अतः द्विवेदी युग भारतेन्दु युग की प्रतिक्रिया न होकर उसका सहज और उन्नत विकास है।

3.2 युगीन पृष्ठभूमि

पिछली इकाइयों में हम पढ़ चुके हैं कि हिंदी साहित्य के आधुनिक युग की शुरूआत भारतेन्दु हरिश्चंद्र से होती है। राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक जीवन में हुए व्यापक परिवर्तनों ने इस युग की मनोभूमिका का निर्माण किया था। कवि अब रीतिकालीन दरबारी परिवेश से बाहर निकल कर जीवन की गहन समस्याओं पर विचार करने के लिए प्रेरित हुआ था।

सन् 1857 की क्रांति के बाद भारत में अंग्रेजों की राजनैतिक शासन व्यवस्था दृढ़ हो गयी थी। रेल, तार, डाक व्यवस्था एवं आवागमन की अन्य सुविधाएँ यद्यपि अंग्रजों ने देश के विभिन्न प्रांतों में शासन तंत्र को मजबूत बनाने के लिए स्थापित की थीं किन्तु इनसे सांस्कृतिक एवं राजनैतिक एकता को भी भौतिक आधार प्राप्त होने लगा था।

धीरे-धीरे शिक्षित और विचारशील लोगों के ध्यान में आने लगा था कि व्यवस्था, शांति, न्याय, सुविधाएँ, शिक्षा इत्यादि की बातें दिखावे की थीं। असलियत यह थी कि यह सारा काम जनता के प्रति सहानुभूति से न होकर अपनी सत्ता को दृढ़ बनाने और उसके माध्यम से भारत जैसे समृद्ध देश का आर्थिक शोषण करने के उद्देश्य से प्रेरित था। भारतेन्दु युग के साहित्यकारों में एक ओर अंग्रेजों के प्रति भक्ति की भावना भी दिखाई पड़ती है तो

दूसरी ओर उनकी सही पहचान की व्यंग्यात्मक अभिव्यंजना भी हुई है। जैसे-जैसे भारतेन्दु युग का साहित्यकार देश की व्यवस्था एवं स्थिति के प्रति सजग होने लगा वैसे-वैसे शासन के प्रति आदर, भक्ति एवं विश्वास का लोप होता दिखाता है और राष्ट्र भक्ति, स्वातंत्र्य-प्रेम, स्वजन-उद्धार की भावना जोर पकड़ती जाती है। देशभक्ति राजभक्ति पर हावी हो जाती है।

भारतेन्दु युग की कविता उन धार्मिक, सामाजिक सुधार आंदोलनों से भी प्रभावित है जो उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में प्रारंभ और विकसित हुए। उन्नसवीं सदी तक आते-आते धर्म असंख्य जर्जर रूढ़ियों, विकृत परंपराओं, व्यर्थ विधि-विधानों से तेजहीन हो गया था। न वह भौतिक उन्नति के लिए सहायक बन रहा था न आध्यात्मिक प्रगति के लिए उपयोगी। धर्म की विकृतियों को दूर हटा कर उसके मूल स्वच्छ रूप को जनता के लिए प्रस्तुत करने के उद्देश्य से कतिपय सामाजिक-सांस्कृतिक आंदोनलन हुए, कतिपय प्रतिभाशाली तेजस्वी व्यक्तित्वों ने अपनी शक्ति देशोद्धार में लगा दी और नवजागरण की चेतना ने नए ढंग से सोचने का कार्य किया।

द्विवेदी युग के काव्य की मानसिक पृष्ठभूमि भी भली-भाँति समझने के लिए इसकी सामाजिक-सांस्कृतिक नवजागरण की चेतना को विस्तार से समझना जरूरी है।

भारतीय नवजागरणः विविध मूल्य दृष्टियाँ

भारत में अंग्रेजों के शासन के स्थिरीकरण के बाद अंग्रेजी शिक्षा का प्रसार शुरू हुआ। परिणामस्वरूप पश्चिम के ज्ञान-विज्ञान से हमारा परिचय तो हुआ ही, अपने प्राचीन ज्ञान-विज्ञान की भी खोजों को जांचने परखने की लालसा भारतीय मानस में पैदा हुई और वैचारिक एवं सांस्कृतिक आंदालेन प्रारंभ हुए। भारतीय मनीषियों ने भारतीय वैदिक संस्कृति से लेकर सामाजिक स्थिति तक हमारी परंपराओं, सांस्कृतिक मूल्यों, सामाजिक व्यवहारों एवं साहित्यिक समृद्धियों पर पुनर्विचार करना शुरू किया। पश्चिमी विचारों से परिचय होने पर हमने देखा कि पश्चिमी सभ्यता एवं संस्कृति में बुद्धिवाद, वैज्ञानिक दृष्टि की महत्ता, मनुष्य मात्र से बंधुत्व की भावना धार्मिक एवं सामाजिक क्षेत्रों में समानता, व्यक्ति की स्वतंत्रता इत्यादि मूल्यों का महत्व उद्घोषित हो रहा था। नारी के प्रति समानता का उदार दृष्टिकोण अपनाया गया था। पीड़ित, दुखी एवं संत्रस्त मनुष्य के प्रति करुणा और सहानुभूति के दृष्टिकोण को वरीयता दी गई थी। आर्थिक गति में स्पर्धा परन्तु मानवीय व्यवहार में सहिष्णुता, न्याय-प्रियता तथा मानवतावादी दुष्टि का महत्व स्वीकृत था। मनुष्य के व्यक्तित्व-विकास के लिए बढ़ते ज्ञान-विज्ञान का परिचय एवं संस्कार अत्यावश्यक समझा गया था। धीरे-धीरे समाज, राजनीति, धर्म-संस्कृति इत्यादि क्षेत्रों में व्यक्ति के महत्व और लोकान्मुख जीवनदृष्टि को स्वीकार किया गया था। इस नयी मूल्य-सरणि ने भारतीय बौद्धिकों को अपने धर्म, समाज, जीवन-विषयक अवधारणाओं, आध्यात्मिक संकल्पनाओं, जाति-वर्णादि संगठनों का पुनरूद्धार करने की आवश्यकता को उजागर किया।

द्विवेदी युग में आकर स्वाधीनता आंदोलन अधिक शक्तिशाली हो गया था। भारतीय राजनीति में यह नौरोजी, गोखले और तिलक युग था। पूरी चेतना ब्रिटिश साम्राज्यवाद और उपनिवेशवादी शक्तियों को देश से बाहर खदेड़ देने के लिए संकल्पबद्ध रूप में सामने आयी। पराधीनता के विरूद्ध विद्रोह इस स्वाधीनता आंदोलन की एक ऐसी पुकार थी जिसने 1905 के स्वदेशी आंदोलन के साथ देश की प्राचीन परंपराओं की पुनर्व्याख्या से एक नवीन मूल्य दृष्टि पैदा की थी।

ब्रजभाषा कविता की सामंतवादी रूढ़ियों को पीछे धकेल कर खड़ी बोली में काव्य सृजन का मार्ग अपनाया गया। ब्रजभाषा के स्थान पर खड़ी बोली की स्वीकृति मात्र भाषा परिवर्तन नहीं थी बल्कि यह बदलती हुई मानसिकता का नया तेज था। नयी संवेदना को पुरानी भाषा में व्यक्त करना अब संभव नहीं था। इसलिए गद्य और पद्य दोनों क्षेत्रों में खड़ी बोली की प्रतिष्ठा हुई। आचार्य शुक्ल ने इस काल को हिंदी काव्य की नयी धारा नाम ही इसलिए

दिया है कि इस काल की कविता जागरण सुधार युग के आंदोलनों, क्रांतियों और विद्रोहों की सशक्त अभिव्यक्ति का माध्यम बनी है। किसान-मजदूरों के आंदोलन इस काल में उठे और उन्हें दादा भाई नौरोजी तथा तिलक की विचारधाराओं से दिशा मिली। भारतीयता की तलाश में यह काव्य रामकृष्ण, शिवाजी आदि को अपनाकर नए रूप में प्रस्तुत हुआ और नारी जागरण संबंधी आंदोलनों की सीधी प्रतिध्वनि 'प्रिय-प्रवास', 'मिलन', 'यशोधरा', 'साकेत' जैसे काव्यों में सुनाई दी। रीतिवाद को तोड़ते हुए इस काल की कविता ने राष्ट्रीयता और देशभक्ति के माध्यम से मानव मुक्ति का अभियान चलाया। एक ओर तो कविता इतिवृत्तात्मक, उपदेशात्मक और आदर्शात्मक रही और दूसरी ओर श्रीधर पाठक, रामनरेश त्रिपाठी मुकुटधर पांडेय आदि कवियों ने प्राचीन रूढ़ियों से विद्रोह करते हुए स्वछंदतावादी कवियों का मार्ग प्रशस्त किया। कहा जा सकता है कि द्विवेदी युगीन कविता भाव और भाषा दोनों ही स्तरों पर नवीन प्रवृत्तियों को लेकर उदित होती है।

3.3 द्विवेदी युग

3.3.1 काल निर्धारण और नामकरण

1900 ई. से 1920 ई के युग की कविता को द्विवेदी युगीन काव्य कहा जाता है इस युग की साहित्यिक और सांस्कृतिक चेतना को दिशा और दृष्टि प्रदान करने में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी की महत्वपूर्ण भूमिका थी। भाषा, भाव और विषय सभी की दृष्टि से उनके इस अविस्मरणीय योगदान के कारण इस युग को ''द्विवेदी युग'' नाम दिया गया।

साहित्यिक युग का काल निर्धारण निश्चित तिथि के अनुसार करने में कठिनाई आती है। ''सरस्वती'' पत्रिका जिसने साहित्य को आकार और गति प्रदान करने में विशिष्ट भूमिका निभायी, 1900 से प्रकाशित होने लगी थी। सन् 1903 में महावीर प्रसाद द्विवेदी उसके संपादक बने और अपनी रुचियों, प्रवृत्तियों एवं विचारों के अनुसार साहित्य क्षेत्र को प्रभावित करने लगे। यद्यपि 1917 के आस-पास नये ढंग की कविता; जिसे बाद में छायावादी काव्य के नाम से अभिहित किया गया, प्रकाशित होने लगी थी फिर भी उसका यथोचित प्रभाव 1920 के बाद गहराया था और उसी समय महावीर प्रसाद द्विवेदी जी ने भी सरस्वती के संपादन का भार छोड़ा था। महात्मा गांधी का राजनैतिक क्षेत्र में प्रभाव उसी समय, विशेषतः 1920 में लोकमान्य तिलक की मृत्यु के बाद, बढ़ने लगा था। इस नए नेतृत्व का नाता छायावादी कविता से जुड़ जाता है।

3.3.2 महावीर प्रसाद द्विवेदीः युगकर्ता की शक्ति एवं सीमाएँ

महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 1900 से 1920 तक के साहित्यिक युग पर अपने विशिष्ट व्यक्तित्व एवं कृतित्व के फलस्वरूप ऐसी छाप अंकित कर दी कि इस युग को द्विवेदी युग कहा जाता है। आश्चर्य की बात यह है कि महावीर प्रसाद द्विवेदी स्वयं कवि के रूप में अपनी सेवाएं जानते थे, वे अपनी कविता को तुकबंदी का सामान्य प्रयास ही समझते थे और यह भी जानते थे कि कवि की प्रतिभा उनमें नहीं है। उन्होंने गद्य लिखा अनुवाद किए और हिंदी लेखकों, कवियों और चिंतकों को लिखने के लिए प्रोत्साहित किया। कुल मिलाकर उन्होंने छोटी बड़ी गद्य-पद्य रचनाएँ प्रकाशित कीं। वे कहानीकार, उपन्यासकार या नाटककार नहीं थे परन्तु ललित साहित्यकारों को खूब प्रोत्साहन उन्होंने दिया। असल में महावीर प्रसाद द्विवेदी का ध्यान पाठकों को सुरूचिपूर्ण विविध विषयों पर सामग्री हिंदी में उपलब्ध करा देने पर लगा हुआ था। उनका मुख्य कार्य ''सरस्वती'' पत्रिका का सम्पादन था। इस पत्रिका के सम्पादक के रूप में उन्होंने अपने युगीन साहित्य पर अमिट छाप अंकित की। खड़ी बोली गद्य को व्याकरण सम्मत रूप देना, एक मानक भाषा के रूप में उसको आकार देना था। अंग्रेजी, संस्कृत, मराठी, बंगला की अच्छी कृतियों को अनूदित कर उसके माध्यम से हिंदी पाठकों का मानसिक विकास कर उनकी रूचि अधिक पुष्ट करना, समसामयिक, वैज्ञानिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, सामाजिक हलचलों के प्रति उन्हें

जागरूक कर देना, स्वस्थ और विवेकसंपृक्त आलोचना की नींव पुख्ता करना इत्यादि महावीर प्रसाद द्विवेदी के प्रमुख उद्‌देश्य थे। ''सरस्वती'' पत्रिका के द्वारा एक आदर्श, परिश्रमी, समाज सेवा के प्रति प्रतिबद्ध कर्मठ संपादक के रूप में अपनी प्रतिष्ठा को स्थापित कर यह कार्य उन्होंने सिद्ध किया।

भारतेन्दु युग में खड़ी बोली के गद्य का अद्‌भुत विकास हुआ था परन्तु इच्छा और प्रयास के बावजूद काव्य में खड़ी बोली का उपयोग करने में सफलता प्राप्त नहीं हुई थी। महावीर प्रसाद द्विवेदी के अनुशासित निर्देशन में खड़ी बोली में काव्य लिखने की प्रक्रिया वेग के साथ सम्पन्न हुई। यह उस काल में इतना आवश्यक काम था कि सर्जनशील साहित्यिक दृष्टि से गौण महत्व का होने पर भी सर्वसम्मति से उन्हें युग निर्माता स्वीकार किया गया।

3.4 द्विवेदी युग के प्रमुख कवि

द्विवेदी युग का समय लगभग बीस वर्ष का है। इसके अधिकांश कवि लेखक ऐसे हैं जिनकी साहित्यिक सक्रियता मात्र इस बीस वर्ष की अवधि तक सीमित नहीं है। कुछ तो भारतेन्दु युग से साहित्य के क्षेत्र में सक्रिय चले आ रहे थे जैसे श्रीधर पाठक। शेष कवि आगे काफी समय तक सक्रिय रहे। मैथिलीशरण गुप्त और रामनरेश त्रिपाठी भी नयी कविता युग तक जीवित रहे। यद्यपि रचनाकार किस युग का प्रतिनिधित्व करता है इस बात का निर्णय उसके जीवनकाल के आधार पर न करके उसके साहित्य की प्रवृत्तियों के आधार पर किया जाता है। यही कारण है कि 1936 में छपने के बावजूद ''साकेत'' को द्विवेदी युग की रचना माना जाता है।

जैसा कि हम कह चुके हैं द्विवेदी युग की साहित्यिक प्रवृत्तियों के निर्माण में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी की भूमिका युग निर्माता की थी। कवियों ने उनके दिशा निर्देश के अनुशासन में काव्य रचना की थी। किंतु यही एक बात ध्यान देने की है कि इस युग का हर एक रचनाकार उनके अनुशासन में काव्य सृजन नहीं कर रहा था। कुछ कवि ऐसे ही थे जो द्विवेदी मंडल की काव्य भूमि से बाहर रह कर कविता लिख रहे थे। इस तरह इस युग में दो स्पष्ट धाराएँ दिखाई देती हैं- अनुशासन की धारा और स्वच्छंदता की धारा- इन दोनों धाराओं के कवियों को क्रमशः (1) द्विवेदी मंडल के कवि और (2) द्विवेदी मंडल से बाहर के कवि कहा जाता है।

द्विवेदी मंडल के कवियों में मैथिलीशरण गुप्त, हरिऔध, सियाराम शरण गुप्त, रामचरित उपाध्याय आदि आते हैं।

द्विवेदी मंडल के बाहर के कवियों में श्रीधर पाठक, मुकुटधर पांडेय, लोचन प्रसाद पांडेय, रायदेवी प्रसाद पूर्ण, रामनरेश त्रिपाठी आदि प्रमुख हैं। इन कवियों की विशेषताएँ हैं प्रकृति का पर्यवेक्षण, उसकी स्वछंद भंगिमाओं का चित्रण, देश भक्ति, कथागीत का प्रयोग, काव्यभाषा के रूप में खड़ी बोली की स्वीकृति आदि। स्वच्छंदतावादी काव्य की यही धारा आगे चलकर छायावाद में गहरी हो जाती है।

3.4.1 मैथिलीशरण गुप्त

महावीर प्रसाद द्विवेदी युग के शीर्षस्थ कवि हैं मैथिलीशरण गुप्त (1886-1964) हैं। उन्होंने महावीर प्रसाद जी के आशीर्वाद से काव्य क्षेत्र में प्रवेश किया और उनके प्रोत्साहन से कविता लिखी। धीरे-धीरे मैथिलीशरण गुप्त द्विवेदी युगीन काव्य की मर्यादाओं से ऊपर उठकर द्विवेदी युग और उसके बाद आने वाले छायावादी युग के बीच की कड़ी बन गये। प्रथम कविता ''हेमन्त'' 1905 में ''सरस्वती'' में प्रकाशित हुई। 60 वर्ष के लम्बे कवि कर्म में 40 मौलिक, 6 अनूदित ग्रंथ रचे और कुछ फुटकर कविताएँ भी लिखीं। 1909 में प्रकाशित लघु प्रबंध ''रंग में भंग'' राजपूती आन को लेकर लिखी गयी रचना है। फिर महाभारत पर आधारित उनकी रचनाएँ प्रकाशित हुई। ''जयद्रथ वध'' 1910 में प्रकाशित हुआ। प्राचीन

कथाओं को नूतन दृष्टि में देखने की एवं प्राचीन ऐतिहासिक व पौराणिक कथाओं में मूक, उपेक्षित एवं चिन्तन प्रेरक बिंदुओं को पुष्टता, स्पष्टता और रसात्मकता देकर प्रकाशित करने की प्रवृत्ति मैथिलीशरण गुप्त में पायी जाती है। राष्ट्रीय चेतना के उत्कर्ष के लिए महाभारत रामायण की कथाएँ सहायक सिद्ध हुई। ''भारत भारती'' (1914) में मैथिलीशरण गुप्त ने सद्यः स्थिति की अवनत दशा एवं आत्मोद्धार की सामूहिक आकांक्षा व्यक्त की है। वैसे मैथिलीशरण गुप्त का समूचा चिन्तन इस चिन्ता को लेकर रहाः ''हम कौन थे, क्या हो गये और क्या होंगे अभी/आओ विचारें आज मिलकर ये समस्याएँ सभी'' उनके पौराणिक एवं ऐतिहासिक काव्यों के मूल में स्वदेश चिन्तन का यही सरोकार है। इसीलिए वे भारतीय संस्कृति की गरिमा का बोध देने वाले ओजस्वी प्रसंगों, विचारों और मूल्यों का संस्कार करना चाहते हैं। द्विवेदी युगीन मानवतावादी दृष्टि मैथिलीशरण गुप्त में सशक्त रूप में व्यंजित होती हैं। उनके राम भी मानवसेवा के लिए अवतरित होते हैं। साकेत में राम सीता से कहते हैं- मैं आया उनके हेतु कि जो शापित हैं, जो विवश, बलहीन, दीन शापित हैं। ''किसान'' जैसा प्रबंध काव्य देश के शाषित वर्ग के प्रति उनका लगाव व्यक्त करता है। (1919)। मैथिलीशरण गुप्त का भारतीय नारी विषयक सहानुभूतिशील और उदार दृष्टिकोण द्विवेदी युग के बाद विकसित होता गया। एक ओर उन्होंने अमर पंक्तियां लिखीं- ''अबला जीवन हाय। तुम्हारी यही कहानी। आंचल में है दूध और आँखों में है पानी।'' दूसरी ओर उर्मिला, सीमा, यशोधरा, विधता जैसी नारियों का विकसित व्यक्तित्व प्रस्तुत कर नारी के संबंध में गौरव भावना व्यक्त की। मैथिलीशरण गुप्त का कवि 1920 के बाद गांधीवादी कर्मठ युग में विकसित हुआ। हिंदी खड़ी बोली को काव्यभाषा का दर्जा देने के सफल प्रयासों में मैथिलीशरण गुप्त का हिस्सा महत्वपूर्ण है। खड़ी बोली को प्रसाद युग संयुक्त, सरस और प्रवाहमय काव्यभाषा रूप मैथिलीशरण गुप्त की कविता में प्रचुर रूप में प्राप्त होता है।

3.4.2 अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

द्विवेदी युग के दूसरे महत्वपूर्ण कवि अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' हैं। (1865-1947)। मैथिलीशरण गुप्त रामभक्त थे तो हरिऔध कृष्ण के व्यक्तित्व के गायक थे, सुधारवादी आंदोलन से प्रभावित हरिऔध ने राधा को देश सेविका बनाया ('प्रिय -प्रवास' 1914)। उनके काव्य 'प्रेमाम्बु वारिधि' (1990), 'प्रेम प्रपंच' (1900), 'प्रेमाम्बु पर्यवेक्षण' (1901), 'प्रेमाम्बु-प्रवाह' (1901) के आलम्बन कृष्ण हैं। कृष्ण की महिमा, उनका सौंदर्य, गोपियों की विरह वेदना मुक्तक शैली में की गयी है। आलोच्यकाल में हरिऔध का महत्वपूर्ण प्रबंध काव्य ''प्रिय प्रवास'' प्रकाशित हुआ। 17 सर्गों में विभाजित इस महाकाव्य के नायक कृष्ण हैं। भागवत पुराण पर आधारित कृष्ण जीवन के प्रसंगों को आवश्यकतानुसार परिवर्तित किया गया है। राधा ने पवन को दूतिका बनाकर संदेश भेजा है। राधा-कृष्ण संबंधों को द्विवेदी युगीन नैतिक और आदर्शवादी मूल्यों के प्रकाश में समाज सेवा वृत्ति के रूप में चित्रित किया गया है। राधा कृष्ण के सामीप्य का त्याग करने को तैयार है उनका उद्देश्य है-

''प्यारे जीवें जग हित करें गेह चाहें न आवें।''

प्रेम के उदात्त मानवीय रूपों की अभिव्यक्ति प्रिय प्रवास में की गयी है। छंदों में रचे इस महाकाव्य में खड़ी बोली के विविध रसानुकूल रूप मिलते हैं। भाषा में प्रसाद गुण है और प्रवाह है। हरिऔध जी ने ''रसकलश'' में नायिकाओं के नये रूपों की जो कल्पना की वह द्रष्टव्य है। उन्होंने परंपरागत श्रृंगारपरक नायिका-वर्गीकरण के स्थान पर देश-प्रेमिका, जन्म-भूमि प्रेमिका, लोक-सेविका, धर्म-सेविका इत्यादि नारी के नये रूपों की उद्भावना की। यह नारी के प्रति गौरव-पूर्ण और बराबरी के दृष्टिकोण का द्योतन करती है।

3.4.3 रामनरेश त्रिपाठी

त्रिपाठी जी द्विवेदी युग में स्वच्छंदवादी धारा के प्रमुख कवि हैं। उन्होंने काव्य रचना की शुरूआत ब्रजभाषा में की। खड़ी-बोली में लिखी हुई पहली कविता ''जन्म-भूमि भारत'' में छपी। देश के प्रति गौरव और अभिमान की भावना इस कविता में व्यक्त हुई है।

त्रिपाठी जी का प्रथम काव्य ग्रंथ ''मिलन'' 1917 में प्रकाशित हुआ। काव्य का प्रमुख भाव प्रेम है। यहाँ पति-पत्नी का प्रेम और दोनों का देश के प्रति और देश के लिए बलिदान प्रस्तुत किया गया है। यही उनका लक्ष्य है। काव्य अन्त तक अपनी सरलता, प्रवाह और प्रसाद के कारण पाठक को बाँधे रखता है। विजया कहती है-

प्रेम स्वर्ग है/ स्वर्ग प्रेम है/ प्रेम अशंक अशोक
ईश्वर का प्रतिबिंब प्रेम है/ प्रेम सदय आलोक

व्यक्ति, समाज और राष्ट्र तीनों इकाइयों के बीच प्रेम का सूत्र है और क्रमशः विस्तृत, व्यापक और उदात्त बनता जाता है। 1920 में प्रकाशित दूसरे प्रबंध काव्य ''पथिक'' ने राम नरेश त्रिपाठी की कीर्ति को और व्यापक किया, इसमें प्रकृति वर्णन और प्रेम भावना की व्यंजना दुग्धशर्करा संयोग है। यह काव्य विलक्षण प्रभावकारी है। राष्ट्रीयता की भावना ''मिलन'' की भाँति इस में भी गुँथी हुई है। राम नरेश त्रिपाठी प्रकृति के प्रेमी कवि हैं। सागर की उभरती लहरों का ''पथिक'' में वर्णन देखिएः

रेणु स्वर्ण कण सदृश देखकर तट पर ललचाती है।
बड़ी दूर से चल कर लहरें मौज भरी आती हैं।
चूम-चूम निज देश का चरण वह नाच-नाच गाती है।
यह शोभा यह हर्ष कहाँ आँखे जग में पाती हैं।

3.4.4 प. नाथूराम शंकर शर्मा

पं. नाथूराम शंकर शर्मा को बचपन से कविता लिखने का शौक था। अनेक छंदों में उन्होंने कविताएँ लिखी हैं। समस्यापूर्ति में उन्हें महारत हासिल थी। शृंगारपरक कविताओं में विशेष रस लेते थे। नवीन जी ने उनके बारे में लिखा है, ''वे शब्दों के स्वामी, भाषा के अधीश्वर, मुहावरों के सिरजनहार और साहित्य के अखाड़े के अक्खड़ पहलवान थे। पूज्य शंकरजी, में शब्द निर्माण की क्षमता-असाधारण रूप से विद्यमान थी'', उनका छंदों का ज्ञान जबर्दस्त था और अनेक छंदों में कविता रच सकते थे। अनेक अनामिक छंदों का नामकरण उन्होंने किया। प्रकाशित कृतियाँ हैं- 'अनुराग रत्न', 'शंकर', 'सरोज', 'लोकमान्य तिलक'। वे उर्दू कविता के प्रेमी थे और स्वयं भी उर्दू में कविता लिखते थे- युगनी वातावरण के प्रभाव में उन्होंने देशभक्ति परक कविता भी लिखी।

3.4.5 सियाराम शरण गुप्त

गुप्त जी कवि, निबंधकार एवं उपन्यासकार के रूप में प्रसिद्ध थे, कविता उन्होंने कम लिखी। परंतु थोड़ी सी ही रचनाओं में उनके संवेदनशील हृदय का प्रकटीकरण हो गया है। ''मौर्य विजय'' तथा ''उन्मुक्त'' उनका प्रसिद्ध खंडकाव्य है। ''मौर्य विजय'' तीन सर्गों में सेल्युकस के आक्रमण और चंद्रगुप्त के विजय की कथा प्रस्तुत करता है। सियाराम शरण गुप्त गांधीवादी विचारधारा के कवि हैं। ''उन्मुक्त'' में प्रथम विश्व युद्ध के नर संहार के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त हुई है।

रूप नारायण पांडेय ने भी रसात्मक बोध से युक्त कविताएँ लिखीं। उनकी ''दलितकुसुम'' कविता प्रभावपूर्ण और करूण रसात्मक है। यह कविता बहुत लोकप्रिय हुई थी। ''पराग'' संग्रह में प्रकाशित कविताओं में ''वन-विर्हगम'' कविता सरस है। **ठाकुर गोपालशरण सिंह** की सरल शैली में लिखी कविता सरसता, सादगी और चित्रमयता के कारण

लोकप्रिय थी। ग्राम जीवन के चित्र विशेष प्रभावपूर्ण बने हैं। पंडित गयाप्रसाद शुक्ल ''सनेही'' ने बहुत सी कविताएँ ''त्रिशुल'' नाम से प्रकाशित की, ''प्रेमपचीसी, ''कुसुमांजलि'', कृषकक्रन्दन'', ''करुणा कादम्बिनी'' उनके प्रसिद्ध काव्य संग्रह हैं। ''उक्ति का अनूठापन'', शब्द प्रयोग का चमत्कार'', छंद की बंधी हुई गति और कल्पना की रूपसर्जिनी विशेषता इनके काव्य के गुण हैं। श्री मन्नन द्विवेदी की कविता में मातृभूमि के प्रति अभिमान, अतीत गौरव, वर्तमान पतनावस्था का दुख आदि विषय अभिव्यक्त हुए हैं। **पं. रामचरित चिंतामणि** नामक 25 सर्गों का एक काव्य लिखा। कथानक का आधार रामचरित मानस एवं वाल्मिकि रामायण है। यह काव्य पाठकों द्वारा उतना स्वीकृत नहीं हो सका। **पं रामचंद्र शुक्ल** ने भी द्विवेदी युग में कविताएँ लिखीं: वे प्रकृति-प्रेमी थे, काव्य के मर्मज्ञ विद्वान थे। प्रकृति के वस्तुनिष्ठ चित्र उकेरने में उन्हें विशेष प्रसन्नता होती थी। आगे चलकर उनकी रुचि आलोचना एवं वैचारिक गद्य में अधिक हुई। शुक्ल जी का चित्रकार शब्दों के माध्यम से काव्य में प्रकृति चित्र उभारता है।

द्विवेदी युग में बड़ी संख्या में कवि ब्रज और खड़ी बोली में कविता लिखते थे। सरस्वती के अतिरिक्त अन्य पत्रिकाओं में भी कवि लिखते थे। पद्मलाल पन्नालाल बख्शी, पं. शिवकुमार त्रिपाठी, माखनलाल चतुर्वेदी (इनका कवि-व्यक्तित्व द्विवेदी युग के बाद अधिक ठोस रूप में उभरा) ठाकुर जगमोहन सिंह, कामता प्रसाद गुरू थे। अन्य उल्लेखनीय नाम, जैसे प्रसाद, निराला और पंत भी काव्य का श्रीगणेश द्विवेदी युग में कर चुके थे परंतु युग परिवर्तन का श्रेय इनके कृतित्व को जाता है। ये द्विवेदी युग समाप्त होते ही साहित्याकाश में चमकने लगे। हरिऔध, रामनरेश त्रिपाठी इत्यादि कवियों ने द्विवेदी युग के बाद भी ठोस रचनाएँ दी।

बोध प्रश्न 1

1. निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर ''हाँ'' या ''नहीं'' पर (✓) लगाकर दीजिए-

   क) द्विवेदी युग का आरंभ भारतेन्दु युग की प्रतिक्रिया स्वरूप हुआ। (हाँ / नहीं)

   ख) हिंदी साहित्य के आधुनिककाल की शुरूआत द्विवेदी युग से होती है। (हाँ / नहीं)

   ग) अंग्रेजी शिक्षा के प्रचार-प्रसार के कारण हमारा परिचय पश्चिम के ज्ञान और विचारों से हुआ। (हाँ / नहीं)

   घ) भारतेन्दु युग में विकसित चेतना को विस्तार और प्रसार द्विवेदी युग में मिला। (हाँ / नहीं)

2. निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर ज्यादा से ज्यादा चार पाँच शब्दों में दीजिए।

   क) द्विवेदी युग का नामकरण किसके नाम पर हुआ है?

   ....

   ख) द्विवेदी युग का समय क्या है?

   ....

   ग) ''सरस्वती'' के सुप्रसिद्ध संपादक कौन थे?

   ....

   घ) द्विवेदी युग से पहले कौन सा युग था?

   ....

ङ) द्विवेदी युग के बाद कौन सा युग आया?

....

3. द्विवेदी युगीन कविता की दो धाराएं कौन सी हैं? दोनों के चार-चार कवियों के नाम बताइए।

....

....

....

....

....

3.5 द्विवेदी युगीन काव्य की साहित्यिक प्रवृत्तियाँ

3.5.1 काव्य विषयों की व्यापकता

गद्य भाषा और पद्य भाषा के संबंध में उदार दृष्टि रखने वाले महावीर प्रसाद द्विवेदी काव्य -विषयों के बारे में भी पर्याप्त उदार थे। समसामयिक जीवन की स्थिति और गति के प्रति सजग होने के कारण काव्य-विषय के संबंध में भी वे घिसीपिटी, पुरानी, दकियानूसी विधि-निर्वाह के खिलाफ थे। इस संबंध में द्विवेद

''कविता का विषय मनोरंजन एवं उपदेश-जनक होना चाहिए। यमुना के किनारे केलि कौतूहल का अद्भुत-अद्भुत वर्णन बहुत हो चुका। न परकीयाओं पर प्रबंध लिखने की अब कोई आवश्यकता है और न स्वकीयाओं के ''गतागत'' की पहेली बुझाने की। चींटी से लेकर हाथी पर्यन्त, भिक्षुक से लेकर राजा पर्यन्त मनुष्य, बिन्दु से लेकर समुद्र पर्यन्त जल, अनंत आकाश, अनंत पृथ्वी, अनंत पर्वत - सभी पर कविता हो सकती है। सभी से उपदेश मिल सकता है और सभी के वर्णन से मनोरंजन मिल सकता है। यदि ''मेघनाथ वध'' अथवा ''यशवंतराव महाकाव्य'' वे नहीं लिख सकते तो उनको ईश्वर की निस्सीम सृष्टि में से छोटे-छोटे सजीव अथवा निर्जीव पदार्थों को चुनकर उन्हीं पर छोटी-छोटी कविताएँ करनी चाहिए। कवि को यदि बड़ी न हो तो छोटी ही स्वतंत्र कविता करनी चाहिए क्योंकि इस प्रकार की कविताओं का हिंदी में अभाव है।

उपर्युक्त उद्धरण को ध्यान से पढ़ा जाये तो दिखाई देगा कि द्विवेदी जी काव्य को सीमित दायरे से आगे बढ़ाकर जीवन के विविध रूपों और विषयों से संयुक्त करना चाहते थे, काव्य के लिए विषय इस दुनिया में कोई भी चल सकता है और काव्य का आकार छोटा या बड़ा कैसा भी हो सकता है, इसी से हिंदी में मौजूद अभाव की पूर्ति की बात भी वे कह देते हैं।

इस काल में कविता संकीर्ण काव्य विषयों से छूट कर मानव जीवन की लगभग सभी समस्याओं का स्पर्श करने लगती है। कवियों ने ऐतिहासिक, पौराणिक कथानकों के चुनाव और उनकी महत्ता पर अपने आपको केन्द्रित किया जैसे ''प्रिय प्रवास'',''हल्दी घाटी'', ''जयद्रथ वध'' आदि। पर इनका उद्‌देश्य अतीत के माध्यम से वर्तमान की प्रेरणा देता था। दूसरी प्रमुख बात यह हुई कि कवि एकांतिक प्रेम की धारा से निकल कर गृहस्थ जीवन की महिमा का आख्यान करने लगे। तीसरे, नारी के प्रति भोगवादी दृष्टि से विमुख होकर इन कवियों ने उसे प्रेरणा शक्ति के रूप में नया व्यक्तित्व दिया। उपेक्षित नारी पात्रों के उद्धार का अभियान इस युग की कविता इसी दृष्टिकोण से चलाती है। उर्मिला, यशोधरा, विष्णुप्रिया, मांडवी आदि के प्रति तो हमारी दृष्टि बदली ही, राधा और सीता को भी आधुनिक आंदोलनों की चेतना से नया व्यक्तित्व मिलता है।

मध्ययुगीन अलौकिक और अध्यात्म को पीछे धकेल कर यह कविता लौकिकता की भूमि पर दृढ़ता के साथ प्रतिष्ठित हुई और इस लौकिकता में मानवीयता और आदर्शवादी उदारता को प्रश्रय मिला।

यह काव्य नैतिक और आदर्शवादी मूल्यों के समर्थन में संघर्ष करता मिलता है। जातीय अस्मिता और लोकसेवा की इन भावनाओं के पीछे निश्चय ही नव-जागरण की प्रेरणा प्रमुख थी। मूल्य कमाए जाते हैं, जातियाँ उनके लिए अपने प्राणदान देकर उनकी रक्षा करती हैं। इसलिए इस कविता को मात्र पुनरूत्थानवादी कविता कह कर नहीं टाला जा सकता क्योंकि कवि अतीत से प्रेरणा अवश्य पाते हैं किन्तु वे अतीतोपजीवी नहीं है चाहे वे मैथिलीशरण गुप्त हो अथवा हरिऔध या नाथूराम शंकर शर्मा या गोपाल शरण नेपाली या गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही'।

अभिजात्य और सामंतवादी स्थितियों के प्रति तिरस्कार का भाव अपनाती हुई यह कविता एक ऐसे मनुष्य को केन्द्र में लाना चाहती है जो अलगाववाद, जातिवाद, की सीमाओं से निकल कर देश की अखंडता और स्वाधीनता के लिए प्राणपण से संघर्ष करता है।

अब कविता का उद्देश्य हो गया लोकमंगल और लोक रक्षा। कविता के इन उद्देश्यों की अभिव्यक्ति मैथिलीशरण गुप्त के पूरे सृजन में होती है। इस दृष्टि से उन्हें युग का प्रतिनिधि कवि माना जा सकता है।

3.5.2 राष्ट्रीयता : जागरण, सुधार और देशभक्ति

द्विवेदी युग की कविता का केंद्रीय भाव राष्ट्रीयता है। यह राष्ट्रीयता अनेक रूपों मे प्रकट होती है। भारतेन्द युगीन राजभक्ति का स्वर तो समाप्त हुआ ही था। परायी सत्ता का विरोध खुलकर प्रकट न हो सकता था तो परोक्ष रूप में प्रकट होने लगा। पौराणिक, ऐतिहासिक और काल्पनिक कथाओं में ऐसे प्रसंगों का चित्रण किया जाता था जिनसे पाठक देष, समाज, अस्मिता, स्वातंत्र्य, वीरता इत्यादि के बारे में सोचने लगे। शारीरिक परिश्रम का महत्व, उच्च मूल्यो के लिए बलिदान की भावना, सादगीपूर्ण जीवन, स्वाभिमान की रक्षा इत्यादि का संस्कार करने की दृष्टि से पौराणिक या ऐतिहासिक घटनाओं, प्रंसगों, व्यक्तियों का काव्य में प्रयोग किया जाने लगा। साम्प्रदायिक वैमनस्य को मिटाने के लिए सभी धर्मों के मूल तत्वों की साम्यता पर बल दिया जाने लगा। सांस्कृतिक जागरण के लिए पौराणिक एवं ऐतिहासिक प्रसंगों का उपयोग करते हुए काव्य लिखे गये। मूल मंत्र रहा -''एक हृदय ही भारत जननी''। भारतीय राजाओं की विजय के प्रसंगों को बहुत महत्व मिला।

राष्ट्रीयता इस युग की प्रमुख प्रेरणा शक्ति है। किंतु इस राष्ट्रीयता को परिभाषित करना जरूरी है। राष्ट्रीयता का अर्थ है प्रगतिशील जीवन मूल्यो की स्वीकृति, रीतिवादी रूढ़ियों पर प्रहार, नायक-नायिका भेद वाली चमत्कारवादी कविता का खंडन। सामाजिक चेतना के विकास और परिष्कार के लिए, आवश्यक कार्य था श्रृंगारिक दृष्टिकोण से परिवर्तन, स्वदेशी, स्वभाषा और स्वजाति गौरव का गान, भारतीय सामंतवाद पर प्रहार। भारतीय नवजागरण ने सबसे बड़ा काम यही किया कि दरबारी साहित्य की परंपरा को समाप्त करते हुए लोक जागरणवादी परंपरा की प्रतिष्ठा की। लोक जागरण का अर्थ था कविता में साधारण मनुष्य की आशाओं और आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति। 'पथिक' में रामनरेश त्रिपाठी इसी मनोभावना को व्यक्त कर रहे हैं।

> तुम अपने सुख के स्वराज्य के हो न पूर्ण अधिकारी
> यह मनुष्यता पर कंलक है, हे प्रिय बंधु तुम्हारी
> अपना शासन आप करो तुम यही शांति है सुख है
> पराधीनता से बढ़ जग में नहीं दूसरा दुःख है।

द्विवेदी युगीन कविता की राष्ट्रीयता साम्राज्यवादी शोषण के हर कुचक्र का पर्दाफाश करती है इसलिए राष्ट्रीय भावना में युद्ध आक्रोश की प्रवृति भी बढ़ जाती है। जयद्रथ वध में गुप्त जी लिखते हैं-

अधिकार खो कर बैठ रहना यह महा दुष्कर्म है।
न्यायार्थ अपने बंधु को भी दंड देना धर्म है।।

इस राष्ट्रीयता की प्रबल अभिव्यक्ति है नारी जागरण की चेतना यशोधरा पुरुष शासित समाज पर प्रश्न चिन्ह लगाती है -

''मुक्ति मार्ग की बाधा नारी
फिर उसको क्या गति है
पर मैं उनसे पूछूँ जिनको
मुझसे आज विरति है'
-''यशोधरा''

देशभक्ति की भावना और देश के गौरव की रक्षा इस राष्ट्रीयता का वृहत्तर भाव है उदाहरणस्वरूप गुप्त जी की पंक्तियाँ हैं-

जिसको न निज गौरव तथा निज देश का अभिमान है
वह नर नहीं है पशु निरा है और मृतक समान है।

इस प्रकार यह राष्ट्रीयता मानवमुक्ति और मानवतावाद का पर्याय है इसकी दिशा विश्व प्रेम की ओर है और इसका विश्वास मनुष्य की जय यात्रा में है।

3.5.3 उपेक्षितों और सामान्य व्यक्तियों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण

इस काल में ऐतिहासिक पौराणिक विषयों के संबंध में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन यह हुआ कि अब नायक या नायिकाएँ ईश्वरीय अवतार में न रहकर कर्म को महत्व देने वाले, मानव की सेवा के हित विश्व में अवतरित होने वाले, कर्म को महत्व देने वाले मनुष्य बन गये। यह वैज्ञानिक चेतना और आधुनिक विचारों का परिणाम था। ये चरित्र लोक मंगल की प्रेरणा से परिचालित थे। अतः इनकी दृष्टि दलितों, पीड़ितों, उपेक्षितों और शोषितों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण थी। हजारों वर्षों से पुरुष की दासता से पीड़ित, उपेक्षित, शोषण की शिकार, अपमान और दमन की भाजन भारतीय नारी द्विवेदी युगीन मानवीय दृष्टि का प्रमुख केन्द्र रही। अब वह न केवल तर्कपूर्ण संवाद ही करने लगी बल्कि जीवन की समस्याओं के समाधान में सक्रिय भाग लेने लगी मैथिलीशरण गुप्त को तो उपेक्षितों का (उपेक्षित नारियों के) कवि ही कहा गया है। करूणा और सहानुभूति की कवि दृष्टि किसानों, मजदूरों भिक्षुकों के प्रति उन्मुख हुई। पीड़ित और उपेक्षित लोगों का शोषण करने वालों के प्रति घृणा, तिरस्कार, क्रोध और क्षोभ की भावना प्रकट की जाने लगी। जमींदार, उच्च ब्राह्मण वर्ग, पूँजीपति धनिक वर्ग, महाजन, पुलिस वर्ग, खलनायक के रूप मे चित्रित हुए। ''किसान'' 1915 (मैथिलीरण गुप्त) ''कृषक क्रन्दन'' (गयाप्रसाद सनेही) ''अनाथ'' 1917 (सियाराम शरण गुप्त) इत्यादि काव्य इस बात मत के साक्षी हैं। यह समूचा विचार परिवर्तन युगीन मानवतावादी दृष्टि के विस्तार का परिणाम था। समता, बंधुता और स्वातंत्र्य पर आधारित मानवतावादी दृष्टि हर प्रकार के शोषण, पाखंड, असत्य, छल-छद्म, ढोंग और हिंसा के विरोध में स्वर बुलन्द कर रही थी। इसमें द्विवेदी युगीन हिंदी कवियों का स्वर प्रबल था।

सामान्य के प्रति भावात्मक दृष्टिपात की यह प्रवृत्ति मूलतः भारतेन्दु की कविता से चलकर द्विवेदी युग में पहुँचीं है। कहना चाहिए यह उसी प्रवृत्ति का क्रमिक विकास है मध्ययुगीन कविता कुछ क्षेत्रों तक सीमित थी और विशेष रूप से रीतिकाल की कविता तो कुंजों, कूलों और कछारों में सीमित नायिकाओं की चांदनी रातों में उलझ कर रह गयी थी। इस युग

के कवि कविता को उस वातावरण से निकाल कर जीवन और जगत की वास्तविकता के क्षेत्र में लाए। इन कवियों ने परिचित वस्तुओं में सौंदर्य देखने वाली दृष्टि को पैदा किया ज्वार-बाजरा के खेत, किसान, खेत निहारती हुई युवतियों और सामान्य मनुष्यों का रोजी-रोटी के लिए संघर्ष इसमें जगह-जगह व्यक्त हुआ। वस्तुतः यह कविता उस भूमिका का निर्माण कर रही थी जिसे बाद मे प्रगतिवादी कवियों ने ग्रामीण नयन से देख कर विस्तृत किया द्विवेदी युग की इस कविता में ऐसे सहज चित्रों के रूप देखिए -

कोकिल का आलाप पपीहे की बिरहा कुल बानी।
तोता मैना का विवाद बुलबुल की प्रेम कहानी।
गाती मोहनगीत तरूणियाँ खेत आखेद निरातीं।
क्या ये क्षण भर को न किसी के मन का कष्ट भुलाती।।

-पथिक

माखन लाल चतुर्वेदी ने संपूर्ण राष्ट्र का सच्चा स्वरूप हरे-भरे खेतों, श्याम चट्टानों, सुंगधित झाड़ियों, कदली वनों, नीम, कदम्ब के वृक्षों और गिरि मैदानों में भागती नदियों में देखा है। यह वास्तविक पृष्ठभूमि है जो देश के संघर्षमय जीवन को प्रस्तुत करती है यथा-

''धरा यह तरबूज है दो फांक कर दे
चढ़ा दे स्वातंत्र्य प्रभु पर अमर पानी
विश्व कह दे तू जवानी है जवानी''।

फूल, पत्ती, नदी सब राष्ट्रीयता के सामान्य रंग में रंगे हैं। स्वाधीनता के लिए जन-जन में जो आकांक्षा पैदा हुई थी यह कविता उसकी अभिव्यक्ति हर कोण से करती है।

3.5.4 स्वच्छंदतावादी काव्य के आरंभिक संकेत

छायावाद में जिन स्वच्छंदतावादी प्रवत्तियों का सूक्ष्म और गहन विस्तार हुआ उनके आरंभिक बीज द्विवेदी युग की स्वच्छंदतावादी कविता में स्पष्टता से देखे जा सकते हैं।

कविता में व्यापक रूप से स्वच्छंदतावाद को प्रतिष्ठित करने का श्रेय पाठक को है। उन्होंने अपने को स्वच्छंद कवि ही घोषित किया और मुक्त जीवन के प्रति लगाव की एक भूमिका तैयार की, अंग्रेजी कवि गोल्डस्मिथ के कई प्रबंध काव्यों का अनुवाद किया तथा मौलिक रचनाएँ की इन मौलिक रचनाओं में प्रसिद्ध ''जगत सचाई सार''। इस कविता की दो पंक्तियाँ स्वच्छंदतावाद और पुनर्जागरण का मूल मंत्र मानी जाती है-

जगत है सच्चा तनिक न कच्चा
समझो बच्चा इसका भेद।

यह पंक्ति जगत को माया और प्रपंच वाली विचारधारा का खंडन करने के साथ ही जीवन यथार्थ और कर्म सौंदर्य को गति देने वाली प्रगतिशील विचारधारा का समर्थन भी करती। श्रीधर पाठक की इसी स्वच्छंदतावादी धारा में राय देवीप्रसाद 'पूर्ण, मुकुटधर पांडेय, लोचन प्रसाद पांडेय और रूपनारायण पांडेय आदि रचनाकार रहे थे। स्वच्छंदतावादी प्रवृत्तियों का उल्लेखनीय विस्फोट पंडित रामचंद्र शुक्ल के ''मधुस्त्रोत'' और रामनरेश त्रिपाठी के ''पथिक'', ''मिलन'' और ''स्वप्न'' जैसे काव्यों में मिलता है। यहाँ स्वच्छंदतावाद का सहज उल्लास सर्जनात्मक खड़ी बोली मे फूटता है और प्रकृति वैभव के रंग-बिरंगे चित्र संश्लिष्ट रूप से सामने आते हैं। ''पथिक'' मे चांदनी का एक चित्र है-

मध्य निशा, निर्मल निरभ्र नभ, दिशा विराव-विहीना
विलासित था अम्बर के उर पर अद्‌भुत एक नगीना।
उसकी विषाद प्रभा सर, निझर तृणलतिका, द्रुम दल में।
करती थी विश्राम,परम अभिराम निषीथ कमल में।

स्वच्छंदतावादी धारा के इन कवियों ने लावनी, ख्याल और लोक साहित्य की भावभूमि का भी स्पर्श किया। इतना ही नहीं लोक साहित्य के कवि- अभिप्रायों को कविता में स्थान भी दिया, जैसे ''पथिक'' में प्रेमी का पथिक वेष धारण करना और अंत में अब तक मृत समझी जाने वाली पिया से योगी की कुटी पर भेंट। इन लोक अभिप्रायों को नव-विकसित राष्ट्रीयता के भावों में गूँथ कर जीवन का एक व्यापक चित्र प्रस्तत किया है। इस प्रकार रचना प्रक्रिया और रचना स्वभाव दोनों स्तरों पर द्विवेदी युगीन कविता मे स्वच्छंदतावाद को अभिव्यक्ति मिली है। हरिऔध और गुप्त जी जैसे अनुशासन की धारा मे चलने वाले कवियों में भी सवैया-धनाक्षरी पद्धति तथा गीत-प्रगति पद्धति के माध्यम से आत्माभिव्यक्ति प्रधान स्वच्छंदतावादी प्रवृतियों का अंकुरण दृष्टिगत होता है। इस दृष्टि का उदाहरण 'यशोधरा' और 'साकेत' के गीतों में स्पष्टतः देखा जा सकता है।

चरित्रों में भी स्वच्छंदतावाद की सृष्टि हुई जैसे ''प्रिय प्रवास'' की राधा परंपरागत विरही दीखती है। वह अपने निजी दुख को सारे समाज के दुख में विलीन करती हुइ समाज सेवा का संकल्प धारण करती है। 'साकेत' में गुप्त जी उर्मिला और सीता के चरित्रों में भी ऐसा ही परिवर्तन करते हैं ऐसी ही स्थिति यशोधरा की है जैसे-

मेरे दुख में भरा विश्व सुख
क्यों न भरूँ फिर मैं हामी
बुद्धं शरणं संघं शरणं
धम्मम् शरणं गच्छामि

शताब्दियों से चले आते हुए परंपरागत चरित्रों में द्विवेदी युग के कवियों ने नई विचार भंगिमाओं की महत्व प्रतिष्ठा की है। एक ओर वे चरित्र परिवर्तन करते हैं दूसरी ओर समसामयिक आंदोलनों में उनकी सक्रिय हिस्सेदारी भी दिखाते हैं जैसे 'साकेत' में सीता का सूत कातना-

''तुम अर्द्ध नग्न क्यों रहो अशेष समय में
आओ हम कातें बुनें मिलन की लय में''

तत्कालीन नव जागरण के सभी सुधारआंदोलनों की प्रतिध्वनि यहाँ तक कि किसान मजदूर आंदोलनों की प्रतिध्वनि इस कविता में सुनाई देती है। कवि ने यहाँ निर्मम होकर कहा है-

''संदेश यहाँ मैं नहीं स्वर्ग का लाया
इस भूतल को ही स्वर्ग बनाने आया''

यह धरती अपनी महिमा में स्वर्ग से बड़ी है। यह द्विवेदी युगीन कविता का सबसे बड़ा स्वच्छंदतावादी संदेश है।

3.5.5 द्विवेदी युगीन काव्य में प्रकृति का स्थान

द्विवेदी युगीन कविता में आकर प्रकृति के प्रति कवि के दृष्टिकोण मे नवीनता दिखाई देती है। मध्यकाल की कविता में प्रकृति को मानवीय भावों के उद्‌दीपन के रूप में प्रस्तुत किया जाता था। किन्तु आधुनिक युग में इस दृष्टिकोण में बदलाव आया। द्विवेदी युग में प्रकृति को विशिष्ट भौगोलिक सीमाओं में देखने की प्रवृत्ति हिंदी कविता के लिए सर्वथा नई बात है। इसलिए इस काल में प्रकृति चित्रण में स्थानीयता का पुट एक प्रवृत्ति के रूप में उभरता है। कवियों ने किसी न किसी प्रदेश अथवा दृश्य के प्रति कविता लिखी है। श्रीधर पाठक ने काश्मीर के सौंदर्य पर मुग्ध होकर ''काश्मीर सुषमा'' नामक लंबी कविता लिखी। रामनरेश त्रिपाठी ने दक्षिण यात्रा से प्रेरणा पायी और ''पथिक'' में वहाँ की प्रकृति का मार्मिक वर्णन किया। माखनलाल चतुर्वेदी ने नर्मदा प्रदेश के जीवंत चित्र अपनी कविता में खींचें । राय देवीप्रसाद ''पूर्ण'' ने अपनी कविता ''अमलतास'' में ग्रीष्म की दोपहरी और आम्र मंजरी के चित्र खींचे। आलंबन रूप में प्रकृति के चित्रण की शुरूआत इस युग की

महत्वपूर्ण घटना है। इस प्रकृति चित्रण में जीवन के प्रति एक विस्तृत दृष्टिकोण मिलता है। कवि की स्वच्छंद कल्पना यहाँ खुल जाती है नीचे दो उदाहरण दिए जा रहे हैं पहला उदाहरण श्रीधर पाठक की ''काश्मीर सुषमा'' नामक लंबी कविता से है -

''प्रकृति यहाँ एकांत बैठि निज रूप निहारति
पल-पल पलटति भेष छनिक छबि छिन-छिन धारति''

दूसरा उदाहरण गुप्त जी की एक मुक्तक कविता से है जिसमें देश की कल्पना भारत माता के रूप में की गई है-

''नीलांबर परिधान हरित पट पर सुंदर है
सूर्य-चंद्र युग मुकुट मेखला रत्नाकर है
नदियां प्रेम प्रवाह फूल तारे मंडन है
बंदीजन खगवृंद शेषफल सिंहासन है''

प्रकृति चित्रण में मातृभूमि की वंदना का यह स्वर न केवल एक सजीव बिंब उपस्थित करता है बल्कि भौगोलिक, पौराणिक और सांस्कृतिक परिदृश्य को भी रूपकों के माध्यम से प्रस्तुत करता है। धरती की हरियाली और आकाश की नीलिमा का जो चित्र उपस्थित है वह भारत माता है जो हरे पर नीला परिधान पहने है। चित्र की इस विशाल पृष्ठभूमि में भारत की विराटता को प्रस्तुत किया गया है। उस समय की राष्ट्रीय भावना को प्रस्तुत करने की भी यह एक पद्धति है जिसे लगभग सभी कवियों ने किसी न किसी रूप से अपनाया है। बड़ी कविताओं में भी प्रकृति के रूप के स्वतंत्र दृश्य देखने को मिल जाते हैं।

सामाजिक स्थितियों की घुटन से मुक्त होकर प्रकृति में तदाकार हो जाने के दृश्य भी इस युग के कवियों ने खीचे हैं जैसे-

''यह इच्छा है नदी और नालों का रूप धरूँगा
गाता हुआ गीत मस्ती के पर्वत से उतरूँगा।

3.5.6 उदात्त प्रेम की संयत अभिव्यक्ति

हिंदी काव्य के रीतियुगीन संस्कारों से भारतेन्दु युगीन कवि पिंड नहीं छुड़ा पाये थे। यह कार्य सशक्त रूप में महावीर प्रसाद द्विवेदी जी ने किया। श्रृंगार कवि चेतना को उन्होंने जीवन के विविध पक्षों, वस्तुओं, एवं स्थितियों से जोड़ा। सिद्धांततया वे यह मानते थे कि काव्य के लिए अविषय कुछ भी नहीं है। बशर्ते कि कवि के पास अच्छी प्रतिभा हो। श्रृंगार को नारी के नखशिख वर्णन तक तथा प्रेम को दैहिक मांसल संवेदना तक सीमित न रखकर द्विवेदी जी ने प्रेम को औदात्य, व्यापकता और आदर्श के आयाम प्राप्त करा दिये। ''साकेत'' में राम और सीता के दांपत्य प्रेम में परस्पर साहचर्य पूर्ण आदेश प्रेम की अभिव्यंजना तो उर्मिला लक्ष्मण के प्रेम में विरह की तीव्रता और गहराई के साथ-साथ समर्पण, आत्मत्याग और समष्टि के लिए व्यष्टि को न्यौछावर करने की मंगल भावना भी समाविष्ट है। हरिऔध की राधा समाज हित के लिए अपने प्रेम की कुर्बानी को सहज रूप में स्वीकार करती है। रामनरेश त्रिपाठी की कविताओं में भी इसी तरह के भावों की अभिव्यक्ति हुई है।

3.5.7 परंपरानुवर्ती कविता की झलक

द्विवेदी युग में परंपराओं पर बौद्धिक दृष्टि से पुर्नविचार किया जा रहा था और मूल्यांकन भी हो रहा था। समय के साथ कदम रखने की कर्मठता के कारण पुरानी रूढ़ियों और जर्जर विधि-विधानों, मानव-विरोधी सकीर्ण विचारों का खंडन हो रहा था। परंतु परंपराएँ जल्दी नहीं बदलती साहित्यिक परंपराओं के संस्कार और भी गहरे जमे हुए होते हैं। अतः हिंदी की रीतिकालीन एवं उससे भी पुरानी भक्तिकालीन परंपराओं के चिह्न, यदाकदा

परिलक्षित हो रहे थे। नई मनोवृति के इस युग में इन संस्कारों ने भी उच्च श्रेणी की कविता के सृजन में योगदान दिया। इस प्रकार के काव्य मे ''उद्धव शतक'' जैसा सुंदर और कलात्मक काव्य भी कवि जगन्नाथदास रत्नाकरजी ने लिखा है। रत्नाकरजी युग की नाड़ी को पहचानते थे और स्वीकार करते थे कि आने वाला जमाना ब्रजभाषा की कविता का नहीं, खड़ी बोली की कविता का है। फिर भी उनकी कवि-मानसिकता ब्रजभाषा के विलक्षण काव्य सौंदर्य मे लीन थी। अतः पुरानी लीक पर चल कर उन्होने ''उद्धव शतक'' जैसा काव्य लिखा। वे क्रांतिकारी परिवर्तन के खिलाफ थे। काव्य में विकास -प्रक्रिया के पक्षधर थे। राय देवीप्रसाद पूर्ण और वियोगी हरि भी ब्रजभाषा में रचना कर रहे थे। काल के अनुगमन से इनके विषय बदल भी गये परन्तु भाषा अधिकतर ब्रज ही रही। राष्ट्रीय भाव उन्होंने ब्रज के माध्यम से प्रकट किये परंपरागत विषयों पर लिखते हुए भी समकालीन भावधारा से प्रभावित काव्य लेखन करने वालों में सत्यनारायण कविरत्न का नाम लेना होगा, जिनकी संख्या में कम कविताएँ गुणवत्ता की दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। उनकी बड़ी कविताओं में ''प्रेमकली'' और ''भ्रमरदूत'' विशेष उल्लेखनीय हैं। यशोदा ने द्वारका में जा बसे हुए कृण के पास संदेश भेजा है। उनकी रचना नन्ददास के भँवरगीत के ढंग पर की गई है। पर अंत में देश की वर्तमान दशा और अपनी दशा का भी हल्का सा आभास कवि ने दिया है। (रामचन्द्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास) पुत्र के विरह में माँ की व्याकुल हृदय-दशा का प्रभावकारी चित्रण उल्लेखनीय है। वियोगी हरि ने पुराने कृष्ण भक्त कवियों की पद्धति पर भक्ति के पदों की रचना की। ''वीर सतसई'' ने उनकी कीर्ति को स्थापित किया।

3.5.8 इतिवृत्तात्मकता

द्विवेदी युगीन कविता की एक प्रमुख प्रवृत्ति है इतिवृत्तात्मकता। इतिवृत्तात्मकता का अर्थ है ''स्थूल पदार्थ चेतना'' जिसे आचार्य शुक्ल ने अग्रेंजी Matter of factness का समानार्थक बताया है। इस युग के अधिकांश कवियों ने अपनी रागदृष्टि को वस्तुस्थिति के बोधगम्य पक्षों तक ही सीमित रखा है। यथार्थ के अनुभव जन्य जटिल स्तर इस कविता मे व्यक्त नहीं हो सके हैं। भावात्मक गहराई के इस रूझान को देखते हए शुक्ल जी ने इस युग की कविता की काव्य प्रवृत्ति को इतिवृत्तात्मकता घोषित कर दिया। इस युग के कवियों में छायावादी कवियों जैसी सूक्ष्म सौंदर्य दृष्टि नहीं दिखाई देती। इस दृष्टि से इतिवृत्तात्मकता का अभिप्राय है 'स्थूल सौंदर्य दृष्टि'। इस चेतना की अभिव्यक्ति दो रूपों में हुई है-

1) सीधी सपाट और वस्तुपरक कविताओं के रूप में, जैसे ''भारत भारती'', ''हल्दी घाटी'' आदि में।

2) भावुकता प्रधान पौराणिक कल्पना के रूप में, जैसे ''प्रिय प्रवास'', ''साकेत'' आदि में।

प्रथम प्रकार की कविताओं में सुधारवाद और नैतिकता की प्रवृत्ति प्रबल है और दूसरी प्रकार की कविताओं में मध्ययुगीनता को पीछे धकेल कर फूटती हुई आधुनिक या नवीन दृष्टि दोनों तरह की कृतियों की मूल चेतना सुधारवाद, आदर्शवाद और नैतिक मूल्यों पर केंद्रित है। मानवीय संवेदना की यह सीमा इन कवियों की सीमा नहीं वस्तुतः द्विवेदी युग के ऐतिहासिक दृष्टिकोण की सीमा है।

यह भी ध्यान देने की बात है कि इसी युग में ऐसे कवि भी हुए हैं जिनकी सहज भावपूर्ण कृतियों में स्वच्छंद प्रवृत्ति चित्र स्वतः स्फूर्त कल्पनाशीलता के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। इनमें श्रीधर पाठक, रामनरेश त्रिपाठी, माखनलाल चतुर्वेदी, जगन्नाथ रत्नाकर, नाथूराम शर्मा शंकर, सत्यनारायण कविरत्न, मुकुटधर पांडेय आदि का नाम लिया जा सकता है। इन कवियों की कविता आधार प्रधान और लोकोन्मुख है। इस पर दयानंद, तिलक और गांधी की सामाजिक सांस्कृतिक विचारधारा की गहरी छाप है दूसरी ओर इनकी मूल संवेदना स्वच्छंदतावाद-पूर्व की संवेदना है।

बोध प्रश्न 2

निम्नलिखित कथनों में जो सही है, उनके सामने (✓) का निशान और जो गलत है उनके सामने गलत (×) का निशान लगाइए।

1) द्विवेदी युग की कविताः

क) उपदेशात्मक है। ☐

ख) इतिवृत्तात्मक है। ☐

ग) कुछेक विषयों तक सीमित है। ☐

घ) दरबारी है। ☐

2) कविता के माध्यम से :

क) इस युग की प्रमख समस्याओं की अभिव्यक्ति हुई है। ☐

ख) नारी जागरण की चेतना को प्रस्तुत नहीं किया गया है। ☐

ग) देश भक्ति को प्रमुखता दी गई है। ☐

बोध प्रश्न 3

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिएः

क) द्विवेदी युगीन कविता में उपेक्षितों के प्रति ....दृष्टिकोण की प्रधानता है।

ख) इस युग की कविता में ....काव्य के आरंभिक संकेत मिलते हैं।

ग) इस युग में प्रेम की अभिव्यक्ति .... और ....रूप में हुई है।

घ) इस युग के कवियों में छायावादी कवियों जैसी सूक्ष्मता ....नहीं दिखाई देती।

बोध प्रश्न 4

क) द्विवेदी युग के कवियों ने कविता के लिए किन-विषयों को चुना? लगभग चार पंक्तियों में उत्तर दीजिए।

....

....

....

....

ख) द्विवेदी युगीन कविता में नारी जागरण पर पाँच पंक्तियाँ लिखिए।

....

....

....

....

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

ग) द्विवेदी युग की कविता में स्वच्छंदतावाद पर पाँच पंक्तियाँ लिखिए।

....

....

....

....

घ) इतिवृत्तात्मकता से आप क्या समझते है?

....

....

....

....

3.6 द्विवेदी युगीन काव्य का अभिव्यंजना शिल्प

3.6.1 काव्य रूपों की विविधता

काव्य रूपों की दृष्टि से द्विवेदी युग को प्रमुख रूप से प्रबंध कविता का युग कहा जा सकता है। परंपरागत प्रबंध काव्य के स्वरूप में इन कवियों ने थोड़े-बहुत परिवर्तन किए। इस परिवर्तन के पीछे युग परिवेश का प्रभाव-दबाव सक्रिय था प्रबंध काव्यों में अधिकांश देशभक्तिपूर्ण चरित्र प्रस्तुत किए गए जिनका मूल ढाँचा आदर्श पर केंद्रित था। इस युग में प्रबध काव्यों के तीन रूप मिलते हैं - (1) महाकाव्य (2) खंडकाव्य (3) लघु पद्य प्रबंध। अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध ने खड़ी बोली हिंदी के प्रथम महाकाव्य ''प्रियप्रवास'' की रचना इस युग में की। उन्होने लिखा ''मैं खड़ी बोली हिंदी में एक महाकाव्य लिखने के लिए लालायित था।'' इस युग में मैथिलीशरण गुप्त ने खड़ी बोली हिंदी के गौरव ग्रंथ- ''साकेत'' की रचना की जो अपनी नवीन उद्‌भावनाओं और दृष्टि की आधुनिकता के कारण इस युग की प्रबंध परंपरा की मुकुट मणि है। श्याम नारायण पांडेय ने ''हल्दी घाटी'' और ''जौहर'', रामचरित उपाध्याय ने ''साकेत संत'' जैसे महाकाव्यों की रचना की किंतु इन महाकाव्यों से अधिक प्रबंध-योजना ही सक्रिय रही।

यह युग प्रबंध-परंपरा में खंड काव्यों की सृष्टि का स्वर्ण युग है। एक ओर तो ऐतिहासिक पौराणिक कथाओं पर आधारित ''जयद्रथ वध'', ''पंचवटी'', ''नहुश'', ''द्वापर'', ''सिद्धराज'', ''विष्णुप्रिया'' जैसे खंडकाव्य लिखे गए दूसरी ओर कल्पित कथानकों पर आधारित स्वच्छंद प्रवृत्तियों से युक्त मार्मिक खंड काव्यों की सृष्टि इसी युग में हुई पंडित रामनरेश त्रिपाठी ने ''पथिक'', ''मिलन'' और स्वप्न तीनों खंड काव्यों में काल्पनिक कथानकों का ढाँचा खड़ा करके नयी कवि प्रतिभा का परिचय दिया।

''यशोधरा'' जैसे गद्य-पद्य मिश्रित चंपू काव्यों की भी सृष्टि हुई। कुछ लघु पद्य प्रबंध भी लिखे गए, मैथिलीशरण गुप्त द्वारा लिखित- ''कीचक की नीचता'', ''कुंती और कर्ण'' आदि। धीरे-धीरे इन पद्य प्रबंधों ने लघु गीत प्रबंध का रूप ले लिया जैसे लाला भगवानदीनकृत ''वीर पंचरत्न''।

इस युग की कविता में मुक्तक काव्य परंपरा के नूतन विधान भी दृष्टिगत होते हैं। लोकगीत परंपरा की अमर रचना ''झांसी की रानी'' की सृष्टि सुभद्राकुमारी चौहान ने की। श्रीधर पाठक लावनी, ख्याल और स्तवगीत लिखे। खड़ी बोली में कवित्त सवैया पद्धति की समृद्ध परंपरा मौजूद रही। इस क्षेत्र में राय देवीप्रसाद पूर्ण की रचना ''स्वदेशी कुंडल'',

रामनरेश त्रिपाठी की ''मानसी'', नाथू राम शंकर शर्मा की ''घनाक्षरी'' आदि काव्य रूप बेहद लोकप्रिय हुए।

इस युग में गद्य-काव्य लिखने की भी एक परंपरा दिखाई देती है। रायकृष्णदास ने ''चेतावनी'' नामक गद्य काव्य लिखा। वियोगी हरि के ''पर्दा'' और ''वीणा'' नामक प्रयोग पर्याप्त चर्चित हुए। मूलतः यह गद्य काव्य लघु प्रबंध हैं जिनमें देश प्रेम की अभिव्यक्ति भी है।

3.6.2 द्विवेदी युगीन काव्य भाषाः खड़ी बोली

द्विवेदी जी खड़ी बोली पद्य के प्रवर्त्तक थे। उन्होंने ब्रज भाषा को युगधर्म के निर्वाह के अयोग्य घोषित किया और उसके स्थान पर खड़ी बोली को काव्य भाषा के रूप में प्रतिष्ठित किया।

हिंदी खड़ी बोली का सफल प्रयोग भारतेन्दु युग में ही गद्य-विद्याओं में होने लगा था। पद्य में यह कार्य करना अभी आवश्यक था। यह काम महावीर प्रसाद द्विवेदी ने किया। यह पहले कहा जा चुका है। स्वयं अच्छे पद्यकार न होते हुए भी महावीर प्रसाद द्विवेदी को इस कार्य में सफलता मिली, इसका एक प्रमख कारण यह है कि भाषा पर उनका विशेष ध्यान था, अधिकार था और वे एक स्वयं सशक्तः शैलीकार थे। वे स्वयं अच्छी तरह जानते थे कि काव्य की भाषा कैसी होनी चाहिए। वे मानते थे कि कविता बोलचाल की भाषा में होनी चाहिए अर्थात वे पाठक की उपस्थिति का महत्व स्वीकार करते थे और मानते थे कि कविता, कवि और पाठक के बीच का संवाद है इसे ह्रदयंगम करने के लिए सहज होना चाहिए। उन्हें किसी परायी भाषा के शब्द के व्यवहार से परहेज नहीं था बशर्ते कि लेखन अपनी स्वाभाविकता को न छोड़े। आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र के निम्नांकित शब्द महावीर प्रसाद द्विवेदी के शैलीकार रूप को यथोचित व्यक्त करते हैंः ''द्विवेदी जी की भाषा में न तो संस्कृत का सामासिक जंगल है और न उर्दू की कलाबाजियां। उनकी भाषा हिंदी का ठेठ प्रकृत रूप लिए हुए है। केवल शब्दों का प्रयोग ही भाषा नही है। वाक्यों की बनावट ही भाषा का असली रूप है। हिंदी में नई-नई उद्‌भावनाएँ कर के द्विवेदी जी ने हिंदी की व्यापकता को सर्वमान्य बना दिया है। जो लोग हिंदी की स्वच्छंदता के कायल नहीं हैं, उन्हे बड़े दिल से द्विवेदी जी और पंडित रामचंद्र शुक्ल की भाषा का मनन करना चाहिए। द्विवेजी जी की भाषा वैसे अनलंकृत लघुता का गुण धारण करने वाली, आडंबरहीन, प्रवाहपूर्ण, सरल भाषा है। कभी विषय के अनुसार वह गंभीर तत्सम शब्दों में संयुक्त भी बन जाती है तो कभी व्यंग्यात्मक तेवर में हल्की फुल्की, बतरस का मजा देने वाली थी। काव्य भाषा के संबंध में भी महावीर प्रसाद द्विवेदी जी की यही मान्यता था कि ''कवि को ऐसी भाषा लिखनी चाहिए जिसे सब कोइ सहज में समझ ले और अर्थ का ह्रदयंगम कर सके''। वह काव्य में संस्कृत वृत्तों को अपनाने के पक्ष में थे उन्होने कवियों को समझाया हैः ''दोहा, चौपाई, सोरठा, घनाक्षरी, छप्पय, सवैया, आदि का प्रयोग हिंदी में बहुत हो चुका। कवियों को चाहिए कि यदि वे लिख सकें तो इनके अतिरिक्त और भी छंद लिखा करें ..... संस्कृत काव्यों में प्रयोग किए गए वृत्तों में से द्रुतविलंबित, वंशस्थ,वसन्ततिलका, आदि वृत्त ऐसे है जिनका प्रचार हिंदी में होने से हिंदी काव्य की विशेष शोभा बढ़ेगी...... पादान्त में अनुप्रासहीन छंद भी हिंदी में लिखे जाने चाहिए। संस्कृत ही हिंदी की माता है। संस्कृत का सारा कविता-साहित्य इस तुकान्तवाद के बखेड़े से मुक्त सा है। अतएव इस विषय में यदि हम संस्कृत का अनुकरण करें तो सफलता की पूरी-पूरी आशा है''।

काव्य भाषा परिष्कार का युग

द्विवेदी युग खड़ी बोली कविता का आरंभिक काल था। अतः द्विवेदी जी को काव्य भाषा का कायाकल्प करने के लिए काफी परिश्रम करना पडा। महावीर प्रसाद द्विवेदी काव्य को सामान्य पाठक तक ले जाना चाहते थे, अतः उसे अधिक सरल, अक्लिष्ट और सुबोध भी

बनाना चाहते थे, उन्होने भाषा में व्याकरण- सम्मत अनुशासन का महत्व स्वीकार किया ही था, इन दृष्टियों से वे ''सरस्वती'' में आने वाली रचनाओं की भाषा को काट-छाँट करके परिष्कृत करके ही छापने की अनुमति देते यथा -

मूल	संशोधित
रब वह सब ही का हो तभी व्यर्थ ही है, जब पिक दिखलाती शब्द की चतुरी,	कलरव गति सबकी भास होती बुरी है जब पिक दिखलाती शब्द की चातुरी है (सेठ कन्हैयालाल पोद्दार)

उपर्युक्त संशोधन देखने पर द्विवेदी जी की भाषा पर पकड़ की कल्पना की जा सकती है और साथ में उनकी कर्मठता, परिश्रमशीलता और काव्य भाषा के परिष्कार के लिए उनकी व्याकुलता का परिचय मिलता है।

मूल कवि के आशय को जरा भी क्षति न पहुँचाते हुए शुद्धता, सरलता, प्रभावोत्पादकता और छंद-लय की गति की दृष्टि से इस प्रकार का परिष्कार महावीर प्रसाद द्विवेदी जी की संपादन-कला और नेतृत्व का परिचायक है।

खड़ी बोली काव्य के आरंभिक काल में भाषा का रूप अव्यस्थित तो था ही, काव्य के लिए खड़ी बोली का सरल उपयोग भी ढंग से नहीं हो पा रहा था, भाषा संकरता उसका बड़ा दोष था कविता में प्रान्तीय प्रयोग मिलते थे जो मानक भाषा के रूप में स्वीकृत नहीं हुए थे। ब्रज भाषा के शब्दों एवं शब्दरूपों की भरमार भी थी। ''निर्माया'', प्रकटायी'' ''अवगाहा'' जैसी क्रियाओं का प्रयोग धड़ल्ले से होता था। संस्कृत पदावली की भरमार थी तो कभी बीच में लोक भाषा का शब्द आकर वाक्यावली का वजन कम कर देता था। भाषा में आवश्यक प्रसाद गुण तिरोहित होता था। काव्यभाषा में भाव की जीवंतता के लिए मुहावरों के प्रयोग के प्रति कवि उतने सजग नहीं थे। उपसर्गों से बोझिल, समासों से क्लिष्ट, तत्सम शब्दो के बाहुल्य से कर्कश भाषा काव्य की सहजता और मधुरता को खत्म कर देती थी। मिश्र बन्धुओं ने टिप्पणी की हैः ''एक तो खड़ी बोली में बिना खास प्रयत्न के श्रुति-कटुत्व आ ही जाता है और दूसरे ये लोग संस्कृत शब्दावली के अनुरागी होने से और भी सम्मिलित वर्णों की भरमार रखते हैं, जैसे खड़ी बोली के छन्दों में श्रुति माधुर्य, का लोप हुआ जाता है''। इस स्थिति में महावीर प्रसाद द्विवेदी ने भाषा परिष्कार के साथ सरल, प्रवाहपूर्ण, रस एवं भावानुगामी, महावरों के प्रयोग से जीवन्त बनी भाषा लिखने के लिए प्रोत्साहित किया। ब्रज भाषा की मधुरता की तुलना में खड़ी बोली की शुष्कता और कर्कशता का यह संग्राम उन्होंने स्वयं लड़ा। द्विवेदी जी के प्रयासों के परिणामस्वरूप कविता की भाषा पहले से अधिक सर्जनशील हुई। आगे चलकर 'भारत भारती', 'जयद्रथ वध', पथिक', 'पचंवटी' आदि जैसी रचनाएँ आई जिन्होंने हिंदी को लोकप्रिय बनाया। द्विवेदी युग की कविताओं में भी सभी प्रकार की भाषा का प्रयोग हुआ। एक ओर तो सरल और प्रांजल हिंदी का निरलंकार सहज सौंदर्य और दूसरी ओर संस्कृत की अलंकारिक समस्त पदावली की छटा देखने को मिलती है। कहीं तो प्रसन्न वाक्यविन्यास का सहज प्रवाह है और कहीं-कहीं छायावादी कवियों की अर्थगूढ़ व्यंजना। कहीं मुहावरों और बोलचाल के शब्दों की झड़ी लगी हुई है तो दूसरे स्थल पर उन्हे तिलांजलि भी दे दी गई है। कहीं वाच्य प्रधान, वर्णनात्मक शैली में वस्तु स्थापन किया गया है तो कहीं लक्ष्य प्रधान चित्रात्मक शैली का चमत्कार है।

3.6.3 प्रतीक एवं बिंब विधान

राष्ट्रीय सांस्कृतिक जागरण के इस युग में कविता का बाह्य विधान ही नहीं उसका आतंरिक रचना संसार भी बदल गया। कवियों ने ऐतिहासिक पौराणिक प्रतीकों को नया अर्थ संदर्भ दिया ''प्रिय प्रयास'' के राधा और कृष्ण लोक जागरण की सुधार चेतना के प्रतीक बन गए। ''हल्दी घाटी'' और ''जौहर'' के राणा प्रताप और पद्मावती अपने

ऐतिहासिक अर्थ के साथ स्वतंत्रता की क्रांतिकारी चेतना के प्रतीक रूप में प्रस्तुत किए गए। पात्र प्रतीकों के साथ स्थान प्रतीकों को भी इस कविता के महत्व के साथ ग्रहण किया। हल्दी घाटी, पाटलिपुत्र, चित्तौड़, पानीपत के मैदान, बुंदेलखड के अनेक प्रसिद्ध स्थान इस युग की कविता में प्रतीक बनकर आए। उदाहरणस्वरूप निम्नलिखित पंक्तियाँ देखिए-

''मुझे न जाना गंगासागर
मुझे न रामेश्वर काशी
तीर्थराज चित्तौड़ देखने
को मेरी आँखें प्यासी।।

- श्यामनारायण पांडेय

इसी प्रकार इस कविता ने हिमालय, यमुना, नर्मदा, बेतवा, कृष्णा और कावेरी तथा गंगा को युग चेतना की वेगवती धारा के रूप में प्रतीक बनाकर प्रस्तुत किया हिमालय का विराट प्रतीक तो इस कविता की शक्ति ही बन गया-

(1) है मुकुट हिमालय पहनाता
सागर जिसके पद धुलवाता
यह लदा वेणियों में सुंदर
मंदिर गुरूद्वारा मेरा है।

- माखनलाल चतुर्वेदी

(2) मनमोहिनी प्रकृति की जो गोद में बसा है वह देश कौन सा है?
जिसका मुकुट हिमालय यह देश कौन सा है?

-रामनरेश त्रिपाठी

दिनकर की प्रसिद्ध कविता 'हिमालय के प्रति' (1919) इसी चेतना के बहुभाषायी प्रतीकों का समृद्ध कोश प्रस्तुत करती है।

काव्य-बिंबो के क्षेत्र में भी इस युग की कविता में नूतन कल्पना शक्ति के दर्शन होते हैं। परिवेश, प्रकृति और राष्ट्र से संबंधित नए बिंब नई-नई स्वर धाराओं में फूट पड़ते दिखाई देते हैं। ये स्पष्ट, मूर्त और इंद्रिय- गाह्य बिंब इस कविता की मनोभूमिका स्पष्ट करते हैं। रूप, रस, स्पर्श, गंध और दृश्य बिंबो के अनेक भाव चित्र यहाँ दिखाई देते हैं। उर्मिला के सौंदर्य चित्रण में दृश्य - बिंब का उदाहरण देखिए।

''स्वर्ग का यह सुमन धरती पर खिला''

इसी तरह रामनरेश त्रिपाठी की रचना 'पथिक' में समुद्र का एक बड़ा ही मूर्त और जीवंत चित्र है-

सिंधु विहंग तरंग पंख को फड़का कर प्रतिक्षण में
है निमग्र नित भूमि अंड के सेवन में रक्षण में

श्रवण बिंबो का भी अनोखा संसार परिवेश चित्रण में दिखाई देता है जैसे-

''पंछियों की चहचाहट हो उठी
चेतना की अधिक आहट हो उठी''

इस युग की अधिकांश बिंब योजना अप्रस्तुत विधान के रूप में होने के बावजूद ये बिंब अलंकार की कोटि से अलग हो जाते हैं द्विवेदी युग के कवि अमूर्त भावों को मूर्त अनुभवों में बाँधने के लिए प्रसिद्ध भी रहे हैं।

समसामयिक समस्याओं से संबंधित नवीन बिंबो की सृष्टि भी इस युग की कविता में भरपूर हुई है। जनता के दैन्य, दुर्दशा और भुखमरी के चित्र भी इस कविता में मिलते हैं-

अन्न नहीं है वस्त्र नहीं है रहने का न ठिकाना
कोई नहीं किसी का साथी अपना और बिगाना
-रामनरेश त्रिपाठी

द्विवेदी युगीन कविता का संसार इस लोक व्यथा की प्रस्तुति और स्वतंत्रता की चाह के बिंबो से निर्मित हुआ है। मूल बिंब चेतना में आशा का उल्लास काफी दिखाई देता है। क्योंकि इन बिंबो के पीछे सत्ता से संघर्ष और टकराहट की चेतना प्रबल है माखनलाल चतुर्वेदी की प्रसिद्ध पंक्तियों में देश पर प्राण न्यौछावर कर देने की इच्छा ऐसे ही बिंब द्वारा प्रकट हुई है -

मुझे तोड़ लेना बन माली
उस पथ पर देना, तुम फेंक
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने
जिस पर जाएँ वीर अनेक।

3.6.4 उपमान योजना (अलंकार)

इस युग की कविता यद्यपि बाहरी सजधज के रीति युगीन संस्कारों में विश्वास नहीं करती फिर भी काव्यगत अनुभूति को तीव्र और मूर्त बनाने के लिए अलंकार विधान का उपयोग किया गया है। अलंकार यहाँ वाणी की सजावट के लिए न होकर भावों की अभिव्यक्ति के विशेष द्वार हैं। अलंकारों का कृत्रिम और चमत्कारपूर्ण प्रयोग इन कवियों ने नहीं किया बल्कि भाव के सौंदर्य को स्पष्ट करने वाले नए उपमानों के प्रति उनका आकर्षण रहा। इन कवियों की अलंकार योजना सामान्य और परिचित अलंकारो की सीमा से बाहर कम गई किन्तु प्रकृति की सत्ता आलंबन रूप में मानने के कारण जहाँ-तहाँ मानवीकरण अलंकार की विशिष्ट योजना हुई। इनकी कल्पनाशक्ति पर परंपरागत उपमानों का बोझ नहीं है। इसलिए रूपक, उपमा और उपेक्षा जैसे अलंकारों में ये नए ढंग का भाव चित्र उपस्थित करते हैं जैसे -

नाक का मोती अधर की कांति से
बीज दाड़िम का समझ कर भ्रांति से
देखकर सहसा हुआ शुक मौन है
सोचता है अन्य शुक यह कौन है

-मैथिलीशरण गुप्त

यहाँ पर तोते सी नाक का उपमान परंपरागत है किन्तु इस परंपरागत उपमान में नाक और नाक के साथ मोती की आभा और मोती की कांति से टकराने वाली अधर की लालिमा का रंग आदि सभी मिलकर एक नए सौन्दर्य का प्रकाश करते हैं। स्वयं हरिऔध काव्य प्रसिद्धियों के आधार पर अप्रस्तुत विधान की परिकल्पना करते हैं और सामयिक स्थितियों से जोड़कर उनके संदर्भ को बदल देते हैं जैसे-

तरु शिखा पर थी अब राजती
कमलिनी कुल वल्लभ की प्रभा

इस काव्य पंक्ति में ढलता हुआ सूर्य और वृक्षों के पत्तों पर उसकी बिखरती हुई लालिमा उत्पेक्षा अलंकार संध्या एक रंग चित्र बनाती है इसी प्रकार इस युग के अन्य कवियों में रूपक की सृष्टि विशेष ढंग से हुई है। रूपक में उपमेय और उपमान का अभेद आरोप होता

है। इस काल के कवियों ने रूपक अलंकार को विशिष्ट व्यापकता प्रदान की है जैसे 'पंचवटी' से एक उदाहरण है-

''इसी समय पौ फटी पूर्व में
पलटा प्रकृति नटी का रंग
किरण कंटकों से श्यामांबर
फटा दिवा के दमके अंग''

यहां सीता और उषा के रूपक की अभेदता ने भाव को एक विशेष कलात्मकता में ढाल दिया है। परंपरागत उपमान भी द्विवेदी युगीन कविता में सहज रूप से आए हैं जैसे आंखों की खंजन पक्षी से तुलना कवियों का प्रिय उपमान रही है। भक्तिकाल और रीतिकाल दोनों में ही इसका प्रचुर प्रयोग देखने को मिलता है। 'साकेत' में भी इसी तरह स्वयं गुप्त जी भी इस प्रवृत्ति से परिचालित होने लगते हैं जैसे-

''निरख सखी ये खंजन आए
फेरे उन मेरे रंजन ने नयन इधर मन भाए''

लक्षण व्यंजना के आधार पर अमूर्त को मूर्त रूप देने वाला मानवीकरण अलंकार श्रीधर पाठक, रामनरेश त्रिपाठी, मुकुटधर पांडेय आदि स्वच्छंद प्रकृति के कवियों में अपनी स्वाभाविकता के साथ प्रस्तुत हुआ है। पुष्प, नदी आदि जैसे प्राकृतिक उपादानों का मानवीकरण यहाँ होता है। ''पथिक'' से एक उदाहरण है-

प्रतिक्षण नूतन वेष बनाकर रंग-विरंग निराला।
रवि के सम्मुख थिरक रही है नभ में वारिधि बाला।।

स्वयं गुप्त जी भी इस प्रवृत्ति से परिचालित होने लगते हैं जैसे-

अरुण पट झट पहन उषा आ गई
मुख कमल पर मुस्कराहट छा गई

नितांत मौलिक उद्भावनाओं के मानवीकरण अलंकार से संबंधित अनेक उदाहरण दिए जा सकते हैं किन्तु मूल बात यही है कि इन कवियों की उपमान योजना भावपूर्ण अभिव्यक्तियों के लिए समर्थ मार्ग बनाती है और अरूप को रूप, अमूर्त को मूर्त, अप्रस्तुत को प्रस्तुत, अप्रत्यक्ष को प्रत्यक्ष बनाने के लिए उपमानों या अलंकारो का साधन रूप में प्रयोग करती है। इन कवियों का साध्य है भाव और उसे मूर्त बनाने, स्पष्टता देने का साधन है अलंकार।

3.6.5 छंद विधान

भारतेन्दु युग के कवियों ने छंदो के क्षेत्र में नए प्रयोगों की शुरूआत की थी। द्विवेदी युग में इस प्रवृत्ति की ओर तेजी से विस्तार हुआ। अन्य क्षेत्रों की भांति इस क्षेत्र में भी आचार्य द्विवेदी ने प्रेरणा दी। परंपरागत छंदों-दोहा, चौपाई, सोरठा, धनाक्षरी, छप्पय और सवैया के अतिरिक्त अन्य छंदो में कविता करने की सलाह भी दी। उन्होंने कवियों को प्रेरित किया। साथ ही उर्दू के छंदो का समुचित अनुकरण करने की सलाह भी दी। संस्कृत के वृत्तों के उपयोग की ओर भी ध्यान दिलाया। इतना ही नहीं उन्होंने अतुकांत कविता के लिए भी आंदोलन किया। वे मानते थे कि जरूरी नहीं कविता तुकांत ही लिखी जाए। उनके मत से अतुकांत कविता इसलिए कम अच्छी लगती है कि कानों को तुक वाली कविता का अभ्यास हो गया है। उन्होने संस्कृत, बंगला, अंग्रेजी आदि भाषाओं का उदाहरण देते हुए हिंदी में भी इस ढंग की शुरूआत की सलाह दी। वे इस बात को समझ रहे थे कि आधुनिक युग की बदलती हुई संवेदना की अभिव्यक्ति के लिए पुराने छंद पर्याप्त नहीं हो सकते। दूसरी ओर यह बात भी स्पष्ट थी कि ब्रज भाषा कविता के छंद खड़ी बोली की प्रवृत्ति पूर्णतया अनुकूल नहीं है।

द्विवेदी जी की सलाह को न केवल द्विवेदी युगीन कवियों ने बल्कि छायावादियों ने भी किसी न किसी रूप में अपनाया। अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध ने संस्कृत के मंदक्रांता, शिखरिणी, वंशस्थ आदि छंदो का ''प्रियप्रवास'' में प्रयोग किया साथ ही अतुकांत छंद को भी मुक्त हृदय से अपनाया।

इस काल के कवियों का झुकाव यद्यपि तुकांत छंद की ओर था किन्तु वे इसकी सीमाओं को पहचानते थे। वे इसे कविता की शक्ति तुकबंदी में न होकर भाव अर्थ और शब्द की लय में है। फिर भी काव्य भाषा के रूप में खड़ी बोली के विकास के इस काल में वे कई तरह के प्रयोगों और प्रयास से गुजर रहे थे। स्वयं गुप्त जी ने नवीन चंद्र राय के ''फ्लाशिर युद्ध'' तथा माइकेल मधुसूदन दंत के ''वीरांगना'' का अनुवाद अतुकांत छंद में ही किया था। गुप्त जी ने हिंदी के जातीय छंदो गीतिका, हरगीतिका, रूपमाला आदि का अपने ढंग से प्रयोग किया। ''भारत भारती'', ''जयद्रथ वध'', ''नहुश'' जैसी रचनाओं द्वारा गीतिका और हरगीतिका स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान सभा गोष्ठियों में बड़े ही लोकप्रिय हुए। ''सिद्धराज'' में उन्होंने मुक्त छंद का प्रयोग किया। 'साकेत' में नए छंदो के प्रयोग के साथ ही ब्रजभाषा के घनाक्षरी छंद की झनकार भी सुनाई देती है। घनाक्षरी वस्तुतः द्विवेदी युग के लगभग सभी कवियों का प्रिय छंद है। नाथूराम शर्मा शंकर का योगदान इस क्षेत्र मे विशेष है। स्वयं रामनरेश त्रिपाठी ने गीतिका और हरगीतिका के साथ घनाक्षरी का भी प्रयोग किया है।

छंद के क्षेत्र में नवीन मौलिक प्रयोगों की दृष्टि से रामदहिन मिश्र का अभित्राक्षर छंद में लिखा ''आर्यावर्त'' नामक यह काव्य उल्लेखनीय है। इस युग में छंदो में रचना करते समय छंद में हिंदी उच्चारण पद्धति के अनरूप लघु-गुरु क्रम की छूट दी गई और तुकांत का बंधन भी ठुकरा दिया गया। अंग्रेजी सॉनेट के आधार पर चतुर्दशपदी लिखी गयी। बंगला के प्रचार काव्य रूप ने इस दिशा में प्रभावित किया था। छायावादी कवियों ने विशेषतः निराला ने मुक्त छंद को काफी प्रोत्साहन दिया। श्रीधर पाठक, कन्हैयालाल पोद्दार, रूप नारायण पाण्डेय, रायकृष्ण दास, मुकुटधर पाण्डेय आदि ने अतुकांत रचना में उत्साह से भाग लिया। जयशंकर प्रसाद का ''प्रेम पथिक'' अतुकांत रचना है। अतुकांत रचना की प्रतिष्ठा कर द्विवेदी युग ने कविता के भावों पर आने वाले अनेक बंधनो को शिथिल कर कवियों को स्वतंत्रता प्रदान की। सामान्यतः रस एवं भाव के अनुकूल छंद योजना की महत्ता स्वीकार की गयी। लावनी, ख्याल आदि लोक छंदो का प्रयोग भी इस युग की कविता में मिलता है।

3.7 सारांश : द्विवेदी युगीन काव्य का मूल्यांकन

3.7.1 प्रमुख प्रदेय

द्विवेदी युग का प्रमुख प्रदेय काव्य में खड़ी बोली की प्रतिष्ठा और ब्रज भाषा को समसामयिक काव्य संवेदना के वहन के लिए असमर्थ करार दे कर हिंदी कवियों को खड़ी बोली में ही लिखने के लिए, समर्थ बना देता है। भाषा की शुद्धता, सरलता और सरसता के लिए अद्भूत प्रयत्न और इसमें सफलता इस युग की देन है। कविता में भावों, विचारों, अर्थात काव्यवस्तु की समकालीन राजनैतिक एवं सांस्कृतिक जीवन से जोड़ने का महत्वपूर्ण कार्य सम्पन्न हुआ। विषयों का विस्तार भी प्रचुर मात्रा में हुआ। प्रकृति से कवि हृदय ने अपना गहरा संबंध महसूस किया और प्रकृति से संवादपूर्ण संबंध में मनुष्य जीवन की सार्थकता देखी। राष्ट्रीयता द्विवेदी युगीन कविता का प्रमुख भाव था और यह राष्ट्रीयता स्वदेश, स्वभाषा और स्वसंस्कृति के प्रति अस्मिता में व्यंजित होने लगी। पौराणिक काल की सांस्कृतिक घटनाओ एवं व्यक्तियों की स्मृति को पुनर्जीवित करते हुए वर्तमान की दृष्टि से उनकी अर्थवत्ता की खोज करने की परिपाटी चल पड़ी। कवि मानवतावादी मूल्यों के प्रति प्रतिबद्ध थे और सामान्य जनजीवन के प्रति आंतरिक लगाव इस प्रतिबद्धता का एक रूप था।

मनुष्य के हर किस्म के शोषण के विरोध में तीव्र नाराजगी की भावना उस युग का महत्वपूर्ण वैशिष्टय था। दलित, पीड़ित, शोषित- चाहे वह किसान हो, मज़दूर हो, नारी हो या पराधीन समाज हो- के प्रति सहानुभूति और करूणा द्विवेदी युगीन कविता का एक अंग था। स्त्री पुरुषों के बीच समानता की भावना उदित हो रही थी। कवियों के व्यक्तित्व में संयम, गंभीरता और कर्मठता थी। वे भारत के उज्वल भविष्य के सपने देखते थे और आशावाद, आदर्शवाद एवं नीतिवाद उनके स्वभाव का हिस्सा बन गया था। यह कविता बहुत बार विचारों की काव्यात्मक अभिव्यक्ति का रूप नहीं ले पायी परंतु अपनी प्रांजलता और निष्ठा के कारण समाज में सम्मान प्राप्त कर सकी। द्विवेदी युगीन कविता ने हिंदी पाठकों के मानसिक क्षितिज का विस्तार कर एक स्वस्थ समष्टिवाद के प्रति पाठकों में आस्था उत्पन्न की। एक ओर छंदों को तुकबंदी से अलग कर छंदों को स्वतंत्रता दी तो दूसरी और उसे छंद की गेयता और लय से संयुक्त रखकर उसके ध्वनि सौंदर्य की रक्षा की। द्विवेदी युग संग्राहक युग था, संस्कृत, मराठी, बंगाली, अंग्रेजी भाषाओं के साहित्यों का अनुवाद, रूपांतरण, अनुकरण इस युग में हुआ, जिससे साहित्य का क्षितिज विस्तारित हुआ।

3.7.2 सीमाएँ

व्याकरण- शुद्धि, भाषा मे संस्कृत की प्रचुरता तथा संस्कृत छंदों के आग्रह के फलस्वरूप द्विवेदी युगीन कविता ने काव्य भाषा के लिए अत्यावश्यक स्वतंत्रता और प्रयोगशीलता के प्रति उदासीनता दिखायी। विषयों के विवरण, वर्णन एवं निवेदन के कारण गद्य और काव्य के बीच का अन्तर बहुत बार धूमिल हुआ और सपाटता आयी। भावों की उन्मुत्तता, वैयक्तिक अनुभूति के फलस्वरूप काव्य में आनेवाली सूक्ष्मता और ऐंद्रियता के कारण आनेवाली जीवन्तता काव्य पर जाने अनजाने लादे गये नैतिक बन्धनों के कारण प्रभावकारी रूप में प्रकट न हो पायी।

पंत, प्रसाद, निराला जैसे कवियों को अपनी कविता की महानता के लिए द्विवेदी युगीन बंधनों से संघर्ष करना पड़ा। कोई कवि द्विवेदी युग के समस्त बंधनों को स्वीकार कर महान नहीं बन पाया। मैथिलीशरण गुप्त को भी महानता की ओर जाने वाला रास्ता स्वच्छंदतावाद की प्रवृत्तियों को अपनाने में दिखा। गद्य और काव्य की सीमा रेखा पर विचरने वाले पद्य को शुष्कता, नीरसता और वर्णनात्मकता से बचाकर उसे भाव सामर्थ्य और अभिव्यंजना सौंदर्य से तरल और वन्यात्मक शक्ति से प्रौढ़ बनाने का कार्य छायावादी कवियों को करना पड़ा। रीतिकालीन दैहिक श्रृंगार की स्थूलता की प्रतिक्रिया के रूप में श्रृंगारिकता से परहेज करने वाली द्विवेदी युगीन कविता को छायावादी कवियों को बताना पड़ा कि मनुष्य की जीवन्त मानसिकता के लिए प्रणय की मानवोचित, गरिमामयी, तरल संवेदना कितनी और कैसे आवश्यक है।

द्विवेदी युगीन कवियों की कविता काव्य सौंदर्य, भाव माधुर्य तथा रूपगोचरता की दृष्टि से संत साहित्य तथा छायावादी काव्य की समृद्धता की समकक्षता कभी नहीं कर सकती थी परंतु ऐतिहासिक महत्व अमान्य नहीं किया जा सकता। उसकी सुदृढ़ नींव के अभाव में छायावाद की भव्य क्रांतिधर्मी सिद्धियाँ संभवतः अशक्य थीं। काव्य में विषयों का विस्तार और वैविध्य, खड़ी बोली का परिष्कृत और शक्तिशाली रूप का काव्य-भाषा के रूप में उपयोग- ये दो कार्य द्विवेदी युगीन काव्य के खास महत्वपूर्ण ऐतिहासिक प्रदेय हैं।

बोध प्रश्न 5

1) क) द्विवेदी युग में प्रबंध काव्यों के कौन से तीन रूप मिलते हैं।

....

....

....

ख) काव्य भाषा के क्षेत्र में द्विवेदी युग की क्या विशेषता है? लगभग पांच पंक्तियों में उत्तर दीजिए।

....

....

....

ग) द्विवेदी जी ने काव्य भाषा के परिष्कार में किस तरह योगदान दिया? अधिक से अधिक सात पंक्तियों में उत्तर दीजिए।

....

....

....

2) क) एतिहासिक पौराणिक प्रतीकों के प्रति द्विवेदी युगीन कवियों का दृष्टिकोण क्या था?

....

....

....

....

ख) निम्नलिखित बिंबों का उदाहरण काव्य पंक्ति द्वारा दीजिएः

i) श्रवण बिंब

....

....

....

ii) समसामयिक जीवन की समस्याओं का बिंब

....

....

....

....

3) क) कविता में अलंकारों के प्रयोग के प्रति रीतियुगीन कवियों तथा द्विवेदी युगीन कवियों के दृष्टिकोण में अंतर लगभग पाँच पंक्तियों में बताइए।

....

....

....

....

ख) इस युग की कविता में मानवीकरण और रूपक अलंकार के प्रयोग का एक-एक उदाहरण कविता की पंक्तियों द्वारा दीजिएः

मानवीकरण

....

....

....

रूपक

....

....

....

ग) द्विवेदी युग में निम्नलिखित कवि किन छंदों के प्रयोग के लिए प्रसिद्ध हैं-

हरिऔध

....

....

....

मैथिलीशरण गुप्त

....

....

....

घ) ब्रज भाषा के किस छंद का इस युग में अधिकांश कवियों ने प्रयोग किया-

....

....

....

बोध प्रश्न

1) कविता में स्वच्छंदतावाद की प्रतिष्ठा करने वाले प्रथम कवि का नाम बताइए-

....

....

....

2) द्विवेदीयुग में ब्रज भाषा में कविता लिखने वाले तीन कवियों के नाम बताइए-

....

....

....

3) यशोधरा का काव्य रूप क्या है?

....

....

....

4) निम्नलिखित के लेखक कौन हैं?

क) हल्दीघाटी ....

ख) पथिक ....

ग) काश्मीर सुषमा ....

घ) नहुष ....

ड.) प्रिय प्रवास ....

च) झांसी की रानी ....

5) निम्नलिखित रचनाकारों की दो-दो प्रमुख रचनाओं के नाम बताइए-

क) सियारामशरण गुप्त ....

ख) रामनरेश त्रिपाठी ....

अभ्यास 1

अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध और उनकी रचनाओं का दस पंक्तियों में परिचय दीजिए-

....

....

....

....

....

अभ्यास-2

द्विवेदीयुग की पृष्ठभूमि पर 10 पंक्तियाँ लिखिए-

....

....

....

....

....

....

....

....

अभ्यास-3

द्विवेदी-युगीन कविता के प्रदेय पर विचार करते हुए उसकी सीमाओं का निर्देश कीजिए-

....

....

....

....

....

3.8 शब्दावली

परंपराबद्धता : पुरानी रूढ़ियों या लीकों का पालन

उद्‌दीपन : भावों को उद्‌दीप्त करने अथवा जाग्रत करने का माध्यम या स्थिति

हृदयंगम करना : भलीभांति समझ लेना।

तुकांतवाद : तुंकात रचना को ही वरीयता देना

भाषा संकरता : भाषा में अन्य भाषाओं के शब्दों की मिलावट

भावानुगामी : भावों का अनुसरण करने वाली

मानक भाषा : भाषा का वह रूप जो व्याकरण और साहित्य सम्मत हो।

3.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

शर्मा, रामविलास, महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिंदी नवजागरण, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।

शुक्ल, रामचंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।

सिंह डा. नामवर, आधुनिक हिंदी कविता की प्रवृत्तियाँ, लोक भारती, इलाहाबाद।

रामस्वरूप चतुर्वेदी, हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, लोक भारती, इलाहाबाद।

3.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) (क) नहीं, (ख) नहीं, (ग) हाँ, (घ) हाँ

2) (क) पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी (ख) 1900-1920 (ग) पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी
(घ) भारतेन्दु युग (ङ) छायावाद

3) देखें भाग 3.4

बोध प्रश्न 2

1) क) ✓ (ख) ✓ (ग) × (घ) ×

2) क) ✓ (ख) × (ग) ×

बोध प्रश्न 3

क) सहानुभूतिपूर्ण

ख) स्वच्छंदतावादी

ग) उदात्त और संयत

घ) सौन्दर्य दृष्टि

बोध प्रश्न 4

क) देखें उपभाग 3.5.1

ख) देखें भाग 3.5

ग) देखें उपभाग 3.5.4

घ) देखें उपभाग 3.5.8

बोध प्रश्न 5

1) क) महाकाव्य, खंड काव्य और लघु पद्य प्रबंध

   ख) देखें, उपभाग 3.6.2

   ग) देखें, वही

2) क) देखें, उपभाग 3.6.3

   ख) देखें, वही

3) क) देखें, उपभाग 3.6.4

   ख) देखें, वहीं

   ग) देखें, उपभाग 3.6.5

   घ) देखें, वहीं

बोध प्रश्न 7

1) श्रीधर पाठक

2) जगन्नाथ दास रत्नाकर, राय देवी प्रसाद पूर्ण, वियोग हरि

3) चंपू काव्य

4) क) श्यामनारायण पांडेय ख) रामनरेश त्रिपाठी

   ग) श्रीधर पाठक घ) मैथिलीशरण गुप्त

   ङ) अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध च) सुभद्रा कुमारी चौहान

5) क) (1) उन्मुक्त (2) मौर्य विजय

   ख) (1) मिलन (2) पथिक

इकाई 4 अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' और उनकी कविता

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 पृष्ठभूमि

4.3 हरिऔध

  4.3.1 जीवन परिचय

  4.3.2 साहित्यिक रचनाएँ

4.4 हरिऔध का साहित्यः प्रमुख प्रवृत्तियाँ

4.5 प्रमुख कृतिः प्रिय प्रवास

4.6 सारांश

4.7 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

4.0 उद्देश्य

इस इकाई में हम हिंदी खड़ी बोली के प्रथम महाकवि अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध' का अध्ययन करेंगे। इकाई के अध्ययन के बाद आपः

- तत्कालीन विभिन्न परिस्थितियों के बारे में बता सकेंगे;
- अयोध्यासिंह उपाध्याय की संक्षिप्त जीवनी के बारे में बता सकेंगे;
- अयोध्यासिंह की रचनाओं का परिचय दे सकेंगे; तथा
- उपाध्याय जी की प्रमुख कृति 'प्रिय प्रवास' के संक्षिप्त कथासार और महत्व को जान सकेंगे

4.1 प्रस्तावना

इसमें हम प्रमुख रचनाकारों तथा उनकी रचनाओं का अध्ययन कर रहे हैं। खंड में आपने अब तक तीन महत्वपूर्ण रचनाकारों का अध्ययन कर लिया है। भारतेन्दु हरिशचंद्र द्वारा शुरू किये गये आंदोलन को बाद के रचनाकारों ने आगे बढ़ाया। साहित्य की विभिन्न विधाओं द्वारा परिवर्तन लाने का प्रयास अति महत्वपूर्ण था। जनता को जागरुक बना कर सड़ी गली परंपरा से समाज का उद्धार करना तथा विदेशी शासन से मुक्ति तत्कालीन सबसे बड़ी आवश्यकता थी। साहित्यकार जागरुक होता है उसमें चिंतन और मनन की शक्ति होती है। समाज और राष्ट्र के निर्माण के लिए वह लेखनी उठाता है। तत्कालीन लेखकों ने ऐसा ही किया। एक और खास बात उस समय के लेखकों में यह पाई जाती है कि विभिन्न विधाओं और विभिन्न विषयों में लेखन करते समय सभी जगह कुछ नयापन लाने की कोशिश की है। पिछली इकाइयों में आपने देखा कि किस प्रकार रचनाकार समाज एवं राष्ट्र के नवनिर्माण के लिए लेखन कर रहा था। गुप्त बंधुओं ने अपने-अपने स्तर पर यह कार्य किया। इस पाठ्यक्रम में हमने उन सभी महत्वपूर्ण रचनाकारों को लेने का

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

प्रयास किया है जिन्होंने साहित्यिक कृतियों द्वारा न केवल हिंदी साहित्य के भंडार को समृद्ध किया बल्कि राष्ट्र को प्रगति की ओर बढ़ने में सहायता भी की। दुर्भाग्य से कुछ महत्वपूर्ण रचनाकारों के कार्यों को नजरअंदाज किया गया। उनमें हरिऔध जी भी शामिल हैं। हम इस पाठ में इन्हीं महत्वपूर्ण रचनाकारों का अध्ययन करेंगे। तो आइए सर्वप्रथम तत्कालीन पृष्ठभूमि पर एक नजर डालें।

4.2 पृष्ठभूमि

उन्नीसवीं शती का पूर्वाद्ध राजनीतिक उथल पुथल का था। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का पहला बिगुल सन् 1857 की क्रांति से बज उठा था। अंग्रेजों की कूट नीति के फलस्वरूप भारतीयों में अच्छा तालमेल न रहने से क्रांति विफल नही। 1 नवंबर सन् 1857 ई. को लार्ड कैनिंका ने दरबार किया और इसी दरबार में महारानी विक्टोरिया का लुभावना घोषणापत्र पढ़ा गया। भारतीय जनता इस घोषणा के झांसे में आ गई थी। साहित्य में भी इसका प्रमाण मिलता है कि लेखकों ने महारानी की घोषणा का स्वागत ही किया था। सन् 1861 में इण्डियन कोंसिल एक्ट के तहत कुछ प्रशासनिक सुधार किये गये और सन् 1870 से स्वायत्त शासन का प्रारंभ भी हुआ। किंतु तत्कालीन सबसे बड़ी जरूरत थी कृषि पर ध्यान देने की। विश्व युद्ध के कारण महामारी आदि कई प्रकार की विपत्तियों से जनता तबाह हो गई थी। अंग्रेजों की नीतियों से यहाँ का उद्योग धंधा भी नष्ट हो गया था। लेकिन अगर स्थिति को संभाला जा सकता था तो वह केवल कृषि की बेहतरी पर ध्यान देकर ही। लेकिन सरकार ने इस और कुछ ध्यान नहीं किया। सन् 1860 से अकाल का जो सिलसिला शुरू हुआ तो वह सन् 1896-97 तक जारी रहा। देश के विभिन्न भागों में अकाल पड़ा। इन दैविक विपत्तियों से जनता को राहत दिलाने के लिए सरकार के पास कोई कार्यक्रम नहीं था। वह तो केवल अपने फायदे के लिए ही सोचती थी। एक ओर सरकार शोषण की नीतियों को लागू कर रही थी तो दूसरी ओर प्रबुद्ध भारतीयों में जागृति भी आ रही थी। भारत का बुद्धिजीवी वर्ग किसी ऐसे संगठन की तलाश में था जिससे मिलजुल कर बेहतरी के लिए कुछ काम किया जा सके। सन् 1885 में कांग्रेस की स्थापना इन्हीं उद्देश्यों के लिए हुई। इससे पूर्व एक महत्वपूर्ण घटना घट चुकी थी। इलबर्ट बिल के पास हो जाने से भारतीय मजिस्ट्रेटों पर से यह प्रतिबंध उठ चुका था कि वे यूरोपीय अधिकारियों के मुकद्में का फैसला नहीं कर सकते हैं। यह एक प्रकार से भारतीयों की जीत थी।

जिन वैज्ञानिक साधनों जैसे रेल, तार, डाक, आदि की सुविधाओं से अंग्रेजों ने शासन की पकड़ मजबूत करने के लिए उपयोग किया वही साधन भारतीयों के जागरण के लिए भी उपयोगी सिद्ध हुआ। सुरेन्द्रनाथ बनर्जी ने 1877, 78, तथा 84 में विभिन्न स्थानों का दौरा किया तथा शासन से टक्कर लेने के लिए जनता को प्रोत्साहित किया। कुछ यूरोपीय विद्वानों जिनमें मैक्समूलर, मोनियर, विलियम्स और सर विलियम्स जोन्स ने भारतीय संस्कृति पर शोध किया तथा उसे प्रचारित किया। उसकी महत्ता पर प्रकाश डाला। उनके कार्यों से यहां भारतीय चिंतनधारा यूरोपीय लोगों तक पहुंची वहीं भारतीयों के भी गौरवशाली अतीत को पाने की लालसा बढ़ी।

सामाजिक आंदोलनों में एक ओर भारतीय समाज में घिर आई बुराइयों पर प्रहार किया तो दूसरी ओर समाज को संगठित करने का कार्य भी किया। अतीत की बहुमूल्य धरोहर से अच्छी बातों को जनता तक पहुंचाने का कार्य भी किया गया था। धर्म और जाति पर कड़ा प्रहार किया गया। ब्रह्म समाज, आर्य समाज, थियोसोफिकल सोसाइटी आदि द्वारा भारतीय समाज को एक प्रकार से नवीनीकरण करने का प्रयास किया गया। इस प्रकार यह समय सब प्रकार से उथल-पुथल का था। ऐसी परिस्थिति में ही अयोध्यासिंह उपाध्याय का आविर्भाव हुआ।

4.3 'हरिऔध'

अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध हिंदी साहित्य के प्रमुख रचनाकारों में से हैं। हिंदी भाषा में खड़ी बोली को काव्य की भाषा के पद पर प्रतिष्ठित करने वाले ये ही थे। इन्होने परंपरा से चली आ रही इस धारणा को समाप्त किया कि अवधी और ब्रज में ही महाकाव्य रचे जा सकते हैं। खड़ी बोली की क्षमता को उन्होंने प्रमाणित कर दिखाया। कई महत्वपूर्ण काव्य रचनाओं से उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि अब खड़ी बोली में भी महाकाव्य रचे जा सकते हैं। खड़ी बोली में छोटी-बड़ी कई महत्वपूर्ण काव्य रचना करके वे इस भाषा के प्रथम महाकवि बने। आइए उनकी जीवनी के बारे में जानें।

4.3.1 जीवन परिचय

अयोध्यासिंह उपाध्याय का जन्म उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जिले के निजामाबाद नामक स्थान पर सन् 1865 ई. को हुआ। देश में घट रही घटनाओं का उन पर असर हुआ। साहित्यिक रचना की प्रतिभा उनमें थी। सामाजिक, राजनीतिक, उथल-पुथल ने उनके दिलो दिमाग को प्रभावित किया। प्रथमतः वे नाटक और उपन्यास लेखन की ओर आकर्षित हुए। फिर धीरे-धीरे कविता रचना की ओर बढ़े। सन् 1893 ई. उन्होंने 'प्रद्युम्न विजय' तथा सन् 1894 ई. में 'रूक्मिणी परिणय' नाटकों की रचना की। सन् 1834 में ही प्रथम उपन्यास 'प्रेमकान्ता' भी प्रकाशित हुआ। सन् 1899 ई. में 'ठेठ हिंदी का ठाठ' तथा सन् 1907 ई. में 'अधखिला फूल' प्रकाशित हुआ। काशी हिंदू विश्वविद्यालय में हिंदी में के अध्यापक पद पर भी काम किया। किंतु इस कार्य के लिए उन्होंने वेतन कभी नहीं लिया। आलोचना साहित्य की भी रचना की। कबीर वचनावली का संपादन करते हुए उन्होंने एक गद्य लेख लिखा जो आलोचनात्मक रूप से महत्वपूर्ण है। एक इतिहास ग्रंथ 'हिंदी भाषा और साहित्य का विकास' की भी रचना की।

काव्य रचना की शुरूआत इन्होंने ब्रजभाषा से ही की। रस कलश की रचनाओं से हमें स्पष्ट पता चलता है कि ब्रजभाषा पर इनका अच्छा अधिकार था। किंतु समय की आवश्यकता को उन्होंने तुरंत समझ लिया और इसीलिए खड़ी बोली में काव्य रचना आरंभ कर दी।

सन् 1924 ई. में से हिंदी साहित्य सम्मेलन के प्रधान पद पर भी नियुक्त हुए। सन् 1947 में छिहत्तर वर्ष की आयु में इनका देहावसान हुआ।

4.3.2 साहित्यिक रचनाएँ

हरिऔध ने गद्य पद्य दोनों में रचनाएँ कीं किंतु ख्याति उन्हें पद्य रचना में ही मिली। उनकी साहित्यिक रचनाएं निम्नलिखित हैं।

नाटक : 'प्रद्युम्न विजय' (1893 ई.)
'रूक्मिणी परिणय' (1894 ई.)

उपन्यास : 'प्रेमकान्ता' (1894 ई.)
'ठेठ हिंदी का ठाठ' (1899 ई.)
'अधखिला फूल' (1907 ई.)

काव्य : 'रसिक रहस्य' (1899 ई.)
'प्रेमाम्बुवारिधि' (1900 ई.)
'प्रेम प्रपंच' (1900 ई.)
'प्रेमाम्बु प्रश्रवण' (1901 ई.)
'प्रेमाम्बु प्रवाह' (1909 ई.)
'प्रेम पुष्पहार' (1904 ई.)

'उद्‌बोधन' (1906 ई.)
'काव्योपवन' (1909 ई.)
'प्रिय प्रवास' (1914 ई.)
'कर्मवीर' (1916 ई.)
'ऋतु मुकुर' (1917 ई.)
'पद्यमप्रसून' (1925 ई.)
'पद्यम प्रमोद' (1927 ई.)
'चोखे चौपदे' (1932 ई.)
'वैदेही बनवास' (1940 ई.)
'चुभते चौपदे'
'रस कलश'

बोध प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के दो तीन पंक्तियों में उत्तर लिखिए-

1) नवंबर सन् 1857 ई. राजनीतिक दृष्टि से क्यों महत्वपूर्ण है?

....

....

....

2) सन् 1870 में अंग्रेजी सरकार ने शासन में किस प्रकार का परिवर्तन किया?

....

....

....

3) मैक्समूलर आदि ने भारतीय संस्कृति को किस रूप में देखा।

....

....

....

4) अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध का जन्म कहां और किस वर्ष हुआ?

....

....

....

5) उपाध्याय जी ने कितनी अवस्था से साहित्य रचना शुरू की?

....

....

....

....

6) हरिऔध जी ने प्रथमतः किन विधाओं में साहित्य रचना की?

....

....

....

7) हरिऔध ने किस विश्वविद्यालय में अवैतनिक रूप से अध्यापन का कार्य किया?

....

....

....

8) हरिऔध जी द्वारा रचित इतिहास ग्रंथ का क्या नाम है?

....

....

....

9) हरिऔध किस वर्ष हिंदी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष पद पर नियुक्त हुए?

....

....

....

10) हरिऔध द्वारा रचित दो नाटक तथा एक उपन्यास के नाम लिखिए-

....

....

....

11) निम्नलिखित रचनाओं का रचना काल कब है।

	रचना	रचनाकाल
1)	अधखिला फूल	
2)	रसिक रहस्य	
3)	प्रेम पुष्पाहार	
4)	प्रिय प्रवास	
5)	कर्मवीर	

4.4 हरिऔध का साहित्य : प्रमुख प्रवृत्तियाँ

हिंदी साहित्य के इतिहास में द्विवेदी युग अत्यंत महत्वपूर्ण है। साहित्य के क्षेत्र में इस समय एक परिवर्तन उपस्थित हुआ। पुरानी परंपरा को त्याग कर नई विचारधारा का समावेश हुआ। साहित्यकारों ने देखा कि केवल कल्पना लोक की बातों को लुभावने शब्दों

से प्रस्तुत करना ही साहित्य नहीं है बल्कि जीवन की वास्तविकता पर आधारित साहित्य ही सच्चा साहित्य है। उस साहित्य का कोई मूल्य नहीं जिसमें कोई सच्चाई प्रकट न की गई हो और जिससे व्यक्ति एवं समाज का कोई लाभ न हो। ईश्वर आदि की कल्पना कर बहुत दिनों से लुभावने साहित्य की रचना की गई। लेकिन ऐसे साहित्य से न तो व्यक्ति को लाभ हुआ और न ही समाज को। अतः सामाजिक आवश्यकता को सामने रख कर ही साहित्य रचना की शुरूआत हुई। हरिऔध भी इसी परिवर्तन काल के कवि हैं। उन्होंने तत्कालीन साामाजिक स्थिति को देखते हुए अपने काव्य की रचना की। परंपरा से चले आ रहे कृष्ण के ब्रह्मस्वरूप को छोड़कर उसे उन्होंने एक आदर्श व्यक्ति, एक आदर्श नेता तथा एक लोकोपकारक मानव के रूप में चित्रित किया। रीतिकालीन बनावटीपन के घेरे से निकलकर वास्तविकता पर आधारित काव्य की रचना ही उनका मुख्य उद्देश्य रहा। उनका नायक कोई अदृश्य शक्ति संपन्न महामानव नहीं बल्कि इसी धरती पर बसने वाला एक साधारण मानव है और उस साधारण मानव में जनता की भलाई करने की इच्छा है। कृष्ण के लोकोपकारी रूप की रचना के पक्ष में दिया गया उनका यह मंतव्य अत्यंत महत्वपूर्ण है तथा उनकी प्रगतिशीलता का परिचालक है।

''हम लोगों का यह संस्कार है वह यह कि जिनको हम अवतार मानते हैं उनका चरित्र जब कहीं दृष्टिगोचर होता है तो हम उसकी प्रति पंक्ति में या न्यून से न्यून उसके प्रति पृष्ठ में ऐसे शब्द या वाक्य अवलोकन करना चाहते हैं जिसमें उसके ब्रह्मत्व का निरूपण हो। मैंने श्रीकृष्ण को इस ग्रंथ में एक महापुरुष की भांति अंकित किया है, ब्रह्म करके नहीं। मैंने भगवान श्रीकृष्ण का जो चरित्र अंकित किया है, उस चरित्र का अनुधावन करके आप स्वयं विचार करें कि वे क्या थे, मैंने यदि लिखकर बताया कि वे ब्रहम थे और तब आपने उनको पहचाना तो क्या बात रही। आधुनिक विचार के लोगों को यह प्रिय नहीं कि आम पंक्ति-पंक्ति में तो भगवान् श्रीकृष्ण को ब्रह्म लिखते चलें और चरित्र लिखने के समय - ''कर्तुमकर्तुमन्यायकर्तुसमर्थः प्रभुः'' के रंग में रंग कर ऐसे कार्यों का कर्ता उन्हें बनावें कि जिनके करने में एक साधारण विचार के मनुष्य का भी घृणा होवे। संभव है कि मेरा यह विचार समीचीन ही समझा जावे परंतु मैंने उसी विचार को सम्मुख रखकर इस ग्रंथ को लिखा है, और कृष्ण चरित्र को इस प्रकार किया जिससे कि आधुनिक लोग भी सहमत हों।''

वास्तव में यह समय की मांग थी। उन्नीसवीं सदी में जो एक नवजागरण की लहर आई तो उस समय चिंतकों के लिए भी यह उद्देश्य सामने ला दिया कि सब प्रकार के परिवर्तन की आवश्यकता है। हरिऔध ने भी समय की नब्ज को पहचाना। समय की मांग और आवश्यकता के अनुरूप काव्य रचना की। उन्होंने कृष्ण के ब्रह्म स्वरूप को बिल्कुल ही नकार दिया। उनके काव्य का नायक एक ऐसा महापुरुष है जो जन-जन का कल्याण चाहता है। उसका चरित्र समाज का ही एक अंग है न कि विशिष्ट। उसे समाज के प्रत्येक सदस्य के दुःख-दर्द का एहसास है। वह सबकी दुर्बलताओं का भी पहचानता है। समाज के उत्थान के लिए वह स्वयं ही कष्ट झेलने को सदा तत्पर है। उसके अंदर जो प्रेम है जो दया तथा सेवा भावना निहित है उससे दूसरों को भी प्रेरणा मिलती है। उसके आचरण, व्यवहार, रीति-नीति एवं समुचित कार्य से लोगों को सद्गति पर चलने की प्रेरणा मिलती है। हरिऔध जी की प्रमुख रचना है ''प्रिय प्रवास''। इसमें हम हर जगह यह पायेंगे कि कवि ने कृष्ण को ऐसे नेता के रूप में प्रस्तुत किया है जो साधारण मानव होते हुए भी संपूर्ण समाज के कल्याण के लिए ही कार्य करता है। निम्न उदाहरण को ध्यान से पढ़िए -

अपूर्व आदर्श दिखा नरत्व का।
प्रदान की है पशु को मनुष्यता।
सिखा उन्होंने वित्त की समुच्चता।
बना दिया सभ्य समग्र गोप को।
थोड़ी अभी यदि है उनकी अवस्था।
तो भी नितांत रत वे इस कर्म में हैं।

हरिऔध जी की रचनाओं का अध्ययन करने पर यह स्पष्ट दिखाई देता है कि उनके साहित्य में परिवर्तन का स्वर सब जगह है। कवि विभिन्न प्रवृत्तियों को समावेश कर एक नए समाज की कल्पना में मग्न है। वह किसी भी पुरातनपंथी व्यवस्था को समर्थन नहीं देता। सच्चा साहित्य वही है जो जन कल्याण पर आधारित हो। इस युग में ऐसे ही साहित्य को लोकप्रियता भी मिलती जो समाज के लिए उपयोगी होता। विभिन्न राजनीतिक सामाजिक एवं आर्थिक कारणों से संपूर्ण राष्ट्र में उथल-पुथल की स्थिति थी। साहित्य के क्षेत्र में भी क्रांतिकारी परिवर्तन आ रहा था। अंग्रेजी शिक्षा के कारण भारतीय समाज में एक परिवर्तन का दौर शुरू हो गया था। विभिन्न सामाजिक संगठनों के माध्यम से सामाजिक समस्याओं पर कुठाराघात हो रहा था। द्विवेदी युग में अधिकांश रचनाकारों में अभूतपूर्व आत्मविश्वास भर गया था।

वृद्ध विवाह तत्कालीन समाज की सबसे बड़ी समस्याओं में था। कभी आर्थिक कारण से तो कभी लड़कियों की संख्या अधिक होने से माता-पिता अपनी पुत्रियों का अनमेल विवाह कर देते थे। अधिक उम्र के व्यक्ति से विवाह होने पर प्रायः लड़कियों का दाम्पत्य जीवन नीरस बन जाता था। इस समस्या को कविवर हरिऔध जी ने गहराई से परखा था। ''वृद्ध विवाह'' रचना में हरिऔध जी ने इसी समस्या पर लोगों का ध्यान आकृष्ट किया है।

जो बड़े-बड़े गुडियों को ठगें।
पाउडर मुंह पर न अपने वे मलें।
ब्याह के रंगीन जामा को पहन।
बेईमानी का पहन जामा न लें।
जो कलेवा काल का है बन रहा।
वह बने खिलती कली का भौर क्यों।
और सिर पर रख बनी का बन बना।
बेहयाओं का बने सिरमौर क्यों।
छाँह भी तो वह नहीं है काड़ती।
क्योंकि बन सकता नहीं अब दैव तू।
ठीठ बूढे लाद बोझा लाड़ का
क्यों बना अलबेलियों का बैल तू।
तब भला क्या फेर में छवि के पड़ा।
आँख से जब देख पाता नू नहीं।
तब छछूंदर का बना फिरता रहा।
जब छबीली छाँह छू पाता नहीं।

एक युवती की वृद्ध के साथ विवाह होने पर क्या दयनीय स्थिति होती है उसका यथार्थ चित्रण उपरोक्त पंक्तियों में किया गया है। किस प्रकार सभी प्रकार के लाज शर्म को छोड़ कर वृद्ध युवती के साथ विवाह करते हैं। कवि यह प्रश्न समाज के सामने रखता है। और परोक्ष रूप से इस पर अंकुश लगाने का संकेत करता है।

एक ओर जहां अधिक धन के लालच में माता-पिता लड़कियों को बूढ़े के गले मढ़ देते थे वहीं दूसरी ओर दहेज न दे सकने पर अनमेल विवाह हो जाता था। अपने पुत्र के लिए दहेज न मिलने पर माता-पिता विवाह तोड़ देते थे। यह समस्या इस रूप में बढ़ी कि लड़कियों का जन्म होना ही अपशकुन माना जाने लगा। कवि इस बात की ओर भी ध्यान दिलाना चाहता है कि जिन्हें हम उच्च वंश का मानते हैं उन्हीं लोगों ने ऐसी अमानवीय प्रथा की शरूआत की। ''स्नेही'' नामक रचना से उदाहरण दृष्टव्य हैः

यह दहेज की आग सुवंशों ने दहकाई।
प्रलयवाही सी वही आज चारों दिशा छाई।
घर उजाड़ बना रही, कर रही सफाई।
तप रहे हम मुदित, समझते होली आई।

बाल विवाह एक अलग समस्या थी। कम उम्र में जब बालक को इस बात का ज्ञान भी नहीं होता था कि विवाह किसे कहते हैं, ऐसे में उनकी शादी कर दी जाती थी। एस प्रथा के कारण कई सामाजिक समस्याएँ उठ खड़ी होती थी। हरिऔध ने इस समस्या की ओर भी हमारा ध्यान आकृष्ट किया है। ''बाल विवाह'' रचना से यह अंश देखिए-

> बाल विवाह रोक हम देते यदि हमको मिलते अधिकार।
> वृद्ध ब्याह का किन्तु देश में कर देते हम खूब प्रचार।
> क्योंकि साठ के होकर भी दूल्हा अभी बनेंगे हम।
> किसी बालिका से विवाह कर इसमें नहीं सनेंगे हम।

भारतीय समाज में पर्दा-प्रथा कब और किस रूप में शुरू हुई यह शोध का विषय है। लेकिन इस पर्दा-प्रथा ने किस प्रकार नारी के विकास की गति को रोक दिया वह हमसे छुपा नहीं। नारी को केवल उपभोग की वस्तु मान लिया। पर्दों के अंदर रहना उनकी नियति बन गई। वे घूंघट के बिना कहीं आ जा नहीं सकती थीं। घर के अंदर भी उसे घूंघट तान कर रहना होता था। चाहे इस प्रथा से नारी को किसी भी प्रकार का कष्ट हो लेकिन वह इसके खिलाफ बोल नहीं सकती थी। यही कारण है कि उसका सर्वांगीण विकास रूक गया। वह घुट-घुट कर रहती। स्वतंत्रता छिन जाने पर वह समाज की किसी भी प्रगति में हाथ नहीं बटा सकती थी। इस प्रथा से एक प्रकार से समाज के आधे हिस्से को जहां उसके अधिकार से वंचित कर दिया गया वहीं समाज की भी हानि हुई। हरिऔध विचारशील कवि थे। इन सभी सामाजिक बुराइयों को उन्होंने बारीकी से परखा था। यही कारण है कि उसका वास्तविक चित्रण वे कर पाए। यह अंश देखिए:

> जीवन, जीवन के सुख को, अपने ही से खोता है।
> मृदुता का कठोरता से, दुख-भूल मिलन होता है।
> कितनी ही कोमल कलियां, मुख को भी खोल न पातीं,
> हो दलित कठोर करों से, मुरझा कर हैं झड़ जाती।
> शुचि ज्ञानभानु उर में ही, सहा छिपा रह जाता।
> उसका प्रकाश अवनी में, है कभी न होने पाता।
> गंगा जमुना की धारा, बहती, सूने सदनों में।
> परदे के भीतर सागर, लहराता है नयनों में।

कवि ने नारी के दुःख का कितना मार्मिक रूप प्रस्तुत किया है। अपने दुःखों को समेटे हुए नारी घुलती रही है। वह अपने आंसुओं को भी दिखा नहीं पाती। दिन रात उसके नयनों से अश्रुधारा बहती रहती है मानों गंगा तथा यमुना नदियों की धारा बह रही हो। परदे के पीछे दुःख का अपार सागर हिलोरे लेता रहता है। उसके हृदय की बात जुबान पर आ ही नहीं पाती। कोई उसके चेहरे के भाव को पढ़ नहीं सकता। कारण वह पर्दे में कैद है। इस प्रकार जाने कितनी महिलाएं अपनी आशा आकांक्षाओं को दबाते हुए समय की धारा में समाप्त हो गई, किसी ने उनकी सुध न ली। कवि इस कवितांश में यही कहना चाहता है कि नारी को इस दुर्दशा से बाहर निकालना होगा। उसे सब प्रकार की स्वतंत्रता देनी होगी। आज जब हम चारों ओर नारी मुक्ति आंदोलन का नारा बुलंद होते हुए देखते हैं तो हमें यह भी हमेशा याद रखना चाहिए कि इस आंदोलन की शुरूआत उन्नीसवीं सदी में ही हरिऔध जैसे कवियों ने ही की थी। यह नवजागरण का ही रूप था। कवि समाज और राष्ट्र के प्रति सजग था। वह हर स्तर पर एक नए युग का सूत्रपात करना चाहता था। समाज के प्रत्येक हिस्से को सुदृढ़ बनाने के लिए आवश्यक था कि स्त्री अपने अधिकार को समझे और समाज और राष्ट्र के विकास में पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चले।

भारतीय समाज की सबसे बड़ी कमजोरी है ''जाति व्यवस्था''। यह विडंबना ही है कि संसार का गुरु कहलाने वाला देश भारत जिसने अनेकों महापुरुषों को जन्म दिया उसी

भारत में मानवता की जितनी अवहेलना हुई वह विश्व के किसी हिस्से में नहीं हुई। और इस भेदभाव का सबसे पक्का आधार है जाति व्यवस्था। आज भी, इतनी प्रगति के बाद भी, बाइसवीं सदी की ओर बढ़ने वाले मनुष्य की सभ्यता में यह जाति व्यवस्था रूपी कोढ़ विद्यमान है। आज भी इस व्यवस्था के तहत अनगिनत लोगों को कष्ट उठाना पड़ रहा है। भारतीय समाज में यह व्यवस्था इतनी गहराई तक समाई हुई है कि इससे उबरने में और भी समय लगेगा, लेकिन इसके लिए यह भी आवश्यक है कि इस आधारहीन व्यवस्था को समूल नष्ट किया जाए हमें इस बात पर भी गहराई से विचार करना होगा कि इस व्यवस्था से कितनी हानि हो रही है। इस आधारहीन व्यवस्था के कितने भयानक परिणाम होते रहे हें और आज भी हो रहे हैं उसे हम भलीभंति जानते हैं। किंतु इस सड़ी-गली व्यवस्था के विरूद्ध आरंभ से ही आवाजें उठती रहीं। उन्नीसवीं सदी में तो तमाम बुद्धिजीवी लेखकों ने इस व्यवस्था के खिलाफ अपनी लेखनी उठाई। भारतेन्दु से लेकर वर्तमान सदी तक लेखक ने गद्‌य-पद्‌य के माध्यम से इस व्यवस्था के विरूद्ध कुठाराघात किया। हरिऔध जी ने भी इस सामाजिक विषमता मूलक व्यवस्था के विरूद्ध कड़े शब्दों में आवाज उठाई। यह अंश पढ़िए -

सामाजिक कतिपय कुत्सित नियम।
अति संकुलित छूतछात के विचार।
हर ले रहे हैं आज हमारा सर्वस्व।
गले का भी आज छीन रहे हैं हार।
जिन्हें हम छूते नहीं समझ अछूत।
जो हैं मान गए सदा परम पतित।
पास उनके होता क्या नहीं हृदय।
वेदनाओं से वे होते क्या नहीं व्यथित।

यह भारतीय समाज में कुत्सित नियम के रूप में चल रहा है। मानव-मानव में भेद इतना कि एक-दूसरे को छू नहीं सकते। दूसरी ओर एक और भी महत्वपूर्ण बात कवि कहता है कि जिनको हम अपने से दूर रखते हैं जिन्हें छूने से भी कतराते हैं उन्हीं लोगों का सर्वस्व हम लूट भी लेते हैं। जब अवसर आता है उनके गले का हार भी छीन लेते हैं। आगे कवि हृदय की बात भी कहता है। वह यह भी कहता है कि सभी मानव एक है, क्योंकि जिन्हें हम पतित माने हैं उनके पास भी वैसा ही हृदय है जैसा सभी मानवों के पास। उसमें भी वही धड़कन है उनमें भी सभी प्रकार के भाव उमड़ते हैं। इसलिए सभी मानव एक समान हैं। दलित कहे जाने वालों को उसी प्रकार के सुख दुःख का अनुभव होता है जैसा बाकी लोगों को अतः निष्कर्ष यही है कि सभी मानव की जाति एक है।

समाज में व्याप्त दो बड़ी बुराइयों ''दलित समस्या'' तथा ''नारी समस्या'' को कवि ने अपनी कविताओं में व्यक्त किया है। साथ ही बहुत सी छोटी-छोटी बुराइयों को भी उन्होंने चित्रित किया। लोभी और लालची व्यक्ति समाज के लिए हानिकारक होते हैं। वे अपनी इस प्रवृत्ति से समाज के लोगों को परेशानी में डाल कर खुद मौज उड़ाते हैं। चौपदा में कवि ने ऐसे मनोवृति वाले व्यक्ति को खूब फटकारा है -

है किसी काम का न लाख टका
रख सके जो न ध्यान चिता पट का,
क्यों न बन जायेंगे टके के हम,
दिल टके पर अगर रहा अटका।

कई बार समाज में अधिक उम्र के व्यक्ति अजीब सी वेषभूषा धारण कर लोगों को आकृष्ट करने का प्रयत्न करते हैं। ये खुद को अधिक जवान दिखने की चेष्टा में अपनी ही हंसी उड़वाते हैं। कवि ने ऐसे व्यक्तियों पर चौपदे लिख कर व्यंग्य कसा है। एक वृद्ध व्यक्ति का बहुरूपियापन देखिए -

आंख में सूरमा लगाया है गया,
है घड़ी की होंठ पर न्यारी फबन,
भूलती हैं चितवनें भोली नहीं
तन हुआ बूढ़ा, हुआ बूढ़ा न मन।

उनके उपन्यासों में भी कहीं-कहीं चौपदों द्वारा सामाजिक समस्या को उठाया गया है। धर्म के ठेकेदारों को उन्होंने सावधान करते हुए लिखा-

कितने ही घर हैं पाप न घाले।
कितने ही किये हैं मुंह काले।।
पाप की बान है नहीं अच्छी।
ओ न पापों से कांपने वाले।।
सोते की तेल कान में डाले।
धर्म के हैं तुम्हें पड़े लाले।।
नाव डूबेगी बीच धार मे तेरी।
ओ धरम के पालने वाले।।

(''अधखिला फूल'')

अधखिला फूल में उन्होंने ''ढोंगी साधुओं'' को फटकारा।

''भभूत लगाने से क्या होगा? गेरूआ पहनने से क्या होगा? घर द्वार छोड़ने से क्या होगा। लंगोटी किस काम आवेगी? तुंबा क्या करेगा? साधु होने ही से क्या, जो दूसरों का दुःख मैं न दूर करूँ, दुखिया को मैं सहारा न दूं। जिस काम के करने से देश का भला हो उसमें जी न लगाऊँ।''

उनका मानना है कि झूठा साधू बनने से अच्छा है जरूरतमंद लोगों की सेवा करना। साथ ही ऐसे काम करें जिससे देश की भलाई हो सके।

राष्ट्रीय चेतना उनकी कविता का दूसरा उद्‌देश्य है। ''चुभते-चौपदे'' संग्रह में ''क्या से क्या हो गये'' नामक कविता में उन्होंने अपने अतीत को याद दिलाया है। वे चाहते हैं कि अतीत को ध्यान में रखकर भारतवासी अपनी वर्तमान दुर्दशा को देखें और सुधार करें। यह उदाहरण देखिए-

धूल उनकी है उड़ाई जा रही
धूल में मिल धूल वे हैं फांकते
सब जगत मुंह ताकता जिनका रहा
आज वे हैं मुंह पराया ताकते
बन गए हैं आंगुनों की खान वे
गुन अनूठे हाथ से छन छन छिने
डालते थे जान वे बेजान में
आज वे हैं जानवर जाते गिने

अंग्रेज देश के शासक बन बैठे थे। देश का शोषण कर उन्होंने भारतीय जनता को कंगाल बना दिया था। शासन की क्रूरता का वर्णन कर कवि अंग्रेजी शासन के खिलाफ उनमें जोश भरना चाहता है ताकि वे विद्रोह कर सकें। वे चाहते थे कि फिरंगी देश को छोड़ कर जाएं और भारतीयों का अपना राज स्थापित हो।

घोंटते जो लोग हैं उसका गला।
क्यों नहीं उनका लहू हम गार लें।।
है हमारी जाति का दम घुट रहा।

हम भला दम किस तरह से मार लें।
सोज समान अब करो सुख का।
दुःख बहुत दिन तलक रहे चिमटे।।
गा चलो गीत जाति हित के अब।
गा चुके कम न दादरे खेमटे।।

इस प्रकार अपनी गद्य-पद्य रचनाओं में कविवर हरिऔध जी ने विभिन्न सामाजिक-राजनीतिक समसामयिक समस्याओं को स्थान दिया और राष्ट्रीय चेतना एवं नवजागरण के लिए कार्य किया।

बोध प्रश्न 2

दो तीन पंक्तियों में उत्तर लिखिए-

1) वृद्ध विवाह से संबंधित हरिऔध जी की रचना का नाम क्या है? इस रचना में उन्होंने क्या संदेश दिया है?

....

....

....

2) ''सनेही'' नामक रचना की विषयवस्तु क्या है?

....

....

....

3) बाल विवाह के संबंध में कवि की क्या राय है?

....

....

....

4) ''पर्दा प्रथा'' के बारे में कवि ने क्या विचार रखा?

....

....

....

5) जाति व्यवस्था पर प्रहार से संबंधित हरिऔध जी की रचना की चार पंक्तियाँ लिखिए।

....

....

....

....

....

6) ''क्या से क्या हो गये'' रचना के माध्यम से कवि क्या संदेश देना चाहता है?

....

....

....

अभ्यास

अ) सामाजिक समस्या के बारे में हरिऔध जी के विचारों को दस पंक्तियों में स्पष्ट कीजिएः

....

....

....

....

4.5 प्रमुख कृति : प्रिय प्रवास

हमने देखा कि अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' ने पच्चीस वर्ष की उम्र से साहित्य रचना शुरू की। उन्होंने प्रथमतः नाटक तथा उपन्यासों की रचना की। फिर कविता रचना की ओर उनका ध्यान गया। ब्रजभाषा से आरंभ कर उन्होंने खड़ी बोली में विभिन्न विषयों पर काव्य रचना की। समसामयिक विषयों पर लेखन कर उन्होंने देश की सामाजिक एवं राजनीतिक परिवर्तन में अपना योगदान दिया। सारी कृतियों में सबसे प्रसिद्ध रचना है ''प्रिय प्रवास''। इसी रचना के माध्यम से वे हिंदी साहित्य के इतिहास में सदा के लिए अमर हो गए। पौराणिक विषय पर आधारित होते हुए भी इस रचना की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें युगानुकूल समस्या को उठाया गया है। कथा पुरानी है लेकिन उद्देश्य नयापन लिए हुए है। परंपरा से हट कर उन्होने एक नया प्रयोग किया। इस रचना का प्रकाशन सन् 1914 में हुआ। इस रचना की एक और खासियत यह है कि इसे खड़ी बोली का प्रथम महाकाव्य होने का गौरव प्राप्त है। काव्य का वर्ण विषय आध्यात्मिक तथा लौकिक प्रेम है किंतु उसे समसामयिक संदर्भ में रख कर लोक पक्ष तथा लोक कल्याण को ही अधिक महत्व दिया गया है। वास्तव में ''प्रिय प्रवास'' की रचना के पीछे तत्कालीन कारण है। द्विवेदी युग में जिस आधुनिकता का आगमन हो रहा था उससे परंपरागत काव्य रचनाओं का आधार कम होता जा रहा था। सुधारात्मक एवं जन-जागरण आंदोलन के कारण सभी क्षेत्र में बदलाव आ रहा था। उस समय के सभी बुद्धिजीवियों को भारत के अतीत के सांस्कृतिक, सामाजिक एवं अन्य संदर्भों के बारे में एक नए रूप से विचार करने के लिए बाधित कर दिया था। लम्बी पराधीनता के कारण भारतीय अपने विचारों में संकुचित हो गए थे। स्वतंत्र चिंतन का उनका आधार खो गया था। लेकिन अंग्रेजी शिक्षा के कारण तथा स्वयं यहां के विचारकों के विचारों का पुनर्मूल्यांकन करने के कारण नवजागरण की लहर आई।

कोई कवि अपने परिवार, समाज एवं तत्कालीन भिन्न परिस्थितियों से प्रभावित होकर काव्य रचना करता है। ''प्रिय प्रवास'' रचना के पीछे कोई कारण है। हरिऔध का परिवार कृष्ण भक्त था। कृष्ण के चरित्र का गुणगान उन्होंने बचपन से ही सुन रखा था। उनके मन में एक अलौकिक शक्ति के रूप में कृष्ण की छवि का निर्माण हो गया था। किंतु कवि केवल कृष्ण के अलौकिक रूप से संतुष्ट नहीं थे। उनके मन में बार-बार यह प्रश्न उठता था कि जो अलौकिक और शक्तिमान है तो उसे जनकल्याण भी करना चाहिए। इस भावना ने ही उनके हृदय में कृष्ण का लोक कल्याणकारी रूप चित्रित करने को उत्सुक किया। एक

और दुर्घटना ने उन्हें इस रचना के लिए प्रवृत्त किया। सन् 1905 में अचानक कवि की पत्नी का निधन हो गया। उनके जीवन में एक रिक्तता उत्पन्न हो गई थी। इस रिक्तता को उन्होंने प्रिय प्रवास की रचना करके पूरा किया। उनकी मूक व्यथा ने इस रचना में स्थान पाया। जिस प्रकार कृष्ण का मथुरा गमन सभी ब्रजवासियों के लिए व्यथा का कारण बना, उसी प्रकार पत्नी के बिछोह ने कवि को सदा के लिए विरह की पीड़ा से युक्त कर दिया। किंतु जब कवि ने इस महाकाव्य की रचना की तो उनकी पीड़ा में थोड़ी कमी आई। साथ ही कवि व्यक्तिगत पीड़ा से उठ कर समष्टिगत पीड़ा में शामिल हो गया। उनके कृष्ण अब साधारण मानव नायक बन गए जो सभी जनों का कल्याण चाहते हैं।

यह महाकाव्य सत्रह सर्गों में विभक्त है। संक्षिप्त रूप से सर्गगत् कथा इस प्रकार है -

पहला सर्ग संध्या का वर्णन किया है। कृष्ण संध्या समय गोचारण कराने के बाद अपने ग्वाल-बाल सखाओं के साथ गोकुल ग्राम की ओर लौट रहे हैं इस दृश्य को देखने के लिए सारा गांव उमड़ पड़ता है। यहां तक कि लोग अपने दैनिक कार्य भी भूल जाते हैं। सब भाव विभोर हो कृष्ण के इस मनमोहककारी रूप को देखना चाहते हैं। कृष्ण की वंशी सुनते सब दौड़ पड़ते हैं -

सकल वासर आकुल से रहे।
अखिल मानव गोकुल ग्राम के।
अब दिनान्त विलोकित ही बढ़ी।
ब्रज-विभूषण दर्शन लालसा।।
सुन पड़ा स्वर ज्यों कल वेणु का
सकल ग्राम समुत्सुक हो उठा।

दूसरे सर्ग का आरंभ रात्रि के आधे पहर बीत जाने पर होता है। सारा गोकुल गांव सो रहा होता है। रात्रि में ठीक दोपहर बीत जाने पर दुर्देव द्वारा यह घोषणा सुनाई जाती है कि कृष्ण कल मथुरा चले जायेंगे। यह खबर तेजी से सारे गांव में फैल जाती है सारे ग्रामवासियों को इस सूचना से गहरा आघात पहुंचता है। वे व्याकुल हो जाते हैं -

निमिष में यह भीषण घोषणा।
रजनि अंक कलंकित कारिणी।
मृदु समीरण के सहकार से
अखिल गोकुल ग्राममयी हुई।
कमल लोचन कृष्ण वियोग की
अशनि पात सभा यह सूचना।
परम आकुल गोकुल के लिए।
अति निष्टकारी घटना हुई।

तीसरे सर्ग में नंद बाबा की व्याकुलता तथा माता यशोदा द्वारा कृष्ण की कुशलता के लिए मनौतियां मानने का वर्णन है -

प्रमुदित मथुरा के मानवों को बना के
सकुशल रह के औ विघ्न बाधा बचा के।
निज प्रिय सुत दोनों साथ लेके सुखी हो।
जिस दिन पलटेंगे गेह स्वामी हमारे।
प्रभु दिवस उसी में सात्विकी रीति द्वारा।
परम शुचि बड़े ही दिव्य आयोजनों से।
विधि-सुदित करूंगी मंजु पादाश्जा पूजा।
उपकृत अति ही हो के आपकी सत्कृपा।

चौथे सर्ग में राधा के मनमोहक रूप को प्रस्तुत किया गया है तथा कृष्ण के प्रति उनके अपार प्रेम को दर्शाया गया है। राधा अपना सर्वस्व कृष्ण के प्रेम पर न्योछावर करती है-

ह्रदय चरण में तो मैं चढ़ ही चुकी हूँ।
सविधि वरण की थी कामना और मेरी।।

पांचवें सर्ग में पूरे गोकुल ग्राम में व्याप्त शोक का वर्णन किया गया है। कृष्ण मथुरा चले गए। सबसे अधिक दुःखी उनकी माता यशोदा है -

अहह दिवस ऐसा हाय। क्यों आज आया?
निज प्रिय सुत से जो मैं जुदा हो रही हूँ?
अगणित गुणावली प्राण से नाच प्यारी।
यह अनुपम थाली मैं तुम्हें सौपती हूँ।

छठे सर्ग में भी सारे गोकुल ग्रामवासियों के विरह का ही वर्णन है। विशेषरूप से माता यशोदा तथा राधा के दुःख को कवि ने बड़े ही मार्मिक रूप में प्रस्तुत किया है।

सातवें सर्ग में यह दिखाया गया है कि जब बाबा नंद मथुरा से अकेले गोकुल लौट आते है तो माता यशोदा अपने लाल के बारे में उनसे तरह-तरह के प्रश्न करती हैं- वात्सल्य रस का अनुपम वर्णन इस सर्ग में देखने को मिलता है-

प्रिय पति वह मेरा प्राण प्यारा कहां है।
दुःख जलधि निमग्ना का सहारा कहां है।
अब तक जिसको मैं देख के जी सकी हूँ।
वह ह्रदय हमारा नेत्र तारा कहां है।

आठवें सर्ग में गोकुलवासियों द्वारा बीते हुए दिनों की याद करते हुए दिखया गया है। ग्रामवासियों को विश्वास हो जाता है कि अब कृष्ण वापस नहीं आयेंगे तो वे उनके साथ की गई लीलाओं को याद करते हुए एक दूसरे को सुनाते है और इसी में संतोष पाने की चेष्टा कर रहे हैं।

नवें सर्ग में स्वयं श्री कृष्ण द्वारा गोकुल की याद का दर्शाया गया है। राज के प्रशासन के कार्यों से मुक्ति मिलने पर कृष्ण गोकुल में बिताए दिनों की याद करते हैं और विरह में खो जाते है। ऐसे समय में उद्धव उन्हें समझाने की चेष्टा करते हैं। इस सर्ग में प्रकृति का बहुत ही मनोहारी रूप प्रस्तुत किया गया है।

दसवें सर्ग में उद्धव का गोकुल आगमन तथा यशोदा नंद द्वारा श्री कृष्ण के बाल क्रीड़ाओं का वर्णन है। यशोदा अपने लाल की कुशलता पूछती है-

मेरे-प्यारे सकुशल सुखी और सानंद तो है।
कोई चिंता मलिन उनको तो नहीं है बनाती?

ग्यारहवें सर्ग में उद्धव द्वारा गोकुल वासियों को सांत्वना तथा उपदेश देने का वर्णन है। इसी सर्ग में कालीया मर्दन घटना का वर्णन है। इस सर्ग की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि कवि ने श्रीकृष्ण के लोकोपकारक रूप का चित्रण किया है। श्री कृष्ण एक जनसामान्य के नेता के रूप में प्रण करते हैं -

अतः करूंगा यह कार्य स्वयं।
स्व-हस्त में दुर्लभ प्राण को लिये।
x x x
प्रवाह होते तक शेष-श्वास के।
स-शक्त होते तक एक लोभ के।।
किया करूंगा हित सर्व-भूत का।

बारहवें सर्ग में भी श्री कृष्ण को जन नेता तथा लोक कल्याणकारण रूप में प्रस्तुत किया गया है। राजा का पुत्र होने के बावजूद श्री कृष्ण घमंडी नहीं थे वे सदा जनता की भलाई चाहते थे-

थे राज पुत्र उनमें मद था न तो भी।
वे दीन के सदन थे अधिकांश जाते।
बातें मनोरम सुना दुख जानते थे।
औ ये विमोचन उसे करते कृपा से।।

तेरहवें सर्ग में भी श्री कृष्ण को एक सच्चा समाज सेवी चिंतक तथा जननायक के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

तदपि चित बना है, श्याम का चारू ऐसा।
वह निज-सुहरदों से थे स्वयं हार खाते।
वह कतिपय जीते खेल को थे जिताते।
सफलित करने को बालकों में उमंगें।

चौदहवां सर्ग गोपी-उद्धव संवाद पर आधारित है। इसमें युगानुकूल संवाद रखने का प्रयत्न किया गया है। उद्धव गोपिकाओं को यह बताने का प्रयत्न करते हैं कि प्रेम में कुछ नहीं रखा। यह व्यर्थ की बात है। दूसरी ओर गोपियां प्रेम की सार्थकता साबित करती हैं।

पन्द्रहवें सर्ग में कवि ने कृष्ण के विरह में पागल गोपिकाओं का सजीव एवं मार्मिक चित्रण किया है। गोपिकाएं कहती हैं कि जिसने दुःख की पीड़ा स्वयं न झेली हो वह उसे क्या जानेगा-

जो होता है सुखित, उसको अन्य की वेदनाएं।
क्या होती है विदित वह जो भुक्त भोगी न होवे।

सोलहवें सर्ग उद्धव-राधा संवाद का वर्णन है। एक ओर उद्धव अपने ज्ञान से राधा के प्रेम को व्यर्थ साबित करना चाहते हैं तो दूसरी ओर राधा अपने प्रेम की महानता एवं उपयोगिता को बताना चाहती है। अंत में राधा की जीत होती है। उद्धव को अपने झूठे ज्ञान का आभास हो जाता है और वे प्रेम की महानता को पहचान जाते हैं।

सतरहवें और अंतिम सर्ग में कवि ने यही दिखाने का प्रयत्न किया है कि व्यक्तिगत प्रेम से ऊंचा विश्व प्रेम होता है। राधा और कृष्ण कभी दुबारा मिल नहीं पाते तथा दोनों ने अपने व्यक्तिगत प्रेम को विश्व प्रेम में परिवर्तित कर दिया। राधा अब मात्र कृष्ण की प्रेमिका नहीं बल्कि वह लोक सेविका बन गई है। उसे ग्रामवासियों की सेवा करने में ही आनंद मिलता है-

संलग्ना हो विविध कितने सांत्वना कार्य में भी।
वे सेवा थी, सतत करती वृद्ध रोगी जनों की।

बोध प्रश्न 3

निम्नलिखित प्रश्नों के तीन पंक्तियों में उत्तर लिखिए-

1) हरिऔध जी के द्वारा प्रिय प्रवास की रचना के पीछे छिपे दो प्रेरक कारणों को बताइए।

....

....

....

2) ''प्रिय प्रवास'' के तीसरे सर्ग का मुख्य वर्णन विषय क्या है?

....

....

....

....

3) सातवें सर्ग में कवि ने किस बात पर अधिक जोर दिया है?

....

....

....

4) ''प्रिय प्रवास'' रचना में ग्यारहवां सर्ग क्यों महत्वपूर्ण है?

....

....

....

5) सोलहवें सर्ग में कवि ने किस विषय की सार्थकता साबित की है?

....

....

....

6) प्रिय प्रवास रचना की समाप्ति किस रूप में हुई है?

....

....

....

4.6 सारांश

- सन् 1857 की क्रांति के बाद भारतीय नागरिकों नवजागरण का सूत्रपात हुआ। धीरे-धीरे जागरूकता बढ़ती गई। कांग्रेस की स्थापना से लोगों को बल मिला। राष्ट्रीय आंदोलन तेज हुआ। आप तत्कालीन परिस्थितियों को बता सकते हैं।
- सन् 1865 में अयोध्यासिंह उपाध्याय का जन्म हुआ। देश की परिस्थितियों ने उन्हें प्रभावित किया। छोटी उम्र से उन्होंने साहित्य रचना शुरू की। आप कवि के जीवन एवं कृतित्व का परिचय दे सकेंगे।
- विभिन्न गद्य-पद्य रचनाओं के माध्यम से हरिऔध जी ने तत्कालीन राष्ट्रीय एवं विभिन्न समाजिक समस्याओं को उजागर किया। आप उनके साहित्य में व्यक्त इन तत्वों का विश्लेषण कर सकते हैं।
- ''प्रिय प्रवास'' हरिऔध जी की ख्याति प्राप्त कृति है। इसके माध्यम से कवि ने पौराणिक कथा को नया आयाम दिया है। आप इस रचना के कुछ अंश का वाचन करेंगे तथा इसके उद्देश्य को स्पष्ट कर सकते हैं।

4.7 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1, 2, 3 देखें भाग 4.2

4, 5, 6 देखें उपभाग 4.3.1

7, 8, 9, 10, 11 देखें उपभाग 4.3.2

बोध प्रश्न 2

1, 2, 3, 4, 5, 6 देखें भाग 4.4

अभ्यास

अ) देखें भाग 4.4

बोध प्रश्न-3

1, 2, 3, 4, 5, 6 देखें भाग 4.5

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 5 मैथिलीशरण गुप्त और उनकी कविता

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्‌देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 जीवन और साहित्य (जीवन परिचय, रचनाएँ)

5.2.1 युगीन परिवेश और भारतीय नवजागरण

5.2.2 आधुनिक हिंदी काव्य चेतना

5.3 भाव पक्ष

5.3.1 अतीत का आधार (इतिहास बोध)

5.3.2 नारी सम्मान की भावना

5.3.3 मानवतावादी दृष्टिकोण

5.3.4 राष्ट्रीय भावना और समाज सुधार का स्वर

5.4 संरचना शिल्प

5.4.1 काव्य भाषा

5.4.2 काव्य-शिल्प

5.5 सारांश

5.6 शब्दावली

5.7 उपयोगी पुस्तकें

5.8 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

5.0 उद्‌देश्य

इस इकाई में आप मैथिलीशरण गुप्त के काव्य का अध्ययन करेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- गुप्तजी के जीवन और उनकी रचनाओं के बारे में बता सकेंगे;
- हिंदी नवजागरण के उद्‌भव और विकास के कारणों को बता सकेंगे;
- आधुनिक हिंदी काव्य चेतना के विकास को समझ सकेंगे;
- राष्ट्रीय चेतना, सामाजिक चेतना और सांस्कृतिक द्विवेदी युग के प्रमुख कवियों के विषय में बता सकेंगे;
- गुप्तजी के काव्य में हिंदी नवजागरण की चेतना के विकास को समझा सकेंगे;
- गुप्तजी की राष्ट्रीय भावना और सामाजिक चेतना की व्याख्या कर सकेंगे;
- गुप्तजी की मानवतावादी दृष्टि का वर्णन कर सकेंगे;
- गुप्तजी की नारी सम्मान भावना का वर्णन कर सकेंगे;
- गुप्तजी के खड़ी बोली के विकास में योगदान के बारे में बता सकेंगे;
- गुप्तजी की काव्य विशेषताओं को बता सकेंगे।

5.1 प्रस्तावना

आपने इकाई 3 में ''द्विवेदी युगीन काव्य : स्वरूप और विकास'' शीर्षक के अंतर्गत हिंदी काव्य का स्वरूप और विकास तथा द्विवेदी जी और उनकी शिष्य मंडली के कवियों के योगदान का अध्ययन किया है। इस इकाई में आप द्विवेदी मंडल के प्रमुख कवि मैथिलीशरण गुप्त के काव्य का अध्ययन करेंगे। भारतीय नवजागरण के विकास में गुप्तजी का योगदान और उसे निश्चित दिशा में देने में उनकी जो महत्वपूर्ण भूमिका रही है, इसकी चर्चा करेंगे तथा नवजागरण से जिन विभिन्न प्रवृत्तियों का उद्भव हुआ, उनकी अभिव्यक्ति गुप्तजी के काव्य में किस रूप में हुई है। गुप्तजी के काव्य में युग-चेतना तीन स्तरों पर अभिव्यक्त हुई है। प्रथम उनके अतीत गौरव-गान में, दूसरे गांधीवादी विचारों की प्रस्तुति में और तीसरे मानवतावादी धरातल पर विश्व राज्य की कल्पना में।

अतीत गौरव गान के द्वारा गुप्तजी ने राष्ट्रीय चेतना को जगाने का कार्य किया जिसके लिए पौराणिक, ऐतिहासिक कथानकों का आधार लेकर अतीत के गौरवशाली चित्र को जनमानस के समक्ष साकार किया। जिससे हीनता की भावना से मुक्त होकर स्वाधीन भारत का सुनहरा सपना देखा जाए। राष्ट्रीय आंदोलन को जब महात्मा गांधी का नेतृत्व प्राप्त हुआ तो गांधीवादी विचारों का प्रभाव साहित्य पर भी पड़ा। गांधीवादी प्रभाव को ग्रहण करते हुए गुप्तजी ने राष्ट्रवादी चिन्तन को विश्व-व्यापी मानवतावादी आयाम दिया। गांधी जी के सत्य और अहिंसा के सिद्धांत को गुप्तजी ने बीज मंत्र के रूप में ग्रहण किया है। तत्कालीन युग चेतना को स्वर देते हुए समाज में नारी की दयनीय स्थिति के प्रति चिंता व्यक्त करते हुए साहित्य में उपेक्षित नारियों की वेदना को अभिव्यक्त किया। गुप्तजी ने दबी हुई नारियों में आत्मविश्वास का भाव जगाया है, उन्हें अबला के स्थान पर सबला बनाया है। दलित, किसान, शोषितों की शोचनीय स्थिति पर प्रकाश डालकर उनके उद्धार की आवश्यकता और उनके आर्थिक, सामाजिक अधिकारों की मांग की। उत्पीड़न और शोषण के विरूद्ध उनका काव्य आक्रोश कर उठता है। सामाजिक और राष्ट्रीय चेतना के रूप में सर्व-धर्म समभाव और धार्मिक एकता की आवश्यकता पर ज़ोर दिया । गुप्तजी की साहित्यिक यात्रा राष्ट्रीयता और विश्व मानवता की एक लम्बी यात्रा है। आइए, हम गुप्तजी के काव्य का विस्तार से अध्ययन करें।

5.2 जीवन और साहित्य (जीवन परिचय, रचनाएँ)

मैथिलीशरण गुप्त का जन्म 3 अगस्त, सन् 1886 को चिरगांव (झांसी-उत्तर प्रदेश) के एक वैश्य परिवार में हुआ था। इनके पिता का नाम सेठ रामचरण और माता का श्रीमती काशीबाई था। सेठ रामचरण धार्मिक प्रवृत्ति के पुरुष थे। धार्मिक कथा-वार्ता, भजन-पूजन उनका दैनिक नियम था। स्वभावतः गुप्तजी पर भी इस वातावरण का प्रभाव पड़ा। गुप्तजी की आरंभिक शिक्षा झांसी के राजकीय विद्यालय में हुई। परन्तु उनका मन विद्यालय से अधिक घर में रमता था। अतः झांसी से लौटने पर स्वतंत्र रूप से संस्कृत, हिंदी तथा बंगला साहित्य का अध्ययन किया। धीरे-धीरे कथा साहित्य तथा उपन्यास आदि में रूचि बढ़ने लगी। इतिहास, पुराण आदि के साथ संस्कृत के काव्य और नाटकों का भी इन्होंने अध्ययन किया। कालिदास गुप्तजी के अत्यन्त प्रिय कवि थे। अंग्रेज़ी सीखने का प्रयत्न भी किया परन्तु उसमें विशेष गति नहीं रही।

गुप्तजी के पिता की कविता करने में रुचि थी। उन्होंने ''कवितावली'' के अनुकरण पर कुछ सवैये लिखे थे। लिखने के बाद वे मैथिलीशरण गुप्त को पढ़ने के लिए देते, तब गुप्तजी उसे पढ़कर उसमें कुछ संशोधन सुझाते थे, उनके पिता इस पर बहुत हर्षित होते और पुत्र की बात को मानते। तभी से गुप्त जी ने कविता लेखन की प्रेरणा अपने पिता से ग्रहण की। इनके पिता भक्त, कवि, कलाविद् और छन्द-शास्त्र के ज्ञाता थे। इन सबका प्रभाव कवि

के मन पर पड़ना स्वाभाविक था। उन्होंने पन्द्रह-सोलह वर्ष की अवस्था में ही अपने पिता की काव्य शैली का अनुकरण करना प्रारंभ किया।

गुप्त जी का पारिवारिक जीवन अधिक सुखी नहीं रहा। इनकी दो पत्नियों की असमय मृत्यु हुई। उनकी तीसरी पत्नी सरयू देवी और उनके एकमात्र पुत्र श्री उर्मिलाशरण गुप्तजी हैं, जिन्होंने प्रकाशन आदि का कार्यभार संभाला है। गुप्तजी ने अधिकतर जीवन एकान्त काव्य साधना में रहकर बिताया। उनका स्वभाव संकोचशील होने के कारण सार्वजनिक समारोह आदि से वे दूर ही रहते थे। उन्हें अपने परिवार में सभी प्रकार का मान-सम्मान प्राप्त हुआ। कवि की स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर महात्मा गांधी ने उन्हें ''मैथिली काव्य मान'' ग्रंथ भेंट करते हुए ''राष्ट्रकवि'' की उपाधि से सम्मानित किया। 1936 में साकेत के लिए हिन्दुस्तानी एकेडमी पुरस्कार और 1938 में 'मंगलाप्रसाद पारितोषिक' प्राप्त हुआ। 1946 में ''हिंदी साहित्य सम्मेलन'' ने उन्हें ''साहित्य वाचस्पति'' से अलंकृत किया। 1948 में आगरा विश्वविद्यालय और 1960 में काशी विश्वविद्यालय ने डी. लिट् की मानद उपाधि देकर उन्हें सम्मानित किया। 1952 में गुप्तजी राज्यसभा के सदस्य मनोनीत हुए। 1954 में ''पद्मभूषण'' से उन्हें सम्मानित किया गया। इसी वर्ष 12 दिसंबर 1964 को गुप्त जी का देहान्त हुआ। सुप्रसिद्ध कवि सियारामशरण गुप्त, गुप्तजी के छोटे भाई थे।

रचनाएँ :

मैथिलीशरण गुप्त की काव्य रचनाओं की संख्या 34 के आसपास है। गुप्तजी सततः रूप से 50 वर्षों तक काव्य लेखन करते रहे। मूल काव्य रचनाओं के अलावा, गुप्तजी ने उर्दू, संस्कृत और बंगला के ग्रंथों का हिंदी में अनुवाद किया है। उनकी संख्या लगभग 9 है।

गुप्तजी के काव्य रचनाओं की सूची :

काव्य संग्रह

1. जयद्रथ
2. रंग में भंग
3. भारत-भारती
4. किसान
5. वैतालिक
6. शकुन्तला
7. पंचवटी
8. अवध
9. स्वदेश संगीत
10. हिन्दू
11. त्रिपथगा
12. गुरुकुल
13 विकटभट
14. झंकार
15. साकेत
16. यशोधरा
17. मंगलधर
18. द्वापर
19. सिद्धराज
20. नहुष
21. कुणालगीत
22. विश्ववेदना
23. काबा और कर्बला
24. अजित
25. प्रदक्षिण
26. अंजलि और अर्ध्य
27 पृथ्वी पुत्र
28. जयभारत
29. दिवोदास
30. राजा और प्रेम
31. विष्णुप्रिया
32. जयिनी
33. रत्नावली
34. लीला
35. उच्छ्वास
36. पद्यप्रबंध
37. पत्रावली

अनुवाद ग्रन्थ

विरहिणी वज्रांगना, मेघनाथ वध, प्लासी का युद्ध, रूबाइयात उमर खय्याम, स्वप्नवासवदत्ता, दूत घटोत्कच, गीतामृत, वृत्र संहार, वीरांगना।

5.2.1 युगीन परिवेश और भारतीय नवजागरण

मैथिलीशरण गुप्त आधुनिक हिंदी काव्य जगत् में राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना के प्रतिनिधि कवि हैं। उनका संपूर्ण काव्य उस युग के राष्ट्रीय और सांस्कृतिक चेतना विकास के प्रत्येक चरण में प्रभाव ग्रहण करता गया और हिंदी नवजागरण को अपना योगदान देता रहा।

गुप्तजी के काव्य में व्यक्त युगीन संदर्भों को समझने के लिए उस समय की राष्ट्रीय, सांस्कृतिक और सामाजिक परिस्थितियों को समझना आवश्यक है। 19वीं शताब्दी में मध्यकालीन सामन्तवादी विचारधारा और जीवन पद्धति के विरोध में नयीं विचारधारा का उदय हुआ। अंग्रेज़ी शासन द्वारा संचालित स्कूलों, कॉलेजों और इसाई मिशनरियों द्वारा पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान और धर्म-दर्शन का प्रचार हो रहा था। इस पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान के आक्रमण से शताब्दियों से कमज़ोर और सोई हुई भारतीय सांस्कृतिक चेतना को जगाया। अपने अतीत को फिर से पहचानने के लिए विवश किया। जागृत भारतीय जनमानस ने यह अनुभव किया कि पश्चिम के विचार और उसकी जीवन-पद्धति में उसके ज्ञान-विज्ञान को छोड़कर ऐसी कोई विशेषता नहीं है जिसको आत्मसात किया जाए। भारतीय आदर्श, रीति-नीति, परंपरा और गौरव के प्रति जनमानस में श्रद्धा उत्पन्न होने लगी और इस अतीत गौरव से भविष्य के लिए शक्ति प्राप्त करना आरंभ किया। पराधीनता के कारण जो आत्महीनता का भाव जनता में आया था वह दूर होकर उनमें आत्मविश्वास पैदा हुआ। इसमें सांस्कृतिक पुनरूत्थान की प्रक्रिया को बल मिला। सांस्कृतिक तथा सामाजिक नवजागरण में सामाजिक सुधारकों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। राजा राममोहन राय ने ब्रह्म समाज की स्थापना द्वारा हिंदु धर्म को रूढ़ियों और आडम्बरों से मुक्त करके उसके शुद्ध रूप से अपनाने का आग्रह किया। प्राचीन परंपराओं से मुक्ति दिलाकर आधुनिकता की ओर ले जाने का उनका प्रयास था। समाज सुधार की दृष्टि से समाज में स्थित असामाजिक प्रथा-परंपराएँ जैसे जातिप्रथा, पर्दा प्रथा, बाल-विवाह, सतीप्रथा का विरोध किया और स्त्री-शिक्षा, विधवा-पुनर्विवाह का समर्थन किया। स्वामी दयानन्द सरस्वती, रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द आदि ने अपने अतीत, साहित्य और संस्कृति के प्रति श्रद्धा और गौरव की भावना जागृत करने का प्रयास किया। विश्व मानव कल्याण के लिए भारतीय सांस्कृतिक उत्थान पर उन्होंने बल दिया। वे यह जान चुके थे कि भारत विश्व कल्याण की भूमिका तब तक नहीं निभा सकता, जब तक उसे राजनीतिक और आर्थिक शोषण से मुक्ति नहीं मिल जाती। स्वामी विवेकानन्द ने धर्म के पुनरूज्जीवन द्वारा कल्याण की भावना का प्रसार किया। नारी जागरण और नारी उद्धार पर बल देने वाले विभिन्न समाज सुधारकों ने नारी जाति के प्रति सम्मान और आदर भाव की आवश्यकता पर विशेष बल दिया। इस सामाजिक, सांस्कृतिक जागरण ने समाज को अन्धकार युग से निकालकर नवीन प्रकाश दिखाने का कार्य किया।

नवजागरण की चेतना का विकास बीसवीं शताब्दी में राष्ट्रीय चेतना के रूप में सामने आया। सन् 1885 में कांग्रेस महासभा की स्थापना, सन् 1905 में बंगाल के विभाजन और देश में चल रहे स्वतंत्रता आंदोलनों के कारण जो जागृति हुई, उसके फलस्वरूप भारतीय साहित्य में राष्ट्रीय भावना का स्वर ऊँचा हुआ, जिसकी अभिव्यक्ति प्रथम भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के साहित्य में हुई। भारतेन्दु और उनके मंडल के कवियों ने भारत की पराधीनता और दुर्दशा के प्रति दुःख प्रकट करके भारतीय जनमानस में अंग्रेज़ी राज के विरूद्ध क्षोभ निर्माण किया। आगे चलकर गांधी जी के नेतृत्व में देशव्यापी राष्ट्रीय आंदोलन ने राष्ट्रीय चेतना का रूप लिया। नई चेतना अथवा नवजागरण के फलस्वरूप भारतीय साहित्य के स्वरूप में परिवर्तन हुआ। साहित्य में मानवतावादी दृष्टि का विकास हुआ। कवियों ने अलौकिक और परलौकिक तत्वों से हटकर अपने चारों ओर के वातावरण और परिवेश से अपने काव्य विषय चुनना प्रारंभ किया। देश की मुक्ति के लिए साहित्य के द्वारा जन चेतना जगाने का प्रयास किया। हिंदी साहित्य में इन प्रवृत्तियों का सूत्रपात भारतेन्दु और द्विवेदी युग में हो चुका था। द्विवेदी युग के मुख्य कवि मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में नवजागरण

से निर्मित सभी प्रवृत्तियों की अभिव्यक्ति का क्या स्वरूप है, इसका अध्ययन हम आगे कर रहे हैं।

5.2.2 आधुनिक हिंदी काव्य चेतना

नवजागरण की चेतना ने जिस नवीन साहित्य को जन्म दिय उसका उत्तरोत्तर विकास सर्वप्रथम बंगला साहित्य में दिखाई देता है। रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने इस पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करते हुए प्राचीनता के अनुकरण और पूर्वजों की विरासत का संदेश दिया। सांस्कृतिक चेतना का सर्वप्रथम उद्घोष हिंदी के भारतेन्दु युग के साहित्य में हुआ। हिंदी साहित्य रीतिकालीन श्रृंगारिकता से स्वयं को मुक्त करके दशप्रेम को स्वर देने में सफल रहा। समकालीन परिवेश के प्रति कवि जागरूक हुए और काव्य विषयों का विस्तार हुआ। मातृभूमि-प्रेम, स्वदेश-प्रेम, शिक्षा-प्रचार, नारी-सम्मान की भावना, मानवतावाद काव्य के विषय बनने लगे। देश की आर्थिक, सांस्कृतिक और सामाजिक दुर्दशा पर क्षोभ और रोष प्रकट होने लगा। भारतेन्दु साहित्य का मूल स्वर देशप्रेम था। इस भावना का पूर्ण विकास बीसवीं शती के प्रथम दो दशकों में द्विवेदी युग के साहित्य में दिखाई देता है। भारतेन्दु युग के कवियों ने जहाँ देश की दुर्दशा पर केवल दुःख प्रकट किया था, वहां द्विवेदी युग के कवियों ने स्वतंत्रता प्राप्ति का संकल्प व्यक्त किया और उसके लिए आत्म-बलिदान की भावनाओं को स्वर दिया। अतीत और वर्तमान के बीच की असंगति को दिखाकर नए आदर्शों और भारतीय जीवन के आधाररूपी मूल्यों की स्थापना की। पौराणिक सामग्री और विभिन्न प्रसंगों को लेकर वर्तमान युग के संदर्भ में रखकर उनकी नई व्याख्या करने का प्रयास किया। हिंदी साहित्य में आधुनिक हिंदी काव्य चेतना का पूर्ण विकास द्विवेदी युग में ही दिखाई देता है। आधुनिक काव्य चेतना के स्वर जैसेः उपेक्षितों में सर्वप्रथम गूंज उठे थे। इसी युग में मैथिलीशरण गुप्तजी का अविर्भाव हुआ। उनके काव्य में इस काव्य चेतना को सबसे समर्थ और सशक्त वाणी मिली। श्री रामधारी सिंह दिनकर जी ने उनके बारे में कहा है ''पुनरूत्थान'' ने हमारी सारी संस्कृति, संपूर्ण इतिहास और समग्र विश्वास पर जो नया आलोक फेंका, उसकी अधिक से अधिक अभिव्यक्ति सबसे प्रथम मैथिलीशरण गुप्त की कविताओं में ही हुई। इसीलिए, हिंदी में पुनरूत्थान के कवि वे ही माने जाएंगे, ठीक उसी प्रकार जैसे बंगला में पुनरूत्थान के कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर हुए हैं। देश और युग की समस्याओं तथा चुनौतियों को गुप्तजी भली-भाँति जान चुके थे। आप देखेंगे कि गुप्तजी की काव्य रचनाएँ युगीन समस्याओं को अभिव्यक्त करती है। साथ ही, इन समस्याओं के समाधान का मार्ग भी प्रशस्त करती हैं। जन-मानस द्वारा आधुनिक विचारधारा को स्वीकार करने के लिए एक मनोभूमि तैयार करती है।

5.3 भाव पक्ष

5.3.1 अतीत का आधार (इतिहास बोध)

जन-मानस में राष्ट्रीय चेतना जगाने के लिए और वर्तमान दुर्दशा के कारणों को जानने के लिए मैथिलीशरण गुप्त ने अतीत के वैभवशाली भारत का चित्र अपनी कविताओं द्वारा प्रस्तुत किया। हम कौन थे? हम क्या हैं? और क्या होंगे? यह जानने की जिज्ञासा लोगों में उत्पन्न हो और जिससे भारतीय सांस्कृतिक गरिमा और सभ्यता को वे जान सकें और गुलामी की श्रृंखलाओं को तोड़कर एक स्वतंत्र भारत के निर्माण में अपना योगदान दे सकें। गुप्तजी ने अतीत के भव्य और उदात्त चरित्रों को कथाओं के माध्यम से युग की आवश्यकता के अनुसार एक कुशल चित्रकार की भांति नया रूप देकर प्रस्तुत किया। गुप्त जी ने आज के मान्य इतिहास से नहीं बल्कि मुख्यतः रामायण, महाभारत और पौराणिक कथाओं के प्रसंगों का चुनाव किया है। स्वयं गुप्तजी ने इस बात पर बल देकर कहा है - ''इस देश में असंख्य आदर्शजन हो गए हैं। उनकी धार्मिकता, वीरता, उदारता, परोपकारिता और न्यायप्रियता एवं शील और सौजन्य आदि गुणों से इतिहास आलोकित

हो रहा है। उनके ऊपर अनेक काव्य नाटक आदि लिखे जा सकते हैं। ऐसे काव्य चरित्रगठन में सहायक ही नहीं होते बल्कि उसके कारण होते हैं'' (कविता किस ढंग की हो- मैथिलीशरण गुप्त)

गुप्तजी अतीत की वैभवशाली परंपरा में विश्वास रखते थे। उनका मानना था कि भारत की प्राचीन सभ्यता ही जनता को वह सन्देश, वह प्रेरणा दे सकती है, जिससे राष्ट्रीय भावना का निर्माण हो सके। हमारा वर्तमान उज्वल बनेगा।

ज्यों ज्यों प्रचुर प्राचीनता की खोज बढ़ती जाएगी।
त्यों त्यों हमारी उच्चता पर ओप चढ़ती जाएगी।

(भारत-भारती, पृ. 72)

उन्होंने अपने काव्य ''रंग में भंग'' में पूर्वजों की बड़ाई गाने को कहा, ''जयद्रथ वध'' में अपने पूर्वजों के शील और सौजन्य आदि गुणों से शिक्षा लेने को कहा।

निज पूर्वजों के सद्‌गुणों को यत्न से मन में धरो।
सब आत्म परिभव तज निज रूप का चिन्तन करो।
निज पूर्वजों के सद्‌गुणों का गर्व जो रखती नहीं।
वह जाति जीवित जातियों में रह नहीं सकती कहीं।

(भारत-भारती, पृ. 160)

गुप्तजी मानते थे कि पराधीनता के सुप्त वातावरण में अतीत की जय ही जागरण उत्पन्न कर सकेगी। स्वयं गुप्तजी ने ''मौर्य विजय'' की भूमिका में कहा है- ''यदि सौभाग्य से किसी जाति का अतीत गौरवपूर्ण हो तो उस पर अभिमान करें तो उसका भविष्य भी गौरवपूर्ण हो सकता है।'' (मौर्य-विजय की भूमिका)

इसीलिए उन्होंने अपनी कृतियों में अतीत चित्रण को अधिकाधिक सशक्त बनाने का प्रयत्न किया। लेकिन अतीत चित्रण को महत्व देते हुए भी गुप्तजी इस बात से पूर्ण रूप से सचेत थे कि केवल अतीत चित्रण से उद्‌देश्य की पूर्ति नहीं होगी, बल्कि युगानुसार आने वाले परिवर्तन को भी वे सहज रूप से स्वीकार कर रहे थे। वे कहते हैं-

''प्राचीन बातें ही भली हैं यह विचार अलोक है,
जैसी अवस्था हो, जहां वैसी व्यवस्था ठीक है।''

(भारत भारती, पृं. 166)

गुप्तजी का मानना है कि युगीन परिस्थितियों के अनुरूप अपने विचारों को बदलने से बहुत सी समस्याएँ दूर हो सकती हैं। इसीलिए युगीन मूल्यों के साथ उन्होंने प्राचीन गौरवपूर्ण तत्वों का संतुलन किया है। अतीतचित्रण से संबंधित गुप्तजी की मान्यताओं को जन्म देने में युगीन परिस्थितियाँ महत्वपूर्ण रही हैं। इसके अतिरिक्त गुप्तजी की आस्तिकता और निष्ठा ने उनके अतीत प्रेम और नैतिक चेतना को दृढ़ बना दिया और अतीत चित्रण की पृष्ठभूमि में उन्होंने नवजागरण की विभिन्न प्रवृत्तियों का चित्रण किया।

गुप्तजी की अतीत के आधार पर लिखी गई रचनाएं इस प्रकार हैं-

''साकेत'', ''पंचवटी'', ''प्रदक्षिणा'', ''जयद्रथ वध'', ''सैरन्ध्री'', ''बकसंहार'', ''नहुष'', ''हिडिम्बा'', ''युद्ध'', ''यशोधरा'', शकुन्तला'' आदि। रामायण को आधार बनाकर लिखी गई रचना ''साकेत'' महत्वपूर्ण रचना है। यह मुख्य रूप से मानव जीवन और मानव मूल्यों का काव्य है। गुप्तजी ने प्रचलित रामकथा को युगीन परिस्थितियों के अनुसार नया रूप प्रदान करने का प्रयत्न किया है। इसके लिए उन्होंने प्राचीन कथा को कई नूतन

उद्भावनाओं से सजाया है। परंपरा की लीक पर चलते हुए भी कथा के स्वाभाविक क्रम में उन्होंने परिवर्तन अवश्य दिखाया है।

गुप्तजी ने वर्तमान युग की दैन्य दशा को सुधार और स्वाधीनता की आकांक्षा व्यक्त की है। तत्कालीन युग की परिस्थिति के प्रति किसी भी प्रकार से हीन भावना में नहीं रहे बल्कि दश के गौरव को बढ़ाने के लिए कर्तव्य-भावना से प्रेरित होकर जनता कार्य करें इस भावना की अभिव्यक्ति गुप्तजी की ''द्वापर'' रचना में इस प्रकार हुई है-

अपने युग को हीन समझना आत्महीनता होगी,
सजग रहो, इससे दुर्बलता और हीनता होगी।
जिस युग में हम हुए वही तो अपने लिए बड़ा है,
अहा! हमारे आगे कितना कर्मक्षेत्र पड़ा है।

(मैथिलीशरण गुप्त- ''द्वापर'', पृं. 52)

गुप्तजी की अतीत भावना के पीछे यह धारणा है कि हमारा अतीत अत्यन्त गौरवशाली और उदात्त रहा है। हमारे पूर्वजों ने भौतिक और आध्यात्मिक उन्नति की ऊँचाइयों को छुआ था, और विश्व के लिए एक महान् आदर्श उपस्थित किया था। वर्तमान स्थिति में और भविष्य के लिए भी हम उनसे मूल्यवान प्रेरणा ग्रहण कर सकते हैं जिसके आधार पर मानव-संस्कृति को उज्वल बना सकते हैं। इसीलिए वे कहते हैं-

जिनका कुछ भी न था अतीत,
गावें क्या वे उसके गीत
भूलें हम क्यों उसकी याद
जिसमें है अपना आह्लाद।
वही करेगा हमें सचेत
और वही देगा संकेत,
दे सकता है वही प्रबोध
और हमें जीवन का शोध

(हिन्दू, पृ. 51-52)

पुनर्जागरण युग के और उसके बाद के अनेक कवियों में अतीत के बारे में इस प्रकार की भावना निहित है। इन कवियों ने अतीत के पौराणिक और ऐतिहासिक सन्दर्भों के आधार पर नवयुग के अनुरूप मूल्य-आदर्शों की बात कही है। इस संदर्भ में कवि दिनकर ने कहा है-

''पौराणिक कथाओं पर इस आंदोलन ने नयी आभा बिखेरी है, एवं इसके आलोक में
हमारे इतिहास की अनेक घटनाएँ और अनेक नायक नयी ज्योति से जगमगाने लगे हैं।''

(दिनकर-मैथिलीशरण गुप्त -अभिनन्दन ग्रंथ)

नये युग की आवश्यकताओं के प्रति गुप्तजी पूरी तरह सजग हैं। नये युग की व्यवस्था एक अपरिचित आधार पर खड़ी न होकर, गत युग की अच्छाइयों की आधारशिला पर खड़ी हो। इसीलिए आज के युग में ''रामराज्य'' की स्थापना भी उन्हें नये युग की आवश्यकताओं के अनुकूल लगती है-

आज के योग्य एक अविभाज्य,
विश्व को मिले राम का राज्य
(विश्ववेदना, पृं. 5)

5.3.2 नारी सम्मान की भावना

भारतीय नवजागरण और सुधारवादी आंदोलनों के कारण समाज में नारी की अपमानस्पद और उपेक्षित स्थिति के बारे में पहली बार विचार किया जाने लगा। शताब्दियों से उपेक्षित और प्रताड़ित नारी को घर और समाज में उचित सम्मान मिले, देश के स्वतंत्रता संग्राम और विकास में उसका समान सहयोग रहे। इस भावना से नारी जाति के लिए सदियों से चली आ रही कुप्रथाओं और रूढ़ि-रीतियों का जोरदार विरोध होने लगा। राजा राममोहन राय ने नारी जाति के लिए अपमानास्पद और अभिशाप जैसी सती प्रथा समाप्त करने के लिए आंदोलन किया। बाल-विवाह, अनमेल-विवाह, पर्दा-प्रथा का विरोध और विधवा-विवाह का समर्थन ब्रह्म समाज, आर्यसमाज द्वारा चलाए गए आंदोलनों ने किया। मध्यकालीन सामंतवादी समाज में नारी को केवल भोग की वस्तु माना जाता था। उसका कार्यक्षेत्र केवल उसका घर था और उसे शिक्षा-दीक्षा प्राप्त करने का अधिकार भी नहीं था। इस संकीर्ण मानसिकता के कारण नारी का कार्यक्षेत्र अत्यंत सीमित था। आधुनिक युग की इस विचार-दृष्टि में नारी की इस स्थिति को समाज और देश के लिए, अत्यन्त हानिकारक माना। नारी की स्वतंत्र अस्मिता, कार्य करने की कुशलता और बुद्धिमता को पहचानने का प्रयास किया गया। देश के विकास में सहयोग देने वाले महत्वपूर्ण शक्ति के रूप में उसे पहचाना गया।

गुप्तजी की आधुनिक काव्य चेतना पर नवजागरण की नारी संबंधी विचारधारा का बहुत ही गहरा और व्यापक प्रभाव दिखाई देता है। देश की समकालीन स्थिति में नारी की शोचनीय स्थिति पर दुःख व्यक्त करते हुए वे नारी-शक्ति की महत्ता को इस तरह व्यक्त करते हैं-

> अनुकूल आद्या शक्ति की सुखदायिनी जो स्फूर्ति है,
> सद्धर्म की जो मूर्ति और पवित्रता की पूर्ति है,
> नर-जाति की जननी तथा शुभ शान्ति की स्त्रोतस्वति
> हा दैव! नारी जाति की कैसी यहाँ है दुर्गति।''

(भारत भारती, पृं. 149)

गुप्तजी ने नारी को उदात्त दैवी जैसा रूप देकर शक्ति और पवित्रता, सात्विकता के रूप में प्रतिष्ठित किया है। परन्तु केवल पूज्य भाव जगाने की वह घड़ी नहीं थी बल्कि नारी को सहयोगिनी के रूप में स्वीकार करना समय की आवश्यकता थी। गुप्तजी ने ''साकेत'', ''यशोधरा'', ''विष्णुप्रिया'', रत्नावली जयिनी काव्य रचनाओं में नारी को उच्च और मधुर प्रेरणामयी सहयोगिनी के रूप में दिखाने का प्रयास किया है। हिंदी साहित्य के काव्य क्षेत्र में जो कुछ ऐसे नारी पात्रों की उपेक्षा हो रही थी, जिनके त्याग, उदारता और वेदना की अब तक कहीं भी चर्चा नहीं हुई थी। गुप्तजी ने ''साकेत'' में ''उर्मिला'' और ''यशोधरा'' में राहुल जननी की वेदना को स्वर देकर नारी के अस्तित्व बोध को अभिव्यक्त किया है।

गुप्तजी ने पौराणिक कथा संदर्भ लेकर नारी की गरिमामयी, तेजस्वी प्रतिभा प्रस्तुत की, जो समय की माँग थी। उपेक्षिता उर्मिला की अनकही विरह-वेदना, त्याग, सामंजस्य और दृढ़ता को साकेत में प्रथम वाणी मिली है। राम-सीता के साथ वन जाने के लिए लक्ष्मण को योगी बनाने में उर्मिला की दृढ़ता ही कारण रही है। जाग रहा है यह कौन धर्नुधर, जबकि भुवन भर सोता है भोगी कुसुमायुध योगी-सा, बना दृष्टिगत होता है। गुप्तजी ने नारी के व्यक्तित्व के दो पक्षों को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया। पहला पक्ष है, नारी का और दूसरा पक्ष है नारी की स्वतंत्र सत्ता और महत्ता।

ये दोनों ही पक्ष नारी जीवन को सफल और उज्वलल बना सकता है यदि उसे पुरुष का सहयोग प्राप्त होता है। यदि यह सहयोग नहीं मिलता है तो नारी के पत्नीत्व और स्वतंत्र सत्ता के बीच तनाव निर्माण होता है। गुप्तजी के ''साकेत'' की नायिका उर्मिला में इस

तनाव का अभाव है, क्योंकि लक्ष्मण का उसे अनुकूल सहयोग प्राप्त है। उर्मिला की अनुमति से ही लक्ष्मण वन को गए थे, परन्तु यशोधरा, विष्णुप्रिया और रत्नावली में वह नहीं है। यशोधरा के गौतम और विष्णुप्रिया के चैतन्य महाप्रभु पत्नी को बताये बिना, आज्ञा लिए बिना सत्य की खोज में निकल पड़े थे

साकेत के एक विनोद प्रसंग में उर्मिला जब लक्ष्मण से कहती है कि मैं अबला हूँ तो लक्ष्मण संपूर्ण नारी जाति को संबोधित करके कह उठते हैं-

''अवस-अबला'' तुम? सकल बल वीरता,
विश्व की गम्भीरता, ध्रुव-धीरता,

(''साकेत'', पृष्ठ 23)

''उर्मिला'' विरह व्यथिता होकर भी स्वाभिमान और वीर भावना से ओत-प्रोत है। सीता हरण और लक्ष्मण-शक्ति के प्रसंग को हनुमान से सुनकर जब सभी साकेतवासी रावण से युद्ध करने के लिए निकल पड़ते हैं और सीता को कारागार से मुक्त करके उसके अपमान का बदला लेने के लिए शत्रुघ्न सोने की लंका लूटने के लिए प्रजाजनों को आदेश देते हैं, तब उर्मिला माथे पर सिंदूर लगाकर और हाथ में भाला लेकर साक्षात दुर्गा का वेश धारण करके गरजती हुई उनके सामने आकर तेजस्वी वाणी में घोषणा करती है-

नहीं, नहीं पापी का सोना
यहां न लाना, भले सिंधु में वहीं डुबोना,
जाते हो तो मान हेतु ही तुम सब जाओ,
विंध्य-हिमाचल-भाल भला। झुक जाय, धीरो,
चन्द्र-सूर्य-कुल-कीर्ति-कला रूक जाय न वीरो।

इस तरह ''उर्मिला'' सैनिकों में अपनी मातृभूमि के प्रति अटूट श्रद्धा, अपूर्व भक्ति और असीम प्रेम जाग्रत करती है। यही है उर्मिला का स्वाभिमानी, शक्तिरूपा और वीरांगना का रूप। आधुनिक युग में नवजागरण की चेतना के कारण नारी स्वातंत्र्य और नारी की महत्ता को मानने जैसी विचारधारा का प्रसार हुआ। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पुरुष के कंधे से कंधा मिलाकर कार्य करने के लिए नारी को प्रोत्साहन दिया और उसे स्वावलम्बी बनाने की प्रेरणा नारी जागृति के लिए कार्य कर रही संस्थाओं ने दी। ''साकेत'' में सीता के इन उद्‌गारों में नारी के स्वतंत्र और स्वावलम्बी जीवन की झलक मिलती है-

''औरों के हाथों यहाँ' नहीं पलती हूँ
अपने पैरों पर खड़ी आप चलती हूँ।
श्रमवारि बिन्दु फल स्वास्थ्य शुक्ति फलती हूँ।
अपने अंचल से व्यंजन आप झलती हूँ।
तनु-लता-सफलता-स्वाद आज ही आया,
मेरी कुटिया में राज भवन मन-भाया।''

''यशोधरा'' गुप्तजी की दूसरी महान कृति है। जिसमें गौतम बुद्ध, यशोधरा तथा पुत्र राहुल की कथा को विस्तार दिया गया है।

यशोधरा की गौतम के महान् लक्ष्य के प्रति पूर्ण सहानुभूति थी, परन्तु पति द्वारा निद्रावस्था में उसकी अनुमति लिए बिना गृह त्याग करने से यशोधरा अपने नारीत्व को तिरस्कृत और अपमानित अनुभव करती है, गौतम ने उसे सहधर्मिणी के सहयोग का अवसर ही नहीं दिया- नारी को उन्होंने भी सिद्धि मार्ग की बाधा माना, यशोधरा की वेदना उसके शब्दों में फूट पड़ी है-

सिद्धि-हेतु स्वामी गये, यह गौरव की बात,
पर चोरी-चोरी गये, यही बड़ा व्याघात,
सखि, वे मुझसे कह कर जाते,
कह, तो क्या वे मुझको अपनी पथ-बाधा ही पाते?

(यशोधरा पृ. 24)

यशोधरा के मन में वेदना के साथ ही नारी-जाति के अस्तित्व के प्रति जागरूकता का भाव दिखाई देता है। वह कह उठती है-

सिद्धि-मार्ग की बाधा नारी फिर उसकी क्या गति है,
पर उनसे पूछूँ क्या जिनको मुझसे आज विरति है,
अर्ध-विश्व में व्याप्त शुभाशुभ मेरी भी कुछ मति है,
मैं भी नहीं अनाथ, जगत् में मेरा भी प्रभु पति है।

(यशोधरा, पृ. 38)

सिद्धार्थ के निर्वाण हेतु चले जाने के बाद यशोधरा शोक में डूब जाती है, फिर भी जन-कल्याण हेतु गए अपने पति के उच्च संकल्प के लिए वह त्यागमयी भावना से कह उठती है-

जायें, सिद्धि पायें वे सुख से,
दुःखी न हों इस जन के दुःख से।

यशोधरा के साथ उसका पुत्र राहुल भी है, पति की अनुपस्थिति में माता तथा पिता दोनों रूपों का यशोधरा को निर्वाह करना पड़ता है। इसीलिए यशोधरा के विरह में वेदना के साथ-साथ गम्भीरता आ गई है। वह अपनी व्याकुलता में उत्तरदायित्व को कभी नहीं भूली। नारी जीवन के उस गम्भीर पक्ष, जिसमें तप, अटल विश्वास, पारिवारिक उत्तरदायित्व और त्याग है, यशोधरा ने उसे सहज रूप से स्वीकार किया। इसीलिए वह अपने ससुर को सांत्वना देने की क्षमता रखती है-

''तात सोचो, क्या गये वे इसी अर्थ हैं।
खोज हम लायें उन्हें, क्या वे असमर्थ हैं?

यशोधरा की तापसी वृत्ति को अंगीकार करने के पीछे इस असार संसार के मोह से मुक्त होकर संसार को मुक्ति का मार्ग दिखाने वाले गौतम की पत्नी होने की योग्यता को सिद्ध करने की आकांक्षा दिखाई देती है। उनका यह तप अंत में सफल हुआ। गौतम भगवान बुद्ध बनकर उसके ''इसी आंगन में'' लौटकर आएँ, जहाँ से वे उसे छोड़कर गए थे और यशोधरा ने अपने जीवन के तप का फल प्राप्त कर लिया। यहाँ यशोधरा का मानिनी रूप अडिग दिखाई देता है। वह जानती है कि-

''यदि वे चल आये हैं इतना
तो दो पद उनको है कितना
क्या भारी वह, मुझको बिताना
पीठ उन्होंने फेरी
ऐ मन! आज परीक्षा तेरी।''

यशोधरा इस परीक्षा में सफल हो जाती है। गौतम बुद्ध स्वयं आते हैं और कहते हैं-

''मानिनी, मान तजो लो, रही तुम्हारी बान।
दानिनि, आया स्वयं द्वार पर यह तत्र भवान।''

और यशोधरा ने अपने जीवन के तप का फल प्राप्त कर लिया। यशोधरा ने उस भिक्षु-शिरोमणि को अपनी गोद का अमूल्य रत्न, पुत्र राहुल को देकर नारी के त्याग का अभूतपूर्व आदर्श उपस्थित कर दिया। भगवान बुद्ध ने गोपा अर्थात् यशोधरा के नीरव-तप को और उनके महत्व को स्वीकार किया और केवल गोपा का ही नहीं, उसके त्याग से समस्त नारी-जाति की महत्ता को स्वीकार करके गोपा का मस्तक ऊँचा कर दिया-

''दीन न हो गोपे, सुनो, हीन नहीं नारी कभी
भूत-दया-मूर्ति वह मन से शरीर से।
क्षीण हुआ वन में क्षुधा से मैं विशेष जब
मुझको बचाया मातृजाति ने ही खीर से।
आया जब मार मुझे मारने को बार-बार
अप्सरा-अनीकिनी सजाये हेम-हीर से।
तुम तो यहाँ थीं, धीर ध्यान ही तुम्हारा वहाँ
जूझा, मुझे पीछे कर, पंचशर वीर से।''

गुप्तजी ने यशोधरा में भारतीय नवजागरण से विकसित हुए नवीन विचारों को अभिव्यक्ति दी है। देवत्व के स्थान पर मानव के महत्व को प्रतिपादित करना इस कृति का मुख्य हेतु था। अन्य ग्रंथों के समान सिद्धार्थ को प्रमुखता न देकर गुप्तजी ने काव्य को यशोधरा पर केन्द्रित रखा है, क्योंकि नारी की प्रतिष्ठा समय की माँग थी।

गुप्तजी द्वारा नारी की प्रतिष्ठा को स्थापित करने की इसी काव्य-धारा की अगली कृति ''विष्णुप्रिया'' और ''जयिनी'' है। यह रचना भी गुप्तजी के उसी सिद्धांत की बात करती है, जिसमें आदर्श नारियों के लिए त्याग, तपस्या और पतिव्रता होना आवश्यक माना गया है। हालांकि यह बात आधुनिक विचारों की अपेक्षा कुछ पारंपरिक अधिक लगती है। ''विष्णुप्रिया'' सामान्य गृहिणी है। मध्यकालीन भक्त श्री चैतन्य महाप्रभु के गृह त्याग के कारण उनकी पत्नी विष्णुप्रिया को जो व्यथा-वेदना सहनी पड़ी उसी का रेखांकन इस कृति में किया गया है।

चैतन्य महाप्रभु जब विष्णुप्रिया से प्रेम-धर्म के प्रसार हेतु गृह त्याग के लिए आज्ञा माँगते हैं तो उस समय विष्णुप्रिया समस्त नारी समाज की विवशता का प्रतिनिधित्व करती हुई कहती है-

''तो क्या करूँ कर ही क्या सकती हूँ और मैं
रो रोकर मरना ही नारी लिखा लाई है।''

परन्तु वह अपने पति की भर्त्सना भी करती है। यह कह कर-

''कौन योग पूर्ण होगा त्याग कर मुझको?
धर्म के विरूद्ध ही तुम्हारा यह कर्म है।''

(विष्णुप्रिया, पृं. 42)

केवल इतना कह कर विष्णुप्रिया चुप नहीं रहती है तो सांसारिकता के मोह से दूर भाग रहे अपने पति के लिए आक्रोश भरा व्यंग्यपूर्ण उलाहना भी देती है। परन्तु वह स्थिति का सामना करने के लिए समर्थ भी है। स्वजनों के सहारे बैठकर वह अपना निर्वाह नहीं करती बल्कि स्वयं श्रम करके अपना और पति का पालन-पोषण करती है। स्वाभिमानी विष्णुप्रिया स्वयं श्रम करके जीवन जीना चाहती है।

'' कर लेंगे हम किसी प्रकार
इतना श्रम जिससे हम दोनों, न हों किसी पर भार''।

चैतन्य महाप्रभु के लौट आने के बाद विष्णुप्रिया अपना सारा दुःख भुलकर उनका प्रेमपूर्वक स्वागत भी करती हैं और महाप्रभु के कहने पर भगवान का ध्यान भी करती है। परन्तु यहीं विष्णुप्रिया चैतन्य महाप्रभु के राजा द्वारा दी गई भेंट को स्वीकार करने पर, विद्रोहिणी के रूप में कह उठती है-

''राज-समादर के लिए ही क्या गए हैं वे?

(विष्णुप्रिया, पृ. 83)

और इस बात को स्वीकार करते हुए महाप्रभु ने विष्णुप्रिया का आभार व्यक्त किया-

''हाय! ''प्यारी विष्णुप्रिये!'' बोले हँसकर ही,
तुम अवरोधिनी नहीं, अब हो प्रबोधिनी।''

(विष्णुप्रिया, पृ. 84)

5.3.3 मानवतावादी दृष्टिकोण

आधुनिक युग में मनुष्य का विश्वास अलौकिक शक्तियों पर से हटता गया क्योंकि विज्ञान ने मनुष्य के सामने यह स्पष्ट कर दिया कि अलौकिक शक्ति एक कल्पना मात्र है। आस्था का केन्द्र मनुष्य ही है। मनुष्य स्वयं अपना भाग्य-विधाता है, सृष्टि के क्रम-विकास में उसका स्थान सर्वश्रेष्ठ है। यही विश्वास आधुनिक मानवतावादी विचारधारा की मूल चेतना है।

गुप्तजी के काव्य पर इस मानवतावादी विचारधारा का गहरा प्रभाव दिखाई देता है। उनके काव्य के विषय अधिकार पौराणिक कथानकों पर आधारित हैं विशेष रूप से ''नहुष'' और ''दिवोदास'' काव्य इसी दृष्टिकोण को स्वष्ट करते हैं जिसमें मानव के स्वावलम्बी बनने और विकास की ओर बढ़ने के संकल्प को व्यक्त किया है। ''लीला'' नामक काव्य में विश्वामित्र का यह कथन-

अमर जो न कर सके उसे नर कर सकते हैं
व्रत साधन पर अमर भला कब मर सकते हैं?

(लीला, पृं. 24)

विकास के पथ पर आगे बढ़ने का संकल्प लिए मानव आज उस संकल्प की पूर्णता की ओर अग्रसर है। मानवीय मूल्यों की स्थापना और उनके अनुसार चलने की कटिबद्धता मानव निभा रहा है। ''द्वापर'' में उग्रसेन कर रहा है-

सच पूछो तो ऐसा अद्भुत अपना यह मानव ही,
कभी देव बन जाता है तो और कभी दानव भी।
मैं कहता हूँ यदि मनुष्य ही बने मनुष्य हमारा,
तो कट जाए देव-दैत्यों का कलह-कलुष यह सारा।

(द्वापर, पृं. 103)

समाजिक धरातल पर मनुष्य और मनुष्य के बीच भेद उत्पन्न करने वाली सभी पुरातन रूढ़ियों और संकीर्ण मानसिकताओं को नष्ट करके मनुष्य को स्वाभिमानपूर्वक खड़े होने का साहस मानवता ही दे सकती है। ''जयभारत'' काव्य के परीक्षा प्रसंग में कौरवों और पाण्डवों के शस्त्र कौशल की परीक्षा के उत्सव का वर्णन है। इस उत्सव में सबको चुनौती देकर परीक्षा देने के लिए जब कर्ण उपस्थित होता है तो उसका अपमान करने के उद्देश्य से भीम उससे कुल और वर्ण का परिचय माँगता है तब कर्ण के मुख से मनुष्यत्व के गौरव को व्यक्त करने वाला सत्य इस तरह फूट पड़ता है-

मैं मनुष्य हूँ, और वर्ण सब देख रहे हैं,
पूछो उनसे लोग मुझे क्या लेख रहे हैं।

(जयभारत, पृं. 63)

मनुष्य की श्रेष्ठता उसके किस जाति या वर्ण में जन्म लेने के आधार पर नहीं उसके शौर्य, पराक्रम और योग्यता के बल पर निर्धारित होनी चाहिए। गुप्तजी ने मनुष्य के श्रेष्ठत्व को पहचानने की एक नई दृष्टि देने का प्रयास किया है। जातिभेद का विरोध करते हुए मनुष्यत्व की श्रेष्ठता को ''गुरुकुल'' काव्य में वे इस रूप में व्यक्त करते हैं-

''हिन्दू हो या मुसलमान हो नीच रहेगा फिर भी नीच
मनुष्यत्व सबसे ऊपर है मान्य महीमण्डल के बीच''।

(गुरुकुल, पृं. 37)

गुप्तजी ने अपने काव्य में जातिभेद, वर्णभेद जैसी सामाजिक बुराइयों का विरोध किया और इन बुराइयों के कारण मनुष्य-मनुष्य के बीच जो दरार पड़ी थी, उस दरार को मिटाने के प्रयास स्वयं मनुष्य ही करे इस उद्देश्य को पूर्ण करने हेतु गुप्तजी ने अपने ''द्वापर'', ''गुरुकुल'' काव्य संग्रहों की रचना की थी। मानवतावादी दृष्टिकोण से ही गुप्तजी ने नारी की सामाजिक प्रतिष्ठा को बढ़ाने हेतु ''यशोधरा'', ''साकेत'', ''विष्णुप्रिया'' काव्यों की रचना की। इन काव्यों के प्रमुख नारी पात्र त्याग, दया, करूणा, अहिंसा, आदि बौद्ध धर्म के तत्वों को अपनाते हुए मानवता की स्थापना के लिए कार्यशील दिखाई देते हैं। बौद्ध धर्म के तत्व मानवतावाद की स्थापना के मूल तत्व माने गए हैं। गुप्तजी का विश्वास था कि अनेक विसंगतियों और त्रुटियों के बावजूद विश्व का विकास होगा, क्योंकि मनुष्य ही इस विकास के केन्द्र में है। कुन्ती द्वारा यह विश्वास वे प्रकट करते हैं-

''होगा इस विश्व का विकास जो अब भी।
नर से होगा वह, जैसा हुआ अब भी।।
आते हैं चढ़ाव उतार तथा आवेंगे।
तो भी हम लोग सदा बढ़ते ही जायेंगे।।

उस समय विश्व को महायुद्ध एक शाप की तरह ग्रस्त किए हुए था। दोनों महायुद्धों से संपूर्ण विश्व, दानवीय प्रवृत्तियों का तथा भीषणता का शिकार हो चुका था। गुप्तजी ने महायुद्ध की उस भयावहता को देखते हुए युद्ध के विरोध में शांति का, विषमता के मध्य समता का काव्य लिखकर दानवता के विरूद्ध मानवता का संदेश देने का भरसक प्रयास ''विश्व वेदना'' जैसा काव्य लिखकर किया। अंतर्राष्ट्रीय स्पर्धाओं से त्रस्त आधुनिक युग की पीड़ा की अनुभूति से कवि हृदय कराह उठता है-

''बढ़ाकर दो देशों में द्वेष
बेच दोनों को वस्तु विशेष
लूटता एक तीसरा देश
वाणिज्य में क्यों लज्जा-लेश

राज्य पूँजीपति का ही आज
नहीं कुछ उसके लिए अकाज
लुब्ध लंपट वंचक वाचाल
चले जो जितना गहरी चाल
बिछावे कूट कपट के जाल
वही उतने नीतिज्ञ विशाल
धनी हो जिसके कंस नृशंस
न हो धरा धाम क्यों ध्वंस।''

द्वितीय महायुद्ध के बाद विजयोत्सव मना रहे ब्रिटेन के नवयुवकों को संबोधित करके जो बात एच जी. वेल्स ने कही थी, वही ''बंगाल का अकाल'' नामक कविता में गुप्तजी ने व्यक्त की है-

''शिशु जहाँ शुष्क स्तनी माँ को-
अधीर पुकारते हैं।
एक मुट्ठी अन्न पर उनको बुभुक्षित करते हैं।
आँसुओं के रूप में जीवन जहाँ राज गारते हैं।
एक के पर दूसरों के अन्तरंग उधारते हैं।।
रक्त रंजित हो यहाँ तो साँझ हो चाहे सबेरा।
क्या यही संसार मेरा''।

भूख से बिलखती जनता की आवाज़, कराह, क्रन्दन, कोलाहल, द्वेष, वैषम्य इन सभी भावनाओं की संमिश्र अभिव्यक्ति इस कविता में हुई है। द्वितीय महायुद्ध से निर्माण हुई स्थिति के कारण गुप्तजी की मानवतावादी दृष्टि के पीछे वस्तुतः सामाजिक चेतना मुख्य रूप से दिखाई देती है। इसी प्रकार, ''जयिनी'' काव्य रचना में समाजवादी विचाराधारा के मानवतावादी तथ्य स्पष्ट हैं।

''खाता दूसरा है, कमाता श्रमजीवी है'' अथवा ''महाजन पूँजीपति बनके अपने सुख भोग के लिए सौ-सौ का सुख भोग लूटता है। कुत्ते एक ओर मलाई सूँघते हैं तो बच्चे दूसरी ओर भूख से ऊँघते हैं।

इस तरह, गुप्तजी का काव्य मानवतावादी दृष्टि का दस्तावेज है। कर्म और कर्त्तव्य के नए धरातल को प्रस्तुत करके मनुष्यत्व को नया आयाम, नया आदर्श और नयी अर्थवत्ता प्रदान करता है।

5.3.4 राष्ट्रीय भावना और समाज सुधार का स्वर

देश में स्वतंत्रता आंदोलन एवं राष्ट्रीय भावना का उदय पुनरूत्थान के वैचारिक आंदोलन के प्रचार रूप में हुआ। गांधी जी ने इस आंदोलन को नये आयाम प्रदान किए, इसे व्यापक, जन-जागरण, समाज-सुधार, आर्थिक स्वावलम्बन एवं नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों से जोड़ा। अतः अहिंसा, सत्याग्रह, अछूतोद्धार, मानवीय समानता और चर्खा-आंदोलन उनके विचार-दर्शन के प्रमुख आयाम बने। मैथिलीशरण गुप्त को हमने नवजागरण की विचारधारा का प्रतिनिधि कवि कहा है। नवजागरण स्वतंत्रता-आंदोलन और गांधीवाद के वे प्रतिनिधि कवि हैं। उन्होंने गांधीवादी विचारों को स्वर दिया।

स्वदेश की महिमा गुप्तजी ने अपनी रचनाओं के अनेक प्रसंगों में गाई। ''गुरुकुल'' में गुरू गोबिन्द सिंह के मुख से देश के गौरव का गान इस तरह से किया है-

जिसके तीन ओर अर्णव है,
चौथी ओर हिमालय पीन
ऐसा देश दुर्ग पाकर भी
रह न सके हा! हम स्वाधीन।

(गुरुकुल, पृं. 220)

''स्वदेश संगीत'' में गुप्तजी की कविता नीलाम्बर परिधान हरित पट पर शोभित है। स्वतंत्रता आंदोलन के युग में भारतीय जनता के कोटि-कोटि कण्ठों से गायी जाती थी। मातृभूमि को देवी अथवा मानवी रूप में अनेक कवियों ने चित्रित किया, जैसे बंकिमचन्द्र चटर्जी ने ''वन्देमातरम्'' गीत में, निराला ने ''भारति जय विजय करे'' गीत में और जय

शंकर प्रसाद ने ''हिमाद्रि तुंग श्रृंग से..... ''कविता में। प्राचीन काल के कथानकों में भी गुप्तजी ने स्वदेश प्रेम और राष्ट्रीय भावना को इस कौशल से अभिव्यक्त किया है कि वह उन प्रसंगों में अपनी सार्थकता रखते हुए आज के युग की भावनाओं को भी वाणी देने में समर्थ है। विदेशी शक्ति से देश की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए ''साकेत'' के राम कृत संकल्प है-

पुण्य भूमि पर पाप कभी हम सह न सकेंगे
पीड़क पापी यहाँ और अब रह न सकेंगे

(लीला, पृं. 24)

इसी प्रकार, ऐतिहासिक प्रसंगों पर आधारित रचनाओं में गुप्तजी ने अनेक पात्रों के द्वारा स्वदेश के लिए बलिदान की भावना व्यक्त की है। गुप्तजी की ऐतिहासिक कथानकों पर आधारित अनेक रचनाओं के स्वदेश के लिए प्राणार्पण की भावना व्यक्त होती है। उन मध्यकालीन कथानकों में यह भाव सीमित राष्ट्रीयता की भावना को व्यक्त करते हैं, लेकिन वर्तमान युग में भी उन भावनाओं की प्रासंगिकता थी-

जन्मदायी धायि! तुझसे उऋण अब होना मुझे,
कौन मेरे प्राण रहते देख सकता है तुझे,
मैं रहूँ चाहे जहाँ, हूँ किन्तु तेरा ही सदा,
फिर भला कैसे न रक्खूँ ध्यान तेरा सर्वदा

(रंग में भंग, पृं. 29)

विदेशी शासन के विरोध में स्वतंत्रता आंदोलन ने संघर्ष का रूप धारण कर लिया था। ऐसी स्थिति में गुप्तजी की राष्ट्र-प्रेम की भावना से लिखा गया काव्य ''भारत भारती'' प्रकाशित हुआ। ब्रिटिश शासन द्वारा किये जा रहे देश के आर्थिक शोषण और सांस्कृतिक ह्रास के प्रति गुप्तजी अत्यधिक चिंतित थे, यह चिंता उनके इस काव्य में अनेक प्रसंगों में व्यक्त होती है। वे कहते हैं-

हम कौन थे, क्या हो गये हैं, और क्या होंगे अभी
आओ विचारें आज मिलकर ये समस्याएँ सभी।

देशवासियों अपने प्राचीन गौरव का स्मरण करके पुनः वैसी ही या उससे बेहतर स्थिति प्राप्ति की लालसा रखें इसलिए गुप्तजी भारत भारती द्वारा जन-चेतना जगाने के कार्य में जुटे रहे-

इस देश को है दीनबन्धों! आप फिर अपनाइए,
भगवान! भारतवर्ष को फिर पुण्यभूमि बनाइए।

वरमंत्र जिसका मुक्ति था, परतंत्र पीड़ित है वही,
फिर वह परम पुरुषार्थ इसमें शीघ्र ही प्रकटाइए।

(भारत भारती, पृं. 187-188)

फिर अपने को याद करो
उठो अलौकिक, भाव करो।

(वैतालिक)

गुप्तजी राष्ट्रीय आंदोलन में विभिन्न धर्मों और सम्प्रदायों की एकता के महत्व को अनुभव करते थे। इसी उद्देश्य से उन्होंने ''काबा और कर्बला'' तथा ''गुरूकुल'' दो काव्य संग्रहों की रचना द्वार इस्लाम धर्म और सिक्ख धर्म के प्रति श्रद्धा व्यक्त की है। ''मातृ-मंदिर'' नामक कविता में सभी धर्म, जाति, संप्रदाय की एकता का प्रतिपादन करते हुए वे कहते हैं- जाति, धर्म या संप्रदाय का, नहीं भेद व्यवधान यहाँ एक ने सब के लिए भेजे यहाँ निज ग्रंथ हैं। राष्ट्रीयता और विश्व प्रेम में धर्म बाधक नहीं है बल्कि धर्म या संप्रदाय का, नहीं भेद व्यवधान यहा'। एक ने सब के लिए भेजे यहाँ निज ग्रंथ हैं। राष्ट्रीयता और विश्व प्रेम में धर्म बाधक नहीं है बल्कि धर्म का उद्देश्य विश्व-बन्धुत्व भावना बढ़ाने का होना चाहिए।

किन्तु हमारा लक्ष्य, एक अम्बर, भू-सागर,
एक नगर-सा बने विश्व, हम उसके नगर!

(राजा-प्रजा)

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का एक और प्रमुख लक्ष्य था, सामाजिक समानता अर्थात् समाज के सभी वर्ग के लोगों के साथ समानता का व्यवहार, अछूत, हरिजन एवं पिछड़ी जातियों के लोगों का उत्थान। स्वतंत्रता आंदोलन के कर्णधार गांधी जी ने यह जान लिया था कि जब तक सभी वर्ण के लोगों को सामाजिक समता प्राप्त न हो, तब तक देश की राजनीतिक स्वतंत्रता कठिन ही नहीं व्यर्थ भी है। इसीलिए स्वतंत्रता संग्राम के रचनात्मक कार्यक्रमों में हरिजनोद्धार को महत्वपूर्ण स्थान दिया और इसके लिए व्यापक कार्यक्रम तैयार किए। गुप्तजी ने अपनी रचनाओं में बार-बार ''जन्मना जाति सिद्धांत'' का अर्थात् जन्म के आधार पर जाति निश्चित होने का विरोध किया है। वे कर्म और आचरण को व्यक्ति की सामाजिक मर्यादा का आधार मानते हैं। ''अनघ'' काव्य में मघ के अछूतोद्धार के प्रयासों की ग्रामवासी आलोचना करते हैं, तब उन्हें मघ द्वारा यह उत्तर दिया जाता है-

इसका भी निर्णय हो जाए, नहीं अछूत मनुज क्या हाय!
करें अशुचिता सबकी दूर, उनसे घृणा करें सो क्रूर।
जिनके बल पर खड़ा समाज, रहती है शुचिता की लाज
उनका ऋण न करना, खेद! है अपना ही मूलाच्छेद।

(अनघ, पृं. 45-46)

अछूतों के मंदिर-प्रवेश के प्रश्न को ध्यान में रखते हुए गुप्तजी ने इसे कुछ बदले हुए रूप में ''सिद्धराज'' में उठाया है। सिद्धराज की माता को यह जानकर अत्यंत खेद होता है कि मंदिर प्रवेश सबके लिए उपलब्ध नहीं है। वह बिना दर्शन किए ही लौट आती है और मंत्री के पूछने पर स्पष्ट कह देती है-

मंदिर का द्वार जो खुलेगा सबके लिए
होगी तभी मेरी वहाँ विश्वंभर भावना।

आप देखेंगे कि राष्ट्रीय भावना और समाज सुधार की आकांक्षा गुप्तजी के काव्य के दो प्रमुख स्वर थे। जिसकी अभिव्यक्ति उनके प्रत्येक काव्य रचना में हुई है। राष्ट्रीय भावना एवं राष्ट्रीय चेतना का प्रसार उनके जीवन का उद्देश्य मात्र बन गया था। जीवन के पचास वर्ष लेखन कार्य में निरंतर कार्यरत रहने के पीछे देश की स्वतंत्रता, देश की प्रगति और विकास को देखेते हुए स्वप्न थे, जोकि गुप्तजी के सामने ही पूर्ण हुए और इस महान राष्ट्रकवि के इस देश कार्य को पूर्णत्व प्राप्त हुआ है।

बोध प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर संक्षेप में लिखिए।

1. भारतीय नवजागरण की चेतना का विकास राष्ट्रीय चेतना के रूप में सामने आया। स्पष्ट कीजिए।

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

2. निम्नलिखि में से जा सही है उन पर (✓) निशान लगाइए।

   i) राष्ट्रीय आंदोलन

   ii) सामाजिक, सांस्कृतिक चेतना का विकास

   iii) आधुनिक हिंदी काव्य चेतना का विकास

   iv) विज्ञान के प्रति आस्था

   v) अंधविश्वास आदि से मुक्ति का प्रयास।

3. रिक्त स्थान में उपयुक्त शब्द भरिए।

   1. सामाजिक प्रथाओं का विरोध किया गया।

   (बालविवाह, अनमेल विवाह, पर्दा-प्रथा, छुआछूत, सती प्रथा)

बोध प्रश्न 2

1. गुप्तजी ने अपने लेखन में किन-किन बातों पर बल दिया (किन्हीं उपयुक्त पाँच पर (✓) निशान लगाइए।

   - अतीत चित्रण
   - वर्तमान दुर्दशा का चित्रण
   - गौरवपूर्ण इतिहास
   - पौराणिक / ऐतिहासिक कथानक
   - उज्वल भविष्य की आकांक्षा
   - हिन्दू धर्म, वेदों, उपनिषदों का आख्यान

2. गुप्तजी ने अपनी किन-किन रचनाओं में इतिहास के उपेक्षित नारी पात्रों को प्रतिष्ठित किया है। (सही रचनाओं पर (✓) निशान लगाइए।

   - साकेत
   - यशोधरा

- द्वापर
- रंग में भंग
- विष्णुप्रिया
- जयिनी

3. गुप्तजी ने विभिन्न धर्म और संप्रदायों की परस्पर एकता को बढ़ाने के लिए किन महत्वपूर्ण बातों का उल्लेख किया है (संक्षेप में लिखिए)। (दस पंक्तियों में लिखें)

....

....

....

....

....

....

....

....

4. जाति प्रथा को नष्ट करने के लिए किन प्रयासों की ओर गुप्तजी ने संकेत किया (सही पर निशान (✓) लगाइए)

- समानता
- अस्पृश्यता का विरोध
- मंदिर प्रवेश की अनुमति
- मानवीय अधिकार
- बंधुत्व का भाव

5.4 संरचना शिल्प

5.4.1 काव्य भाषा

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के बाद खड़ी बोली का स्वरूप निश्चित करने और उसे दिशा देने के कार्य में पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी और उनके शिष्य मैथिलीशरण गुप्त का बहुत बड़ा योगदान है। गुप्तजी ने अपने काव्य के लिए खड़ी बोली को ही स्वीकार किया था। राष्ट्रीय आंदोलन की चेतना को जनमानस तक पहुँचाने का एक प्रभावी माध्यम खड़ी बोली में रची हुई कविता को माना गया। गुप्तजी इस कार्य को पूर्ण रूप से समर्पित थे। अतः द्विवेदी युग में खड़ी बोली हिंदी राष्ट्रीय-आंदोलन की चेतना को जगाने का माध्यम बन सकी। गुप्तजी का कहना था कि राष्ट्र-भाषा के बिना देश प्रेम की चर्चा कृत्रिमता पैदा करती है। वास्तव में खड़ी बोली का यह आंदोलन तथा उत्कर्ष देश को मानसिक पराधीनता से छुटकारा दिलाने का उसी प्रकार सर्वोत्तम साधन था जिस प्रकार राजनीतिक पराधीनता की मुक्ति का साधन सत्याग्रह था। हम देखेंगे कि मैथिलीशरण गुप्त की साहित्य साधना के विकास के साथ-साथ खड़ी बोली का भी विकास होता चला गया।

अब हम गुप्तजी की भाषा के क्रमिक विकास के संबंध में विचार करते हुए देखेंगे कि ''खड़ी बोली'' उनके काव्यों में निखार पाकर किस प्रकार समृद्ध और साहित्यिक बनी है। गुप्तजी ने स्वीकार किया था कि काव्य की भाषा का आधार लोकजीवन की भाषा होनी ही चाहिए तभी वह लोक मानव के विचारों और प्रभावों को अभिव्यक्त कर सकती है। स्वयं गुप्तजी ने खड़ी बोली के संबंध में विचार व्यक्त किए थे। वे कहते हैं ''मेरी-अल्पबुद्धि तो यह कहती है कि अब खड़ी बोली में ही कविता होना सर्वथा इष्ट है। जिस हिंदी को हम राष्ट्रभाषा बनाने की कोशिश करें उसी का साहित्य कविता से खाली पड़ा रहे यह कैसे दुःख की बात है। कविता साहित्य का प्राण है। जिस भाषा में कविता नहीं, वह भाषा कभी साहित्यवती होने का गर्व नहीं कर सकती और जिस भाषा को साहित्य का गर्व नहीं, वह राष्ट्र भाषा क्या खाक हो सकती है? अतएव बोलचाल की भाषा में ही कविता होना इष्ट है''।

(मैथिलीशरण गुप्त अभिनन्दन ग्रंथ, पृ. 270-71)

मातृ भाषा के संबंध में उनके मन में जो वेदना थी वह इन शब्दों में प्रकट हुई है-

अहो मातृभाषे! दशा देखी तेरी,
न हो निराशा कभी दूर मेरी।
बड़ा कष्ट है तू अभी दीन ही है,
सभी भांति से हो रही हीन ही है।।

राष्ट्रभाषा के अनादर से गुप्तजी व्यथित थे। अतः खड़ी बोली की काव्य प्रतिष्ठा के लिए अत्यन्त परिश्रम और तपश्चर्या की आवश्यकता थी जो गुप्तजी की कविता में दिखाई देती है। गुप्तजी के प्रथम काव्य संग्रह ''रंग में भंग'' की कुछ काव्य पंक्तियों को देखते ही खड़ी बोली का एक स्वाभाविक रूप हमारे सामने उपस्थित हो जाता है। रचना के प्रथम पद्य की पंक्तियाँ इस प्रकार हैं-

राम नाम ललाभ जिसका सर्व मंगल धाम है,
प्रथम उस सर्वेश को श्रद्धा समेत प्रणाम है।

भाषा का जो यह स्वाभाविक और भौतिक रूप गुप्तजी के काव्य में मिलता है वह आचार्य द्विवेदी, पं. श्रीधर पाठक जी और पं. अयोध्या सिंह उपाध्याय के काव्य में नहीं दिखाई देता है। इसी रचना का एक और उदाहरण देखें -

हो चुका शृंगार जब पूरा यथोचित रीति से।
ले चली वर के निकट सखियाँ उसे तब प्रीति से।।

गुप्तजी की यह रचना व्याकरण की शुद्धता और शब्दों के उचित चयन का एक उदाहरण है। ''रंग में भंग'' के बाद जयद्रथ-वध में खड़ी बोली का उससे भी अधिक सजीव और सुलझा हुआ रूप दिखाई देता है। इस काव्य में भाषा-लालित्य के साथ सर्वप्रथम खड़ी बोली का साहित्यिक रूप उभर कर सामने आया है। शब्द चयन, सूक्तियाँ, मनः स्थिति का चित्रण, तत्सम् शब्दावली और काव्यात्मक गुण इस काव्य में विद्यमान हैं। एक उदाहरण देखें -

रहते हुए तुमसा सहायक प्रण हुआ पूरा नहीं।
इससे मुझे है जान पड़ता भाग्य-बल ही सब कहीं।।
श्रीकृष्ण के सुन वचन अर्जुन क्रोध से जलने लगे।
सब शोक अपना भूलकर करतल युगल मलने लगे।।

भाषा को सशक्त बनाने के लिए मुहावरे और लोकोक्तियों का प्रयोग भी गुप्तजी ने किया। ''भारत भारती'' में अत्यंत सरल भाषा का प्रयोग किया जिसमें बोल-चाल की सामान्य

शब्दावली स्वतः ही आ गई है। यही कारण है कि उस युग में भारत भारती इतनी अधिक लोकप्रिय हुई। ''हम कौन थे, क्या हो गये हैं और क्या होंगे अभी'' इस रचना की यह पंक्ति व्यक्ति गा उठता था। गुप्तजी ने खड़ी बोली को काव्योपयोगी बनाकर सुधड़ रूप प्रदान किया। खड़ी बोली के स्वरूप-निर्धारण में उनका योगदान महत्वपूर्ण माना जाता है। गुप्तजी ने बोलचाल की सरल भाषा का प्रयोग भारत भारती में किया है। कुछ उदाहरण देखिए-

नर-जाति की जननी तथा शुभ शान्ति की स्त्रोतस्विनी
हा देव। नारी जाति की कैसी यहां है दुर्गती।

(भारत भारती)

कोई जगत को सत्य कोई स्वप्न मात्र बता रहा
कोई शकुनि उनमें वहां मध्यस्थ भाव जता रहा

गुप्तजी ने भारतीय गौरव, वीरता और आदर्श को खड़ी बोली के माध्यम से प्रस्तुत कर जनमानस में राष्ट्रीय भावना जगाने का प्रयत्न किया। उनकी यह दूरदर्शिता ही थी कि उन्होंने परम्परागत रूढ़ियों को त्यागकर बदलती हुई परिस्थिति को देखते हुए खड़ी बोली को अपनाया और जीवन भर खड़ी बोली के उत्कर्ष के लिए कार्यरत रहे।

गुप्तजी की भाषा का निखार ''साकेत'' और ''यशोधरा'' में हम देख सकते हैं। इन दो रचनाओं में गुप्तजी के विचारों की गहनता और अभिव्यक्ति की उत्कृष्टता प्रकट हुई है। मानव मन की विभिन्न मनोदशाओं को दर्शाने के लिए उचित शब्दों का प्रयोग किया है। ''साकेत'' की रचना में गुप्तजी खड़ी बोली के माध्यम से व्यक्ति के मनोवैज्ञानिक भावों को चित्रित करने में एक सिद्धहस्त कवि के रूप में हमारे सामने आते हैं। मन्थरा की सीख मानकर कैकेयी का यह रूप कितना भयानक और स्वाभाविक है-

उठी तत्क्षण कैकेयी कांप, अधर दंशन करके कर चांप।
अन्त में सारे अंग समेट, गई वह वहीं भूमि पर लेट।।

कैकेयी के क्रोध और असन्तोष का चित्रण गुप्तजी ने ''अधर-दंशन'' तथा ''अंग समेटना'' आदि शब्दों के प्रयोग द्वारा प्रस्तुत किया है।

उर्मिला को लक्ष्मण को यह कहना कि-

''मेरे उपवन के हरिण आज वनचारी।
मैं बांध न लूंगी तुम्हें तजो भय भारी।।

इन पंक्तियों में उर्मिला की भावनाओं की अत्यंत सरल अभिव्यक्ति है। प्रत्येक प्रकार के भाव को भाषा की परिधि में बांधने की क्षमता गुप्तजी की लेखनी में दिखाई देती है। इसी तरह, ''यशोधरा'' की रचना द्वारा ''यशोधरा'' के जीवन को भी भारतीय आदर्शों और मानवीय प्रवृत्तियों के आधार पर प्रस्तुत किया है।

''दीन न हो गोपे, सुनो हीन नहीं नारी कभी।''

कहकर नारी की हीनता को अमान्य सिद्ध कर दिया, क्योंकि वह तो पूज्य है।

''अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी,
आंचल में है दूध और आंखों में पानी''।

इन पंक्तियों द्वारा गुप्तजी ने भारतीय नारी के आसुंओं और उसकी पीड़ा का वास्तविक रूप प्रस्तुत किया है। हम देखेंगे कि खड़ी बोली के विकास का स्वाभाविक रूप यशोधरा में दिखाई देता है। गुप्तजी ने नारी का महत्व व्यक्त करने के लिए ''गोपा बिना गौतम भी

ग्राहय नहीं मुझको'' इस उक्ति का सार्थक प्रयोग किया है। ''क्या भाग रहा हूं भार देख! तू मेरी ओर निहार देख। मैं त्याग चला निस्सार देख''।

इन पंक्तियों में सार्थक शब्दों का यथास्थान और यथा-अवसर प्रयोग किया है। गुप्तजी ने संस्कृत शब्दों का प्रचुर प्रयोग भी बार-बार किया है परन्तु उनकी भाषा संस्कृत-बहुला नहीं है। तद्भव और तत्सम शब्दों का प्रयोग उनकी रचनाओं में मिलता है- उदाहरण शब्द का एक उदाहरण देखिए-

भर गया भिनय पुराधिष्ठामि,
रतिमुखाब्ज तिमिराम्बोधिस मुद्धृता।

कुछ अप्रचलित संस्कृत शब्दों का प्रयोग भी गुप्तजी ने किया है। जैसे अरून्तुद, त्वेश, आस्य आदि। गुप्तजी ने साकेत में कुछ देशज शब्दों का प्रयोग किया है जो बोलचाल के शब्द है और ब्रजभाषा, बुन्देलखंडी, अवधी आदि में प्रचलित भी थे- जैसे मचिया, डिढौना, धुंवाधार, निगोड़ी, जल लौं, सहेजा, जूझना इत्यादि। गुप्तजी ने छोटे-छोटे समास वाले पदों के साथ-साथ दीर्ध सामासिक पदों का भी प्रयोग किया है। कुछ उदाहरण देखें-

1. कवि की मानस- कोश विभूति- विहारिणी
2. जन-सिन्धु तरंग चेष्टितः।
3. निविराम्बोधि समृद्धृता मही।

गुप्तजी ने सूर, तुलसी और भारतेन्दु की परम्परा को अपनाकर अपनी रचनाओं में मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग व्यापक रूप में किया है। इसका कारण था अपनी भाषा को लोक-मानस तक पहुंचाना। लोकोक्ति और मुहावरों का प्रयोग भाषा को सशक्त तथा उसमें सौंदर्य लाने हेतु भी किया है। कुछ उदाहरण देखें-

आश्चर्य है घर में उन्होंने सिन्धु को है भर दिया

(भारत-भारती)

सामने से हट अधिक न बोल, द्विजिह्वे
रस में विष मत घोल

(साकेत)

मेरी मलिन गूंदड़ी में भी है राहुल -सा लाल।

(यशोधरा)

इसके अतिरिक्त धूल भरे हीरे, मन मारना, प्राणों पर खेलना, लहू बहाना, कागजी घुड़दौड़ आदि अनेक मुहावरों का आकर्षक प्रयोग किया है। गुप्तजी ने भाषा का सौन्दर्य बढ़ाने के लिए साथ-साथ भाषा में प्रवाह निर्माण करने हेतु लोकोक्तियों का प्रयोग किया है। कुछ मुहावरों और लोकोक्तियों के वास्तविक रूप में थोड़ा परिवर्तन भी किया है लेकिन उससे उनकी भाषा के सौन्दर्य और शुद्धता में कमी नहीं आई है। गुप्तजी ने कुछ लोकोक्तियों का प्रयोग काव्य को अधिक बोधगम्य और सामान्य जन के समझने के लिए किया है। जैसे-

सिंह और मृग एक घाट पर पानी पीते हैं।
एक-एक दो हुए उन्हें एकादश जाने।
पापी जन का पाप उसी का भक्षक होगा।

इस तरह, हम देखते हैं कि गुप्तजी के काव्य का मुख्य उद्दश्य जनमानस तक पहुंचकर उनमें चेतना जगाना था।

काव्य रूप

गुप्तजी की प्रवृत्ति प्रबंध काव्य की ओर रही है। उनकी दो रचनाएँ ''साकेत और ''यशोधरा'' प्रबंधात्मक है। परन्तु उनके प्रबंध काव्य परम्परागत प्रबंध काव्यों से अलग हैं। उनके काव्य के नायक, संघर्षशील और वीर होते हुए भी जन-सामान्य के एक प्रतिनिधि के रूप में उभरते हैं। वे अधिक मानवीय हैं। उनके प्रबंध काव्यों में गीतात्मक प्रवृत्ति अधिक है। गुप्तजी ने संवाद शैली के द्वारा प्रबंध काव्य को गति प्रदान की है। संवादों की सहायता से विषयवर्णन सजीव और आकर्षक हो गया है। ''साकेत'' में उर्मिला-लक्ष्मण संवाद और कैकेयी-मंथरा संवाद ''यशोधरा'' में यशोधरा-संवाद, महत्वपूर्ण संवादों के उदाहरण हैं। संवाद का एक उदाहरण इस प्रकार है-

''शुभे तुम्हारे कौन उभय ये श्रेष्ठ हैं?
गोरे देवर, श्याम उन्हीं के ज्येष्ठ हैं।

काव्य शैली के बाद हम अलंकार और छंद के बारे में विचार करें।

अलंकार योजना :गुप्तजी का काव्य अलंकारों की दृष्टि से पर्याप्त समृद्ध है। उन्होंने काव्य सौंदर्य की वृद्धि के लिए शब्दालंकार और अर्थालंकार दोनों का ही प्रयोग किया है। उनकी रचनाओं का कला पक्ष अलंकारों की समुचित योजना से समृद्ध है। कुछ उदाहरण देखिए-

पड़ी थी बिजली विकराल,
लपेटे थे घन जैसे बाल।

काले-काले बादलों को काले केशों की उपमा देकर रचना का सौन्दर्य द्विगुणित हो गया है।

रत्णाभरण भरे अंगों में ऐसे सुन्दर लगते थे।
ज्यों प्रफुल्ल वल्ली पर सौ सौ जुगनू जगमग जगते थे।

(पंचवटी)

इस रचना का भाव है, शूर्पणखा का शरीर पूर्ण रूप से खिली हुई लता के समान है और उस पर सोने के आभूषण जुगनुओं के समान जगमगा रहे हैं। जुगनुओं की चमक से शूर्पणखा के शारीरिक सौंदर्य की ओर भी कवि ने संकेत किया है। गुप्तजी द्वारा रूपक, श्लेष, व्यतिरेक, विरोधाभास, अनुप्रास इत्यादि अलंकारों का प्रयोग काव्य सौंदर्य को बढ़ाता है और भावाभिव्यक्ति में सहायक होकर कवि-कौशल का परिचय देता है।

गुप्तजी की भाषा विशेषताओं को देखने के बाद हम उनकी भाषा शैली को भी देखें।

5.4.2 काव्य शिल्प

छन्द योजना

गुप्तजी का समस्त साहित्य छन्दबद्ध है। उन्होंने विशेष रूप से लयात्मक, शास्त्रीय छन्दों का प्रयोग किया है। ''यशोधरा'' में उन्होंने ''चम्पू'' पद्धति भी अपनाई है और सिद्धराज, विष्णुप्रिया में मुक्त छन्द की रचनाएं भी की हैं। स्वयं गुप्तजी ने छन्द के बंध को काव्य के लिए संयम ही समझा और उस मर्यादा का पालन गुप्तजी ने अपने काव्य के अंतर्गत किया है। छंद कविता की गति को व्यवस्थित ही करते हैं। ''यशोधरा'' का एक उदाहरण देखिए, जिसमें रोला छंद का प्रयोग किया गया है।

1. रोना गाना बस यही जीवन के दो अंग।
   एक संग मैं ले रही दोनों का रस रंग।।

2. सिद्धि हेतु स्वामी गये, यह गौरव की बात।
पर चोरी चोरी गये यही बड़ा व्याघात।।

(यशोधरा)

एक गीतिका छंद का उदाहरण भी देखिए-

1. लोक शिक्षा के लिए अवतार जिसने था लिया।
निर्विकार निरीह होकर नर सदृश कौतुक किया।।

2. राम नाम ललाम जिसका सर्व मंगल धाम है।
प्रथम उस सर्वेश का श्रद्धा समेत प्रणाम है।।

(रंग में भंग)

गुप्तजी ने विविध छंदों का सफल प्रयोग किया है । इस सम्बन्ध में डॉ. नगेन्द्र ने कहा है-

''इतने प्रकार के छंदो का प्रयोग करना तो कठिन नहीं है परन्तु सर्वत्र प्रसंग का ध्यान रखना और प्रत्येक छंद को पूर्ण सफलता से प्रयुक्त करना कौशल का परिचायक है।''

खड़ी बोली में काव्य सृजन करते समय गुप्त जी ने जो छंदों का आधार अपनाया, वह उनकी समस्त काव्य रचना में निरंतर चलता ही रहा । इस प्रकार उनकी भाषा-शैली को ''छंदोबद्ध शैली'' में भी कहा जा सकता है। छंदोबद्धता के कारण उनकी भाषा में तोड़-मरोड़ की त्रुटियों और आवृत्ति का दोष भी मिलता है परन्तु उन्होंने भाषा की शुद्धता और प्रसाद -गुण का पूरा-पूरा ध्यान रखा है।

गुप्तजी की काव्य शैली का विस्तृत अध्ययन करने बाद यह भी देखना आवश्यक है कि गुप्तजी के काव्य पर संस्कृत के अलावा और कौन-कौन सी भाषाओं का प्रभाव पड़ा है। आचार्य द्विवेदी के शिष्य के रूप में गुप्त जी ने काव्य रचना का आरम्भ किया था तब खड़ी बोली पर कर्कशता का दोष लगाया जा रहा था। ''रंग में भंग'' और ''जयद्रथ वध'' के निर्माण के बाद गुप्तजी ने खड़ी बोली के शब्दों की कोमलता और सरसता की ओर ध्यान दिया। इसी समय बंगाल में रवीन्द्र नाथ ठाकुर के काव्य की चर्चा थी और उन्हें अंतरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त हो चुकी थी। स्वभावतः गुप्तजी का ध्यान बंगला काव्यों की ओर आकर्षित हुआ। बंगला के चार काव्य ग्रंथों का अनुवाद उन्होंने खड़ी बोली में प्रस्तुत किया।

इन अनुवादों की कोमल, कर्णप्रिय शब्दावली का प्रभाव गुप्तजी की विकटभट, सिद्धराज और विष्णुप्रिया आदि रचनाओं की भाषा पर स्पष्ट दिखाई देता है। बंगला के अलावा गुप्तजी की भाषा पर संस्कृत का भी गहरा प्रभाव रहा है। संस्कृत तत्सम शब्दों का प्रयोग उनके काव्य में विशेष रूप से दिखाई देता है। कालिदास की रचना वसन्त वर्णन का गुप्तजी ने खड़ी बोली में अनुवाद किया।

कुछ अंग्रेज़ी कविताओं का भी उन्होंने हिंदी में अनुवाद किया है। उनके काव्य पर अंग्रेज़ी का सीधा प्रभाव नहीं दिखाई देता, लेकिन कुछ अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग उन्होंने कविता में किया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि गुप्तजी ने अन्य भाषाओं के केवल उन्हीं प्रभावों को ग्रहण किया जिससे खड़ी बोली को प्रतिष्ठित किया। खड़ी बोली के माध्यम से उन्होंने भारतीय अतीत को प्रस्तुत करके जन-जन तक राष्ट्रीयता का संदेश पहुंचाया।

बोध प्रश्न 3

खड़ी बोली को हिंदी साहित्य की भाषा के रूप में स्थापित करने के लिए गुप्तजी अपने लेखन में देशज शब्दों, प्रादेशिक बोलचाल के शब्दों, मुहावरे और कहावतों का प्रयोग किया है। इनमें से प्रत्येक के दो-दो उदाहरण दीजिए।

1. देशज शब्द

 1) .... 2) ....

 3) .... 4) ....

2. बोलचाल के शब्द

 1) .... 2) ....

 3) .... 4) ....

3. मुहावरे और कहावतें

 1) .... 2) ....

अभ्यास

1. खड़ी बोली आंदोलन द्वारा गुप्तजी ने देश को मानसिक पराधीनता से मुक्ति दिलाने का प्रयास किया। इस बारे में अपने विचार दस पंक्तियों में लिखिए।

 ....

 ....

 ....

 ....

 ....

 ....

 ....

 ....

5.5 सारांश

भारतीय नवजागरण के कारण हिंदी (साहित्य) काव्य में जिन विभिन्न प्रवृत्तियों का विकास हुआ था उन सभी प्रवृत्तियों की अभिव्यक्ति हम गुप्तजी के काव्य में देख चुके हैं। इन्हीं प्रवृत्तियों के आधार पर हम गुप्तजी के काव्य का मूल्यांकन करेंगे।

भारतीय नवजागरण के परिणामस्वरूप जिन सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक, और साहित्यिक मूल्यों का विकास हुआ, उन सभी की अभिव्यक्ति गुप्तजी के काव्य में हुई है। सर्वप्रथम भारत के स्वतत्रंता आंदोलन को आगे बढ़ाने और राष्ट्रीय चेतना जागृत करने के उद्देश्य से गुप्तजी ने भारत-भारती काव्य की रचना की। इस काव्य रचना के माध्यम से भारतीय जनता के समक्ष अपने भव्य और उज्वल अतीत का चित्र प्रस्तुत करके देशवासियों के मन में देश की स्वाधीनता की भावना को जगाने का महत्वपूर्ण प्रयास किया। उत्तर भारत में गुप्तजी का भारत भारती काव्य इतना अधिक लोकप्रिय हुआ कि पाठशालाओं में छात्र और सत्याग्रही आंदोलनों में इनके पद्य गाते थे। गुप्तजी की अन्य काव्य रचनाओं में जैसे द्वापर, साकेत, जयद्रथ वध, सिद्धराज भी ऐतिहासिक और पौराणिक कथानकों के आधार पर भारतीय अतीत की भव्यता का चित्रण करते हैं। भारतीय जन-मानस में दश-प्रेम की भावना को जगाने हेतु गुप्तजी ने ऐतिहासिक और पौराणिक कथानकों का आधार लिया।

गुप्तजी का हिन्दू धर्म और वैष्णव धर्म परम्परा में विश्वास था। परन्तु उन्होंने राष्ट्रीय आंदोलन में विभिन्न धर्म और सम्प्रदायों का महत्व प्रतिपादन करने के उद्देश्य से ''काबा'' और ''कर्बला'' नाम से दो खंड काव्यों की रचना की और सिक्ख धर्म के गुरूओं के प्रति श्रद्धा व्यक्त करने के लिए ''गुरुकुल'' काव्य की रचना की। सर्वधर्मसमभाव के तत्व को गुप्तजी ने पूर्ण रूप से आत्मसात कर लिया था। उनकी दृष्टि में राष्ट्रीयता और विश्व प्रेम में धर्म कोई बाधा नहीं है। समाज के सभी वर्गों के लोगों की समानता और स्वतंत्रता का प्रतिपादन गुप्तजी ने अपने ''स्वदेश संगीत'' और साकेत तथा सिद्धराज काव्य रचनाओं में किया है। गुप्तजी ने जन्म के आधार पर जाति के निश्चित होने का विरोध किया है और कर्म तथा शील को सामाजिक मर्यादा का आधार माना है। समाज के पिछड़े वर्ग के लोगों के उत्थान के लिए कार्य करने की आवश्यकता का प्रतिपादन किया है।

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में सुधारवादी आंदोलन के फलस्वरूप समाज में नारी की अपमानजनक स्थिति और उसके मर्यादित अधिकारों के प्रति लोगों ने सोचना शुरू किया। पर्दा-प्रथा, बाल-विवाह, सती प्रथा आदि का विरोध होने लगा और स्त्री शिक्षा, विधवा विवाह को प्रोत्साहन दिया जाने लगा। स्त्री-पुरुष समानता की भावना दृढ़ होने लगी। स्वतंत्रता आंदोलन में नारी की सक्रियता पर जोर दिया जाने लगा। गुप्तजी ने अपनी महत्वपूर्ण रचनाएँ ''यशोधरा'' और ''साकेत'' में नारी के महत्व और उसके आदर्शों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। ''विष्णुप्रिया'' में मध्यवर्गीय परिवार की सहनशीलता, प्रतिपरायण और गृहस्थ नारी का चित्रण किया है।

गुप्तजी ने राष्ट्रीय चेतना, धार्मिक एकता, देश प्रेम और विश्व-बंधुत्व की भावना को बढ़ाने का प्रयास किया है। साथ ही साथ शोषण के विरूद्ध भी आवाज़ उठाई है। किसानों की दुर्दशा के प्रति उन्होंने केवल सहानुभूति ही व्यक्त नहीं की है बल्कि राज्य व्यवस्था और सरकारी नीति के विरूद्ध विरोध की आवाज भी उठाई है। मार्क्सवादी विचारधारा को आधार मानकर प्रगतिशील चेतना का गुप्तजी ने ''जयिनी'' नामक काव्य रचना द्वारा उद्घोष किया है। श्रमजीवियों की समस्याओं की ओर भी उन्होंने संकेत किया है। उस समय की प्रत्येक सामाजिक समस्या के प्रति एक सजग रचनाकार की भांति गुप्तजी ने अपनी आवाज़ उठाई है।

गुप्तजी ने ''यशोधरा'' नामक रचना में बौद्ध मत के सभी सांस्कृतिक सन्दर्भों को स्पष्ट किया है, जिसके आधार पर बौद्ध मत की वैदिक मत से भिन्नता स्पष्ट हो जाती है। वेदों के आधार पर यज्ञ आदि कर्मकांडों में पशु बलि के रूप में उस समय जो हिंसा हो रही थी उसके विरोध में बौद्ध मत ने अहिंसा का मार्ग अपनाया। गुप्तजी ने बौद्ध मत के इस महत्वपूर्ण मार्ग को अपनी रचनाओं में अभिव्यक्ति दी है और वैदिक हिंसा का कटाक्ष भी किया है। उन्होंने मानवता की महत्ता और समानता में अटूट विश्वास प्रकट किया है।

गुप्तजी के आविर्भाव के समय राष्ट्रीय चेतना का विकास, प्रारंभ हुआ था। सामाजिक दृष्टि से सुधारवादी आंदोलन की लहर बल पकड़ रही थी। साहित्यिक दृष्टि से स्वच्छन्दतावादी भावनाओं का विकास और नैतिक मूल्यों की स्थापना होने लगी थी। मैथिलीशरण गुप्त का काव्य उसी परम्परा की कड़ी है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए काव्य भाषा के विकास में गुप्तजी के योगदान का मूल्यांकन अपेक्षित है।

नवजागरण युग की राष्ट्रीय चेतना को उभारने में खड़ी बोली का स्वर सबसे अधिक मुखर रहा है। गुप्तजी ने खड़ी बोली को काव्य भाषा के रूप में अपनाकर भारतीय संस्कृति का गुणगान, राष्ट्रीय चेतना की अभिव्यक्ति और राष्ट्रीय गौरव तथा स्वाभिमान की भावना को दृढ़ बनाने में बहुत बड़ा योगदान दिया। जो साहित्य, ''ब्रजभाषा'' और ''अवधी'' के कारण केवल आदर्शवादी बनकर रह गया था, उस साहित्य को गुप्तजी ने जन-सामान्य की भाषा के माध्यम से यथार्थ के धरातल पर प्रतिष्ठित किया। खड़ी बोली के स्वरूप निर्धारण में गुप्तजी का योगदान महत्वपूर्ण है। बोलचाल की भाषा का स्वाभाविक रूप और चित्रमय

भाषा का प्रयोग करके गुप्तजी ने काव्यात्मक चित्र प्रस्तुत किए हैं। संस्कृत, ब्रजभाषा, अवधी के शब्दों का प्रयोग उन्होंने भाषा को समृद्ध बनाने के उद्देश्य से किया है। प्रचलित मुहावरे और कहावतों का प्रयोग करके भाषा को समृद्ध और सुंदर बनाया। खड़ी बोली को नवीन शब्द, उनके नवीन प्रयोग और नवीन अर्थ दिया जिनका विकास हम छायावादी कवियों की कविता में स्पष्ट रूप से देखेंगे। गुप्तजी ने काव्य शैली की सभी पद्धतियों का प्रयोग किया है। प्रबंधात्मक काव्य रचना पद्धति को अपनाकर हिंदी काव्य को अनेक प्रकार की विशेषताओं और नवीनताओं से अलंकृत किया। वस्तु-विन्यास, भाव-व्यंजना, चरित्र-चित्रण, अभिव्यक्ति, अप्रस्तुत विधान, छन्द रचना और भाषा के गठन संबंधी अनेक प्रकार के सफल प्रयोग गुप्तजी के काव्य में मिलते हैं। प्रबंध काव्य में गीति पद्धति का सफलतापूर्वक निर्वाह किया। गुप्तजी ने छन्दबद्ध रचना पर अधिक ध्यान दिया है। उनकी समस्त रचनाएं छन्दोबद्ध ही हैं। लयात्मक शास्त्रीय छन्दों का उपयोग उन्होंने किया है। यशोधरा में ''चम्पू'' छन्द की पद्धति अपनाई है और सिद्धराज, ''विष्णुप्रिया'' में मुक्त छन्द की रचनाएं भी की हैं। भाषा को विशिष्ट रूप प्रदान करने के साथ-साथ काव्य शैली के अनेक रूपों का प्रयोग अपनी काव्य रचनाओं में करने का प्रयास गुप्तजी के महत्वपूर्ण योगदान माने जा सकते हैं। गुप्तजी के द्वारा भाषा और शैली के क्षेत्र में किए इन प्रयोगों के कारण छायावादी काव्य को अपना मार्ग बनाने में सुविधा हुई।

5.6 शब्दावली

आत्मसात : भली भांति जाना और समझा हुआ

सांस्कृतिक पुनरुत्थान : प्राचीन संस्कृति को फिर से जानने समझने, अपनाने की चेष्टा

पुनरूज्जीवन : फिर से जीवित करना

साम्प्रदायिक समन्वय : विभिन्न धर्मों और संप्रदायों का मेल

मानिनी : स्वाभिमानी नायिका

कर्ण प्रिय शब्दावली : सुनने में अच्छी लगने वाली शब्दावली

सर्व धर्म समभाव : सभी धर्मों को समान समझने की स्थिति।

5.7 उपयोगी पुस्तकें

रामविलास शर्मा, महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिंदी नवजागरण, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।

मैथिलीशरण गुप्त - व्यक्ति और अभिव्यक्ति, संपादकः डॉ. सी.एल. प्रभात।

5.8 बोध प्रश्नों / अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1. 20 वीं शताब्दी में नवजागरण की चेतना के कारण राष्ट्रीय चेतना का विकास हुआ। सन् 1885 में कांग्रेस महासभा की स्थापना, बंगाल का विभाजन और स्वतंत्रता आन्दोलन के कारण भारतीय साहित्य में राष्ट्रीय भावना का स्तर ऊंचा हुआ। जिसकी प्रथम अभिव्यक्ति भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और महावीर प्रसार द्विवेदी के साहित्य में हुई। जिसने पराधीनता के बोध से स्वाधीनता के लिए प्रयत्नशील होने की चेतना जगाई।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

2. i) राष्ट्रीय आन्दोलन
   ii) सामाजिक सांस्कृति चेतना का विकास
   iii) आधुनिक हिंदी काव्य चेतना का विकास
   iv) विज्ञान के प्रति आस्था
   v) अंधविश्वास आदि से मुक्ति का प्रयास

3. 1. बाल-विवाह, अनमेल विवाह, सती प्रथा।

बोध प्रश्न 2

1. 1) अतीत चित्रण
   2) वर्तमान दुर्दशा का चित्रण
   3) गौरवपूर्ण इतिहास
   4) पौराणिक/ऐतिहासिक कथानक
   5) उज्ज्वल भविष्य की आकांक्षा

2. i) साकेत
   ii) यशोधरा
   iii) गौरवपूर्ण इतिहास

3. 5.3.4 का भाग देखें।

4. i) समानता का भाव
   ii) अस्पृश्यता का विरोध
   iii) मंदिर प्रवेश की अनुमति
   iv) बंधुत्व भाव

बोध प्रश्न 3

1. 5.4.1 का उपभाग देखें
2. 5.4.1 का उपभाग देखें।
3. 5.4.1 का उपभाग देखें।

इकाई 6 रामनरेश त्रिपाठी और उनकी कविता

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 युग-परिवेश

6.3 जीवन-वृत्त एवं व्यक्तित्व

6.4 रामनरेश त्रिपाठी का रचना-संसार

6.5 काव्य सौन्दर्यः प्रमुख स्वर

- 6.5.1 राष्ट्रीय-भावना का प्रसार
- 6.5.2 सामाजिक-चेतना एवं सुधार दृष्टि
- 6.5.3 प्रेमानुभूति की उदात्तता
- 6.5.4 प्रकृति-प्रेम
- 6.5.5 सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक चेतना
- 6.5.6 लोक-साहित्य का मर्म

6.6 रचना-विधानः विविध आयाम

- 6.6.1 काव्य भाषा
- 6.6.2 लाक्षणिक एवं व्यंजनात्मक शैली
- 6.6.3 लोकोक्ति एवं मुहावरे
- 6.6.4 अप्रस्तुत-विधान
- 6.7.5 छन्द-विधान

6.7 रामनरेश त्रिपाठी का योगदान

6.8 सारांश

6.9 शब्दावली

6.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

6.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

6.0 उद्देश्य

करुणा- सिक्त व्यक्तित्व, गांधीवादी विचार एवं मानवतावदी दृष्टि से सम्पन्न द्विवेदी-युगीन इस राष्ट्रीय-चेतना के ऐतिहासिक एवं शाश्वत मूल्यों वाले कवि रामनरेश त्रिपाठी पर लिखी गई इस इकाई के अध्ययन से आपः

- रामनरेश त्रिपाठी के सृजन-युग की परिस्थितियों एवं परिवश के विषय में जान सकेंगे;
- त्रिपाठी जी के जीवन, व्यक्तित्व एवं रचना-संसार को समझ सकेंगे;
- कवि के काव्य-संसार में गूंजने वाले राष्ट्रीय, सामाजिक, सांस्कृतिक, लौकिक, ऐतिहासिक एवं प्रेम तथा प्रकृति संबंधी स्वरों को पहचान सकेंगे,

- त्रिपाठी जी के रचना-विधान में मिलने वाली भाषा, शैली, लोकोक्ति-मुहावरे से परिचित होंगे;
- अप्रस्तुत-विधान तथा छन्द-विधान के वैशिष्ट्य को समझ सकेंगे; तथा
- युगीन-काव्य धारा एवं हिंदी-साहित्य में रामनरेश जी की भूमिका समझ सकेंगे।

6.1 प्रस्तावना

पंडित रामनरेश त्रिपाठी, द्विवेदी युगीन स्वच्छन्द-प्रेमधारा के उन प्रमुख कवियों में से एक हैं जिन्होंने आधुनिक हिंदी-साहित्य की मज़बूत बुनियाद भरने का अभूतपूर्व कार्य किया है। सन् 1912 से 1946 तक के अभूतपूर्व साहित्य युग में नए विषय, नई प्रतिपादन शैली, कोमलता एवं चारुतापूर्ण भाषा, भावों की गहनता एवं उनके विश्लेषण की मार्मिक अभिव्यक्ति, आदर्शों की छाया में जीवन के मर्म को छूने वाले भाषिक- चित्र तथा व्यंजना शक्ति के बल पर उदात्त विचारों का प्रतिपादन सभी को इस विकासमान-साहित्य में पग-पग पर देखा जा सकता है। श्रीधर पाठक, सियारामशरण गुप्त, मुकुटधर पाण्डेय, माखनलाल चतुर्वेदी, गोपालसिंह तथा मैथिलीशरण गुप्त आदि बहुत से कवियों ने साहित्य एवं समाज के लिए जो परिवेश तैयार किया उसमें प्रभावपूर्ण एवं भावपूर्ण कविता का सृजन हुआ। इस कविता में साधारण प्रेम, राष्ट्रीय चेतना, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक एवं सामाजिक जागृति, लौकि संस्पर्श, वीरता,भक्ति एवं त्याग-भावनाओं जैसी मानव जीवन की उच्चवृत्तियों को अभिव्यक्ति मिली। प्रकृति की मनोहारी छटा अब रीतिकाल परिवेश के बंधनमय वातावरण से निकलकर, परम्परागत रूढ़ियों को तोड़ते हुए उन्मुक्त एवं स्वच्छन्द आंगन में विहार करने लगी। महावीर प्रसाद द्विवेदी-मंडल से बाहर रहकर उत्कृष्ट सृजन की अमूल्य निधि देने वाले रामनरेश त्रिपाठी जी के काव्य में भी इन समस्त गतिविधियों का समावेश हुआ और उन्होंने इनके उत्कृष्ट वर्णन से अपनी स्वच्छन्दतावादी दृष्टि को स्पष्ट ही नहीं प्रमाणित भी किया है। द्विवेदी युगीन कविता की समस्त विषम परिस्थितियों का लेखा-जोखा प्रस्तुत करती यह कविता-धारा अन्याय और अपमान के प्रति विद्रोह ही नहीं करती, तत्कालीन इतिहास का संपूर्ण बोध एवं दस्तावेज़ी-ब्यौरा भी पाठक तक पहुँचाती है। इसमें कोई संदेह नहीं कि त्रिपाठी जी का काव्य पौरुष का काव्य है। गांधीवादी विचारों का आदर्श उनके साथ है, किन्तु कायरता को बढ़ावा देने वाली शक्ति उन्हें स्वीकार्य नहीं। राष्ट्रीय भूमि, प्रकृति एवं सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों की धरोहर से त्रिपाठी जी का संस्कारगत मोह है, जिसे उनके पूरे साहित्य में देखा भी जा सकता है। काव्य एवं गद्य, चरित एवं व्यंग्य, शिक्षा एवं चित्र, इतिहास एवं समालोचना, संपादन एवं संग्रह तथा संस्कृति एवं राजनीति आदि अनेकों क्षेत्रों में उनकी सृजनात्मक-प्रतिभा के अद्भुत-वैशिष्ट्य का परिचय मिलता है। अपने संपूर्ण रचना-संसार में वे जागृति के साहित्यकार जान पड़ते हैं। अतः जीवन का सर्वांगीण चित्रण राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक सन्दर्भ में करने वाले इस भविष्योन्मुखी कवि का विस्तृत अध्ययन हम इस इकाई में कर रहे है।

6.2 युग-परिवेश

यह सर्वमान्य सत्य है कि साहित्यकार व्यक्ति, समाज, राष्ट्र एवं इन सभी के जीवन-परिवेश से बचकर नहीं चल सकता। कवि या साहित्यकार के काव्य और साहित्य-संसार को समाज की प्रत्येक घटना आन्दोलित करती है। सामाजिक प्राणी होने के कारण साहित्यकार का सामाजिक घटनाओं से प्रभावित होना सहज ही नहीं अनिवार्य भी है। इन्हीं सामाजिक अनुभवों से साहित्यकार के प्रतिपाद्य में सजीवता आती है। युगीन परिस्थितियाँ एवं परिवेश कवि को गति एवं ज्ञान प्रदान करते हैं और इन्हीं से उसे लोकहृदय की पहचान भी हो पाती है। रामनरेश त्रिपाठी का युग भी ऐसा ही युग था, जो संवेदनशील कवियों एवं लेखकों को अपने परिस्थितिजन्य परिवेश के दायरे में चाहे-

अनचाहे खींचता और आकर्षित करता था। यहाँ हम त्रिपाठी जी के साहित्य-सृजन की जड़ों को सींचने वाले और बीज-प्रस्फुटन की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले उसी युग-परिवेश की चर्चा करेंगे।

राजनैतिक-परिवेश

भारतीय राजनीति एवं राष्ट्रीय जीवन में सन् 1857 की क्रांति के बाद सजीवता और साहस का प्रचार होने लगा था। देशभक्ति और राष्ट्रीय जागृति का लक्ष्य लेकर चलने वाली इस क्रांति ने समस्त देश को झकझोर कर विद्रोह एवं जन-संघर्ष की राह दिखाई परिणामतः अंग्रेज़ों ने जनता पर अत्याचार और दमन की राह अपनाई। एक तरफ तो अन्याय, अत्याचार, अपमान और शोषण का यह चक्र था जिसमें भारत की गरीब जनता पिस रही थी और दूसरी तरफ बौद्धिक वर्ग अंग्रेज़ों के आगमन पर अपने को धन्य महसूस कर रहा था। भारतेन्दु की ये प्रशस्ति भरी पंक्तियाँ इसी का प्रमाण हैः

स्वागत-स्वागत धन्य तुम भावी राजाधिराज
भई सनाथ भूमि यह परसि चरण तुव आज।

किन्तु प्रशस्ति का यह भ्रम शीघ्र ही टूटने लगा। पश्चिमी-सभ्यता के समता, बंधुत्व, स्वातंत्र्य एवं प्रजातंत्र आदि तथाकथित मानवीय मूल्यों का स्वप्न भारतेन्दु युग में ही बिखरने लगा। आर्थिक, राजनैतिक एवं सामाजिक शोषण की वास्तविकता नग्न होने लगी। अंग्रेज़ों की स्वार्थ-लिप्त व्यापारिक एवं साम्राज्यशाही नीतियाँ, उनकी शोषण करने की विविध चालें तथा धोखे भरे इरादे स्पष्ट होने लगे। ऐसे में राष्ट्रीयता की भावना धीरे-धीरे बल पकड़ने लगी। ज़मीदारी व्यवस्था को भारतीयों ने नया रूप देना प्रारम्भ कर दिया। विविध स्तरों पर आर्थिक शोषण सह रही जनता ने अपने अधिकारों को मज़बूत करने के संदर्भ में सोचना प्रारम्भ कर दिया। अंग्रेज़ों की कपट नीति ने धार्मिक स्वातंत्र्य का झांसा देकर हिन्दू-मुस्लिम जनता के बीच तनाव पैदा कर दिया। अंग्रेज़ी शिक्षा का प्रचार-प्रसार बढ़ाकर परम्परागत शिक्षा व्यवस्था को कमज़ोर बनाया जाने लगा। परिणामतः शिक्षित वर्ग में स्वाभाविक प्रतिक्रिया हुई और उनमें से कुछ विशिष्ट प्रतिभाओं ने अंग्रेज़ी शिक्षा तथा पश्चिमी सभ्यता एवं संस्कृति से घनिष्ठ सम्पर्क रखकर भी भारतीय परतंत्रता और आर्थिक शोषण के खिलाफ असंतोष की भावना जगाना शुरू कर दिया। छोटी-मोटी बगावत और विद्रोह होने लगे। सन् 1885 में राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना हुई और धीरे-धीरे अंग्रेज़ों के दमन-चक्र तथा बौद्धिक भारतीय जनता के बीच असंतोष एवं तनाव बढ़ने लगा।

इस पूरी स्थिति एवं परिस्थितिजन्य- परिवेश ने प्रत्येक भारतीय साहित्यकार को प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित किया। राष्ट्रीय चेतना एवं जागृति की भावना यहीं से तीव्र होकर फैलने लगी। राजनैतिक क्षेत्र में लोकमान्य तिलक, गांधी, सुभाष तथा लाजपतराय आदि अनेक जन-नेताओं ने जन-जागरण के मोर्चे संभाले। इधर साहित्यकार-सिपाही ने अपनी कलम को संभाला और हिन्दू-मुस्लिम एकता, जातपात-विरोधी भावना, हरिजन उद्धार, स्वदेशी आंदोलन, पराधीन सपनेहुँ सुख नाहीं की भावना, राजनैतिक जननेताओं के प्रति श्रद्धा और आदर भाव, जेल को मंदिर समझने का पवित्र-भाव, परतंत्रता की बेड़ियाँ काट फेंकने का संकल्प तथा मातृभूमि की सेवा के लिए व्याकुल देश-भक्ति - सभी को साहित्य का विषय बनाकर इस जागृति-यात्रा में भाग लिया। कवि रामनरेश त्रिपाठी ने इस जागरण - अभियान में सक्रिय भूमिका निभाई। ''वह दंश कौन-सा है'' जैसी लम्बी कविता तथा ''पथिक'', ''मिलन'', एवं ''स्वप्न'' जैसी काव्य-कृतियों में ये भाव सहज ही देखे जा सकते हैं।

सामाजिक एवं आर्थिक परिवेश

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध एवं बीसवीं शताब्दी के पूर्वाद्ध में अनेक सामाजिक परिवर्तन हो रहे थे। सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक आंदोलनों ने देश को उद्वेलित कर दिया था।

यवनों के युग से चले आ रहे अन्धविश्वास एवं कुरीतियों समाज की जड़ें खोखली कर रहे थे। परतंत्रता के शिकंजे में फंसा समाज तेजी से पतन की ओर उन्मुख था। अत्यधिक धार्मिक वृत्ति ने बौद्धिक वर्ग को भी जकड़ लिया था। आर्य समाज, ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज, थियोसोफीकल सोसाइटी, रामकृष्ण मिशन आदि संस्थाओं ने धर्म का मूलभूत चिन्तन प्रारम्भ कर दिया था। शोषण, महामारियाँ, ज़मीदारों के जुल्म, सूदखोर-महाजनों की निर्दयता, ऋण के सागर में डूबता किसान- सभी युगीन विभीषिकाओं के साक्षी हैं। श्रमिक वर्ग भी सुनियोजित शोषण- व्यवस्था में फंस चुका था। बाल-विवाह, दहेज-प्रथा, सती-प्रथा, तांत्रिक-पूजा तथा बलि जैसी कितनी ही संकीर्णताएँ समाज को घेरे थीं। हिन्दू-मुसलमान-इसाई आदि में पारस्परिक भेदभाव था। ऐसे में उदारता, सहिष्णुता एवं सर्वधर्म स्वभाव की प्रवृत्ति भी जन्म ले रही थी। रामनरेश त्रिपाठी की ''अन्वेषण'' कविता भी धर्म के इसी बुनियादी चिंतन को विषय बनाकर सृजित हुई-

तू जान हिन्दुओं में, ईमान मुस्लिमों में,
तू प्रेम क्रिश्चियन में है, सत्य तू सज्जन में।

वास्तव में, सामाजिक एवं आर्थिक संकट के इस दौर में साहित्यकारों के हृदय में भी असंतोष और तपन थी। उनकी यह तपन विद्रोह बनकर साहित्य में ढली। स्त्री पुरुष के प्रणय भाव को वर्जित मानना, नारी के त्याग की पूर्व-निश्चित धारणा, समाज में पुरुष की प्रधानता तथा सामाजिक आदान-प्रदान के असंतोषजनक तौर-तरीके- सभी ने लेखक समाज को झकझोंरा। एक तरफ पेट भरने से लाचार निम्न वर्ग था तो दूसरी तरफ ज़मींदार, सरकारी-वकील, मिल-मालिक तथा अन्य तथाकथित संभ्रान्त उच्च श्रेणी के व्यक्ति, जो स्वार्थ-लिप्सा में डूबे थे। त्रिपाठी जी ने विदेशी शासन से लाभ उठाने वाले इस वर्ग पर करारा व्यंग्य करते हुए लिखा है-

देश-प्रेम ऐसे पवित्र स्वर्गीय कार्य-साधन को,
बना लिया व्यापार परम आराध्य मानकर धन को,
त्रस्त भूप से मान दान पाने की अभिलाषा से,
कई प्रजा के हैं हितेच्छु निज उन्नति की आशा से।

इसी प्रकार, वे अपने तीनों प्रबंध काव्यों में स्त्री-पुरुष के प्रणय भाव को ही प्रमुखता देते हैं, जबकि इस युग में पावन भाव को वर्जित माना जाता था।''पैसा-परमेश्वर'' नामक नाटक में त्रिपाठी जी इन धन-लोलुपों को नग्न करते हैं। अतः उस युग में बेरोज़गारी, गरीबी, शोषण, धनाभाव में तड़पता कृषक एवं श्रमिक, देशी व्यापार का हनन, विदेशी व्यापार का आरोपण, स्वदेशी कच्चे माल का निर्यात- सभी ने सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति को दुर्व्यवस्था के कगार पर ला खड़ा किया था। ऐसी विकट स्थिति पर लिखित त्रिपाठी जी की ये पंक्तियाँ भी द्रष्टव्य हैं-

धधक रही सब ओर भूख की ज्वाला है घर घर में,
मांस नहीं है, निरी सांस है शेष अस्थि पंज़र में।

सांस्कृतिक एवं साहित्यिक परिवेश

उन दिनों अंग्रेज़ी शिक्षा के प्रचार ने हमारी संस्कृति पर आघात करना प्रारम्भ कर दिया था। हम भारतीय अपने ही घर में विदशी या मेहमान दिखने लगे थे। डॉ. श्रीकृष्ण लाल लिखते हैं- ''भारतीय, प्राचीन संस्कृति और साहित्य की ओर उपेक्षा की दृष्टि से देखते थे और सभी अंग्रेज़ी वस्तुओं पर असीम श्रद्धा रखते थे। मैक्समूलर और मोनियर विलियम्स इनके संस्कृत साहित्य के समालोचक और शिक्षक थे। अंग्रेज़ी विद्वानों की सम्मतियाँ इनके लिए वेद-काव्य थीं।'' (आधुनिक हिंदी साहित्य का विकास; पृष्ठ 21)। अंग्रेज़ शासकों ने कपटपूर्ण नीति का प्रयोग कर भारतीय जनता को पाश्चात्य संस्कृति के रंग में ऐसा रंगा और डुबोया कि आज भी हम उससे मुक्त नहीं हो सके हैं। धीरे-धीरे श्रद्धा और विश्वास

के धरातल पर खड़ी संस्कृति के स्थान पर बौद्धिक धरातल वाली संस्कृति छाने लगी। बंगाल और गुजरात से सांस्कृतिक नवजागरण का श्रीगणेश हुआ। डॉ. शिवदानसिंह चौहान ने लिखा भी है- ''राष्ट्रीय जागरण की प्रथम चेतना सुधार आंदोलनों के रूप में मुखरित हो उठी, सांस्कृतिक नवजागरण, कला और साहित्य का अभिनव विकास और उन्मेष भी उन सुधार आंदोलनों के माध्यम से ही हुआ''। (हिंदी गद्य साहित्य; पृष्ठ-34)। देश की इसी दशा से प्रेरित होकर साहित्य ने भी अपना रुख बदला। काव्य के लिए खड़ी बोली के प्रयोग का संघर्ष प्रारम्भ हुआ। महावीर प्रसाद द्विवेदी के नेतृत्व में चले इस अभियान ने अपार सफलता हासिल की। मैथिलीशरण गुप्त की प्रबंध रचना ''जयद्रथ-वध'', फिर ''भारत-भारती'', हरिऔध जी का महाकाव्य ''प्रिय-प्रवास'' और इस प्रकार अन्य कई काव्य-कृतियाँ इस दिशा में किए गए प्रयासों का सफलतम प्रमाण बनीं। द्विवेदी युगीन काव्य में आदर्शवादी, नीतिवादी, उपदेशवादी तथा भाव प्रधान प्रवृति को महत्व मिला तो श्रीधर पाठक, रामनरेश त्रिपाठी, मुकुटधर पाण्डेय, माखनलाल जी, गोपाल सिंह जी एवं सियारामशरण जी के काव्य में छायावादी साहित्य की स्वच्छंदतावादी प्रवृत्ति के बीच प्रस्फुटित होने लगे थे। प्रकृति-प्रेम की उत्कट अभिव्यक्ति हुई । द्विवेदी युगीन कविता और छायावादी कविता के बीच की कड़ी बना त्रिपाठी जी का साहित्य। इस प्रकार संक्षिप्त परिवेश परिचय से यह स्पष्ट होता है कि युगीन परिस्थितियों ने कवि एवं साहित्यकार की प्रतिभा को जागृत कर संघर्ष, विद्रोह एवं चेतना से जोड़ा। अतः परिवेश और परिस्थितियों ने साहित्यकार को प्रेरित ही नहीं बाध्य भी किया और अपने साथ-साथ ले चलीं, तो दूसरी तरफ साहित्यकार ने भी परिस्थितियों के स्वरूप परिवर्तन एवं दिशा-निर्धारण में अपनी सक्रिय भूमिका निभाई।

6.3 जीवन-वृत्त एवं व्यक्तित्व

पंडित रामनरेश त्रिपाठी जी का जन्म सिंगरामऊ राज्य (जौनपुर-सुल्तानपुर मार्ग) के कोइरी नामक ग्राम संवत् 1946 अर्थात् 4 मार्च सन् 1889 को हुआ था। इनके पिता का नाम पंडित रामदत्त त्रिपाठी था। धार्मिक वृत्ति के इस परिवार में रामकुमार, रामनाथ एवं रामनरेश नाम के तीन पुत्रों ने जन्म लिया, जिनमें रामनरेश जी सबसे छोटे थे। कृषकों का दारिद्रय और अभावों का दुखमय जीवन उनका व्यक्तिगत अनुभव था। तीनों भाइयों में अपार स्नेह था और तीनों ही अत्यन्त परिश्रमी एवं जुझारू व्यक्ति थे।

रामनरेश त्रिपाठी जी के पिता खेती-बाड़ी तथा नौकरी से जीवन-यापन करते थे। वंशानुगत धर्म-विश्वास तथा मानस प्रेम इन्हें विरासत में मिला। परिवार की आर्थिक दशा अच्छी न थी। एक ही बैल था इसलिए कभी-कभी इनके बड़े भाई दूसरे बैल के स्थान पर स्वयं कंधा लगाते थे। दुःखों के इसी अनुभव-संसार ने उन्हें निर्धनों एवं कृषकों के प्रति दया-भाव सम्पन्न बनाया।

पहले उर्दू पाठशाला में और फिर हिंदी स्कूल में शिक्षा, पत्र-पत्रिकाओं का अध्ययन, स्वतंत्रता सेनानियों के भाषण में रुचि, पत्रिकाओं में तुकबन्दी-लेखन एवं प्रकाशन, नवीं कक्षा के बाद शिक्षा से वंचित होकर भी स्वअध्याय से गुजराती, बंगाली, उर्दू, अंग्रेज़ी तथा संस्कृत आदि भाषाओं में दक्षता हासिल की और आगे चलकर पाठशाला में अध्यापन, उदयराजी नामक कन्या से विवाह, तीन पुत्र तथा तीन कन्याओं की प्राप्ति, अस्वस्थता के कारण राजस्थान प्रस्थान और मारवाड़ी परिवार में बच्चों को पढ़ाना आदि चलता रहा। यहीं ''हिंदी महाभारत'', ''प्रार्थना'',''मारवाड़ी मनोरंजन'' तथा ''कविता-विनोद'' का लेखन किया और सन् 1915 में पुनः प्रयाग लौटे।

इसी प्रकार, प्रमुख नेताओं एवं स्वतंत्रता सेनानियों से मिलना-जुलना, देशभक्ति का जुनून, पिता की मृत्यु, परिवार-पालन एवं साहित्य सेवा का दायित्व निर्वाह करते हुए 1917 में

पहला खंडकाव्य ''मिलन'' छपा। फिर हिंदी साहित्य सम्मेलन के प्रचारमंत्री बने, दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा का कार्यभार संभाला। गांधी जी एवं लाला लाजपतराय के साथ सत्याग्रह में भी भाग लिया, जेल गए और प्रसिद्ध कविता ''अन्वेषण'' लिखी। प्रयाग में हिंदी मंदिर की स्थापना ग्राम गीतों का संग्रह, काश्मीर यात्रा, 1938 में हिन्दुस्तानी कोश लेखन तथा अन्य विधाओं में रूचि जागी। हिन्दुस्तानी अकादमी ने ''पथिक'' को पुरस्कृत किया। उत्तर प्रदेश सरकार ने कविता कौमुदी (पाँच भाग) के लिए पुरस्कार दिया। सुल्तानपुर जेल के निरीक्षक भी रहे। और फिर सन् 1940 के बाद कई पुस्तकें लिखीं।

इस प्रकार त्रिपाठी जी का जीवन एक संघर्षमय, साधारण व्यक्ति का असाधारण जीवन था। शालीन तथा स्वाभिमानी व्यक्तित्व वाले त्रिपाठी पर आदर्शवाद का गहरा प्रभाव था। गांधी जी के सिद्धातों के वे प्रचारक थे। स्वतंत्रता से जूझ रहे भारतीयों की शक्ति एवं जीवटता का बखान करते हुए उन्होंने लिखा था-

सत्य कहने से न रुकती जीभ है,
        कांपते क्यों हो? इसे ही काट लो।
मैं कलम हूँ, एक मेरी जीभ से,
        क्या करोगे जब बढ़ेंगी सैकड़ों।।

गाँव की शान्ति में सादगी का जीवन जीने वाले रामनरेश जी मुँहफट और अक्खड़ थे। खुशामदी उन्हें पसंद न थी। सत्यवादिता उनका मूल मंत्र था। परिश्रम बिना प्राप्त होने वाली कोई भी वस्तु उन्हें स्वीकार्य न थी। प्रकृति से उन्हें अपार प्रेम था। हँसी और व्यंग्य के कारण वे सभी को प्रिय थे। क्रोध और उद्विग्नता उनकी कमज़ोरी थे, किन्तु इसे वे साहित्यिक व्यंग्य के माध्यम से अधिक अभिव्यक्त करते थे। विनय की उदात्त भावना को मुखर करती कवि की यह प्रार्थना द्रष्टव्य है जिसने समग्र भारत ही नहीं, समग्र जगत को भी मंत्र मुग्ध कर दिया है।

हे प्रभो आनंददाता! ज्ञान हमको दीजिए।
शीघ्र सारे दुर्गणों को दूर हमसे कीजिए।
लीजिए हमको शरण में, हम सदाचारी बनें।
ब्रह्मचारी, धर्मरक्षक, वीरव्रत धारी बनें।

12 जनवरी, सन् 1962 को प्रयाग में सरस्वती का हीरक-जयंती महोत्सव था। त्रिपाठी जी अस्वस्थ थे, परन्तु हिंदी जगत से ससम्मान प्राप्त निमंत्रण को नकार न सके। दूसरे ही दिन स्वास्थ्य बिगड़ा और दिल का दौरा पड़ गया। उपचार हुआ किन्तु अन्तः 16 जनवरी, सन् 1962 ई. को प्रातः साढ़े छह बजे उन्होंने अपना पार्थिव शरीर त्याग दिया। साहस, सच्चाई, मित्रता और कर्मठता का दूत चला गया। श्री इंदरराज बैद ने त्रिपाठी जी के समग्र व्यक्तित्व को ध्यान में रखकर ठीक ही कहा है-

''वस्तुतः ग्रह एक ऐसे समर्पित रचनाकार की कहानी है, जिन्होंने लगभग पैंतीस बरसों तक भाषा और साहित्य की अविराम साधना की थी। त्रिपाठी जी बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार थे। वे राष्ट्रीय भावधारा के कवि थे, यथार्थ ग्राही कथाकार थे, सामाजिक चेतना के संदेशवाहक नाटककार थे। बाल साहित्य के तो वे आदि आचार्य ही माने जाने हैं। हिंदी में ग्राम-गीतों का संग्रह उनके सारस्वत अध्यवसाय का जीवन्त प्रमाण है। प्राइमर से लकर शब्दकोशों तक के निर्माण में उन्होंने अपनी असाधारण दक्षता का परिचय दिया था। अपनी शताधिक कृतियों से उन्होंने भारती की पुष्कल अर्चना की। साहित्य की कोई ऐसी विधा नहीं, जिसमें उन्होंने सर्जन न किया हो। वे सचमुच द्विवेदी युगीन साहित्यिक समुदाय की अग्रिम पंक्ति को सुशोभित- गौरवान्वित करने वाले मनीषी साहित्य निर्माता थे।'' (रामनरेश त्रिपाठी; पृष्ठ 20)

6.4 रामनरेश त्रिपाठी का रचना-संसार

बहुमुखी प्रतिभा के समर्थ साहित्य-सृष्टा पंडित रामनरेश त्रिपाठी जी सन् 1912 से सन् 1962 तक 50 वर्ष लगातार लेखन से जुड़े रहे। साहित्य के अनेकानेक अंशों और विधाओं पर साधिकार लिखने वाले त्रिपाठी जी कवि, नाटककार, कहानीकार एवं उपन्यासकार, कोशकार, टीकाकार, आलोचक,सम्पादक, चरित लेखक, व्यंग्य लेखक, बाल साहित्यकार, शिक्षण-साहित्य लेखक, इतिहास लेखक, संग्राहक, सूक्तिकार, वैयाकरण एवं भाषाविद, ज्ञान साहित्यकार, यात्रावृत्तन्तकार, तो थे ही साथ ही संगीत, विज्ञान, अनुवाद, संस्कृति, राजनीति एवं ग्राम जीवन सम्बन्धी लेखन मोर्चों पर भी एकसाथ तैनात रहे। खड़ी बोली को काव्य की भाषा के रूप में सजाने-संवारने वालों में अन्यतम स्थान के अधिकारी त्रिपाठी जी निश्चित ही व्यापक फलक एवं विस्तृत भूमी के साहित्यकार हैं। आधुनिक हिंदी काव्य में डॉ. धीरेन्द्र वर्मा ने लिखा भी है- ''अतः साहित्य के जितने अंगों पर त्रिपाठी जी ने रचना की है, उतने अंगों पर साहित्य के किसी लेखक की लेखनी ने काम नहीं किया। इस क्षेत्र मे त्रिपाठी जी अद्वितीय हैं''। (पृष्ठ-74)

त्रिपाठी जी के इतने व्यापक रचना-संसार को वर्गीकरण के धरातल पर उतारना भी अपने आप में एक चुनौती का कार्य है। यहाँ हम उनके समग्र साहित्य को कुछ भागों में बाँटकर एक संक्षिप्त-रूपरेखा प्रस्तुत कर रहे हैंः

मौलिक साहित्य सृजनः

i) **काव्यः** क) मिलन, पथिक एवं स्वप्न जैसे खंडकाव्य।

ख) कविता-विनोद, आर्य संगीत शतक, मारवाड़ी-मनोरंजन, क्या होमरूल लोगे तथा मानसी आदि मुक्तक काव्य-संग्रह

उपन्यासः वीरांगना, वीरबाला, मारवाड़ी और पिशाचिनी, सुभद्रा तथा लक्ष्मी आदि

चरित लेखनः दमयन्ती चरित, पृथ्वीराज चौहान, पद्मावती, गांधी जी कौन हैं, तीस दिन मालवीय जी के साथ तथा जमनालाल बजाज आदि।

नाटकः जयंन्त, प्रेमलोक, अजनबी, बा और बापू तथा कन्या का तपोवन आदि।

व्यंग्यः स्वप्नों के चित्र तथा दिमागी ऐय्याशी आदि।

ii) **बाल-साहित्यः** काव्यः बालक सुधार शिक्षा, मोहन भोग, खोजो खोज निकालो, मोतीचूर के लड्डू तथा वानर-संगीत आदि।

गद्यः महात्मा बुद्ध, अशोक, चंदशेखर, हरिश्चन्द्र, चुड़ैल रानी तथा चटक-मटक की गाड़ी आदि

चित्रात्मक रचनाएँः गुपचुप कहानियाँ और कहानी के आदि

शिक्षा रचनाएँः गाँधी ताश जवाहर पत्ता, हिंदी प्राइमरी, हिंदी ज्ञानोदय तथा कन्या बोधिनी आदि।

साहित्य-इतिहासः हिंदी का संक्षिप्त इतिहास और उर्दू जुबान का संक्षिप्त इतिहास आदि।

समालोचनाः तुलसीदास और उनकी कविता तथा तुलसी और उनका काव्य आदि।

टीकाएँ : भूषण ग्रंथावली, अयोध्या काण्ड, श्रीरामचरित मानस, जानकी मंगल, सुदामाचरित तथा शिवा-बावनी आदि।

संपादनः कविता-कौमुदी (छह खंड), सूरदास की विनय पत्रिका, रहीम तथा सुकवि कौमुदी आदि।

पत्रिका-संपादनः कवि-कौमुदी, बानर तथा उद्योग आदि।

संग्रहः नीति शिक्षावली, नीति के श्लोक, नीति रत्नावली तथा मानस की सूक्तियाँ आदि।

भाषा एवं कोशः हिंदी पद्य रचना, हिंदी शब्द कल्पद्रुम, हिंदी-हिन्दुस्तानी, हिन्दुस्तानी कोश तथा हिंदी मुहावरे आदि।

यात्रा-वृत्त साहित्यः उत्तरी ध्रुव की भयानक यात्रा।

संगीतः अभिनव-संगीत।

राजनीतिः देश का दुःखी अंग।

संस्कृतिः हिंदी महाभारत तथा मानस के पाँच पात्र आदि।

विज्ञानः आकाश की बातें, योग के आसन आदि।

अनुवादः इतना जो जानो, कौन जाग रहा है आदि।

लोक साहित्यः मारवाड़ के मनोहर गीत, घाघ और भड्डरी तथा हमारा ग्राम साहित्य (तीन भाग) आदि।

आचरण -संबंधीः अंग्रेज़ी शिष्टाचार

ग्राम-जीवनः किसानों के काम की बातें, मिट्टी के सुखदायक घर और नमूने का गाँव आदि।

इन सभी में त्रिपाठी जी का सर्वाधिक मुखर एवं उभरा हुआ रूप कवि रूप ही है। इस इकाई का मूल विषय भी कवि रामनरेश त्रिपाठी का अध्ययन करना है। अतः त्रिपाठी जी के काव्य के मूल स्वरों का मूल्यांकन करेंगे। यों त्रिपाठी जी का ब्रजभाषा पर भी पर्याप्त अधिकार था, किन्तु भाव और भाषा का सरल, सहज एवं जो प्राञ्जल रूप उनके खड़ी बोली काव्य में मिलता है वह युग की आवश्यकता के अनुरूप ही था। काव्य के माध्यम से जन-जन को जगाने तथा हृदय में उत्साह का संचार करने वाले त्रिपाठी जी ने लोकमंगल, समाज सुधार और राष्ट्रोद्धार का जो बीड़ा उठाया, उसमें पूर्णतः सफलता हासिल की। सामाजिक नव-उद्‌बोधन के इस कवि ने काव्य के सृजनात्मक धरातल पर मानवतावादी भूमिका निभाई। डॉ. कृष्णदत्त पालीवाल ने लिखा भी है- ''नवयुग की चेतना से उनके काव्य ओत-प्रोत हैं। उनमें प्रातः काल की अरूणाभ एवं वसंत की ''सौरभ'' श्लथ मादकता एवं मोहकता है। कवि ने प्राचीन घिसी-पिटी रूढ़ि परम्परा का अनुसरण नहीं किया है। उसने पौराणिक या ऐतिहासिक कथानकों को न अपनाकर, मौलिक नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा के द्वारा काल्पनिक कथानक की सृष्टि की। खंड काव्य में प्राचीन शास्त्रीय नियमों की संकुचित परिधि का प्रथम बार उल्लघंन किया गया, इस दिशा में आपने मार्ग निर्देशन का कार्य किया है। इस दृष्टि से त्रिपाठी जी खंड काव्य के क्षेत्र में एक नवीन परम्परा का प्रवर्त्तन करते हैं। मौलिक कथानक के अंतराल में विशद् एवं गहन भावों को संवार कर सजा देने में उन्हें अद्‌भुत सफलता मिली है। वे इस क्षेत्र में अकेले हैं।'' (पं. रामनरेश त्रिपाठी का काव्य पृष्ठ 70)।

ईश्वर मातृभूमि एवं मानव की आराधना में अगाध विश्वास रखने वाले त्रिपाठी जी जितने श्रद्धालु-देशभक्त हैं, प्रकृति की सुन्दरता से भी उतने ही अभिभूत हैं। ''बालक-विनय'' कविता में मातृभूमि के दुख दर्द दूर करने का दर्द देखिए-

i) मन में देशभक्त बनने की उठी अटल अभिलाषा है,
सफल मनोरथ करो दयामय, हमें तुम्हारी आशा है।

ii) ईश्वर भक्ति-लोक सेवा है एक अर्थ दो नाम।
वन में बस कैसे हो सकता है, मनुजोचित काम।
पृथ्वी पर सुख-शांति बढ़ाना देकर निज श्रम शक्ति
मनुष्यता का अर्थ यही है और यही हरि-भक्ति।

एक तरफ वे राष्ट्र को ही भगवान तथा राष्ट्र सेवा को ही सबसे बड़ा धर्म मानकर देश एवं देशवासियों के लिए प्राणोत्सर्ग करने में ही मोक्ष का अनुभव करते हैं तो दूसरी तरफ विश्व-बंधुत्व और प्रेम की उदात्तता में ही अपनी समस्त श्रद्धा का वचन दोहराते हैं। डॉ. राममूर्ति शर्मा ने लिखा भी है- ''उन्होंने मानव जीवन की मूल एवं सशक्त प्रवृति प्रेम को भी अत्यन्त उदात्त रूप प्रदान किया है। उनका प्रेम व्यक्ति के संकुचित घेरे से निकलकर समस्त विश्व को अपनी बांहों में समेटे हुए है। उनके प्रेमी विरह में आँसू बहाकर समस्त संसार को डूबोने की अपेक्षा, विरह के दुःख से सन्धि कर जन तथा राष्ट्र के कल्याण में जुट जाते हैं। राष्ट्रीय भावना उनके साहित्य का प्रमुख स्वर है, परन्तु वह संकीर्ण विचारों से आक्रान्त नहीं है, उसमें औदात्य है। उनका प्रकृति चित्रण भी अनेकबन्धी एवं मौलिक है। यह छायावादी प्रकृति-वैभव के लिए आवश्यक पृष्ठभूमि भी प्रस्तुत करता है। उनकी प्रकृति संघर्ष से ऊबे व्यक्ति के लिए मुँह छिपाने की आश्रयस्थली न होकर मानव को कर्मरत होने की प्रेरणा प्रदान करती है। यह केवल त्रिपाठी जी के प्रकृति-चित्रण की ही विशेषता है।'' (रामनरेश त्रिपाठी और उनका साहित्य; पृष्ठ 353)

त्रिपाठी जी के काव्य में मिलने वाली इन सभी विशेषताओं पर अलग से हम आगे चलकर विचार करेंगे। यहाँ संक्षेप में उनके प्रबंध एवं मुक्तक काव्य का स्वरूपगत परिचय प्राप्त कर लेना उचित होगा।

सर्वप्रथम हम त्रिपाठी जी के प्रबंध (खंड) काव्यों का परिचयात्मक स्वरूप देखते हैं। कवि ने तीन प्रबंध काव्यों की रचना की- मिलन (1917), पथिक (1920) तथा स्वप्न (1928)। तीनों खंड काव्यों का प्रणयन कवि ने राष्ट्रीय पृष्ठभूमि पर ही किया है। कवि की मौलिक कल्पना से इनके कथानकों की उद्भावना हुई तथा स्वच्छन्द- प्रवृत्ति ने उन्हें सुसज्जित किया। हिंदी साहित्य के इतिहास में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल लिखते भी हैं- ''मिलन, पथिक और स्वप्न नामक इनके तीनों खंड काव्यों में इनकी कल्पना ऐसे मर्म-पथ पर चली है, जिस पर मनुष्य मात्र का हृदय स्वभावतः ढलता आया है। ऐतिहासिक और पौराणिक कथाओं के भीतर न बंधकर अपनी भावना के अनुकूल स्वच्छंद संचरण के लिए कवि ने नूतन कथाओं की उद्भावना की है।''

''मिलन'' काल्पनिक कथानक पर लिखा गया प्रेम एवं राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत खंड काव्य है। इसकी लोकप्रियता का कारण भी उस समाज के पाठक वर्ग का इन भावनाओं के प्रति आंतरिक झुकाव है। पाँच सर्गों में विभक्त इस काव्य में भाषा की सरलता और सहजता इसके सौंदर्य में श्रीवृद्धि करती है।

''पथिक'' पाँच सर्गों में विभक्त एक सुंदर खंड काव्य है, जिसमें कर्मवाद, देश के और समाज के प्रति प्रतिबद्धता एवं कर्तव्य, भावना, त्याग तथा बलिदान की महत्ता का काव्यात्मक संदेश दिया गया है। त्रिपाठी जी का गांधीवाद के प्रति झुकाव भी यहाँ परिलक्षित होता है। कवि ने रामेश्वरम की यात्रा के फलस्वरूप मन में उत्पन्न प्रकृति सौंदर्य की अद्भुत छटाएँ यहाँ अंकित की हैं।

''स्वप्न'' पाँच सर्गों में लिखा गया खंड काव्य त्रिपाठी जी की का मीर-यात्रा का परिणाम है। इसमें देश के दुख-दैन्य से चिंतित नायक की पीड़ा भी है तो नायिका के शौर्य और त्याग की गाथा भी चित्रित है। नारी यहाँ पति की कर्त्तव्य-विमुखता पर जागृति का मूल मंत्र फूंकती है और देश की आन-रक्षा के पथ पर बलि होने की प्रेरणा देती है।

इस प्रकार तीनों ही प्रबंध रचनाओं में कवि स्वदेश की स्वतंत्रा प्राप्ति और उसकी रक्षा के लिए जूझने वाले वीर युवकों और वीरांगनाओं के प्रेरणादायी चरित्र उजागर करता है। रुचिकर, मौलिक तथा कल्पना-प्रसूत आख्यान मानवीय आदर्शों को समेटकर मर्म तक उतर जाते हैं। पात्रों का जमघट नहीं और उनका जीवन-यात्रा में प्रेम-पथ पर अग्रसर होना अत्यंत मनोवैज्ञानिक है। युवावस्था के प्रेममय स्वप्न तथा राष्ट्रीय हीन दशा जनित सेवा का अदम्य उत्साह-त्रिपाठी जी के नायकों का प्रमुख गुण है। नायिकाओं के चरित्र भी कम महत्वपूर्ण नहीं। देश-प्रेम का तूफान उनके भी हृदय में उठता है और वह घर बैठे पति की कायरता को ललकारती हुई उसे जागृति प्रदान करती है। ''स्वप्न'' की नायिका ''सुमना'' अपने पति से कहती है-

तुम हो वीर पिता माता के
वीर पुत्र मेरे जीवन-धन
तुम से आशायें कितनी हैं
जन्म भूमि को हे अरिमर्दन।

इसी प्रकार, ''पथिक'' में भी कवि देश के परतंत्र और परमुखापेक्षी लोगों को प्रताड़ित करते हुए पूछता है-

मस्तक ऊँचा हुआ तुम्हारा कभी जाति-गौरव से?
अगर नही तो देह तुम्हारी तुच्छ अधम है भाव से।

पथिक का तो नायक ही गांधी जी की प्रतिच्छवि बन जाता है। ''साथ न दो नृप का कोई उसके अधर्म शासन में'' कहकर कवि अहिंसा, क्षमा और असहयोग की बात को बल देता है। कवि इसीलिए कहता भी है-

हुए स्वतंत्र सुसभ्य सच्चारित सच्चे देश निवासी।
घर-घर में सुख शांति छा गई रही कहीं न उदासी।
एक शुद्ध सच्चे प्रेमी ने आत्म-शक्ति-साधन से।
मुक्त कर दिया एक देश को नरक तुल्य शासन से।

''उत्साह'' भाव का सुंदर प्रस्तुतिकरण ''मिलन'' काव्य के उस कथन में देखा जा सकता है, जहाँ नायक-नायिका देश की विफलता पर आँसू नहीं बहाते। उसे दूर करने के लिए उत्साह संजोते हैं-

देखा उसने उसी भांति के अगणित नर-कंकाल
चिपके पेट रीढ़ से जिनके चुपके पुचके गाल
विजया ने प्रण किया सुदृढ़ होकर प्रयत्न भरपूर
तन-मन से इस दीन दशा का कष्ट करूँगी दूर।

इस प्रकार ''ईश्वर का प्रतिबिम्ब प्रेम है, प्रेम हृदय आलोक'' कहने वाले त्रिपाठी जी आदर्श प्रेम की स्थापना भी करते हैं तो- ''लोहू गर्म हुआ वीरों का, फड़क उठे जब अंग। नशा वीरता का चढ़ आया देख रक्त का रंग'' जैसी उक्तियों से युवा-मन को फड़कने पर मज़बूर भी करते हैं। अतः कह सकते हैं कि त्रिपाठी जी ने अपने खंड काव्यों के माध्यम

से एक स्वतंत्र पथ तथा नई दिशा का निर्माण किया। निश्चित ही वे राष्ट्रीय-जागरणकारों के अग्रदूत कहे जा सकते हैं।

त्रिपाठी जी की काव्य यात्रा का श्रीगणेश सन् 1911 में लिखी गई सात कविताओं वाली लघु-पुस्तिका ''बालक-सुधार-शिक्षा'' से माना जाता है। बालकों के लिए ईश्वर-भक्ति, देश-प्रेम, माता-पिता की सेवा, त्याग, बलिदान तथा समय का सदुपयोग आदि विषयों पर कवि शिक्षक बनकर भावभिव्यक्ति करता है। यहीं से इनके मुक्तक काव्य लेखन का भी प्रारंभ हुआ। इसके बाद ''मारवाड़ी मनोरंजन'' जिसमें दस स्फुट कविताएं हैं, ''मारवाड़ का प्रभात'', ''शरद-वर्णन'' आदि में प्रकृति का सुंदर चित्रण किया गया है। ''ऊष्ट्राष्टक'' रेगिस्तान के जहाज ऊँट पर लिखे गए आठ छंदों का संग्रह है। कवि की ''भयंकर-विवाह'' नामक कविता अनमेल-विवाह के विषय को बखूबी बखान करती है। सन् 1914 में कवि ने ''कविता-विनोद'' संग्रह दिया और जग प्रसिद्ध प्रार्थना ''ईश्वर-वंदना'' भी इसी में संकलित है। त्रिपाठी जी मुक्तकों के माध्यम से समाज में व्याप्त अंध-विश्वासों, रूढ़ियों, कुरीतियों और जीर्ण-शीर्ण मान्यताओं पर प्रहार भी करते हैं तो बालकों-युवकों में देश-प्रेम, सदाचार तथा अनुशासन का भाव भी जाग्रत करते हैं। वे सच्चे मार्गदर्शन एवं दत्त-चित्त समाज सुधारक की भूमिका निभाते हुए दीन-दुखियों, अबल-असहायों के प्रति सहानुभूति भी व्यक्त करते है -

> ना मन्दिर में, ना मस्जिद में, ना गिरजे के आसपास में,
> ना पर्वत पर, ना नदियों में, ना घर बैठे, ना प्रवास में,
> ना कुंजों में, ना उपवन के शांति- भवन या सुख-निवास में,
> ना गाने में, ना बाने में, ना आँसू में, नहीं हास में,
> ना छंदों में, ना प्रबंध में, अलंकार ना अनुप्रास में,
> खोज ले कोई राम मिलेंगे दीन जनों की भूख प्यास में।

इसी प्रकार त्रिपाठी जी ने अन्य चर्चित मुक्त रचनाओं ''आर्य संगीत शतक'' (1912 ई.), ''क्या होमरूल लोगे'' (1918 ई.) तथा ''मानसी'' (1927 ई.) में भी जीवन की छोटी-बड़ी अनुभूतियों को अत्यंत भाव-प्रवणता से चित्रित किया गया है। वह देश कौन सा है, मातृभूमि की जय, महापुरुष, स्वतंत्रता का दीपक तथा स्वदेश गीता आदि रचनाओं में राष्ट्रीयता प्रधान है तो प्रार्थना, अन्वेषण, चमत्कार, राम कहाँ मिलेंगे, परलोक, जागरण, संसार-दर्पण तथा श्याम की शोभा आदि में आध्यात्म प्रधान है। चन्द्र, पुष्प-विकास, प्राकृतिक सौन्दर्य तथा स्वप्न में तैर रहा है जैसी रचनाओं में प्रकृति की मनोरम छटा है तो उदारता, नीति के दोहे, मित्र महत्ता, पुस्तक-महत्ता, पुस्तक, मनुष्य-पशु आदि में नीति-दर्शन प्रधान है। इसी प्रकार का मीर, नया नखशिख तथा हैट के गुण आदि में व्यंग्य प्रधान है। ब्रिटिश सरकार पर किए गए व्यंग्य देखिए कितने जीवंत हैं-

i) ''डिनर'' ''लंच'' ''टी'' तीन हैं, राजा के हथियार
चतुर-चतुर बच के गये, घायल हुए गंवार।

x x x x

ii) दृग को, दिमाग को, ललाट को, श्रवण को भी
धूप से बचाती, अति सुख पहुँचाती है।

सिर पर है हैट रख चाहे जो अनर्थ करो,
हैट यह ईश्वर की दृष्टि से बचाती है।

अतः स्पष्ट है कि त्रिपाठी जी का जीवन ही कवितामय था। कविता सदैव उनके जीवन की प्रेरणा रही है और इसी सी उन्होंने जीवंतता तथा उदात्तता का मार्ग प्रशस्त किया। यही उनके साहस और शक्ति का कारण बनी तथा इसी ने उन्हें ''जीवन की आग'' में जलना और निरंतर आगे बढ़ना सिखाया। त्रिपाठी जी की इस काव्य- सृष्टि की प्रमुख - विशिष्टताओं को ही अब हम देखेंगे।

बोध प्रश्न-1

1. कवि रामनरेश त्रिपाठी के सांस्कृतिक एवं साहित्यिक युगीन-परिवेश पर सात आठ पंक्तियाँ लिखिए।

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

2. रामनरेश त्रिपाठी की बहुमुखी प्रतिभा का काव्य से इतर किन-किन विधाओं में परिचय मिलता है। तीन पंक्तियों में लिखिए।

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

3. त्रिपाठी जी की प्रमुख प्रबंध-कृतियों के नाम एवं रचना वर्ष लिखिए।

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

4. रामनरेश त्रिपाठी जी के व्यक्तित्व की तीन प्रमुख विशेषताओं का परिचय पाँच पंक्तियों में दीजिए।

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

अभ्यास -1

1. त्रिपाठी जी द्वारा विरचित ''ना मंदिर में, ना मस्जिद में, ना गिरजे................................ ....''कविता का अंश आपकी इसी इकाई के भाग 6.4 में उद्धत है। इस अंश का भावार्थ लगभग आठ पंक्तियों में लिखिए।

....

....

....

....

6.5 काव्य सौंदर्यः प्रमुख स्वर

सत्याग्रह पथ के अथक यात्री तथा राष्ट्रीय आन्दोलनों के सक्रिय कार्यकत्ता रामनरेश त्रिपाठी का काव्य क्षेत्र जितना विशाल है, उसकी प्रवृति उतनी ही मूल्यवान भी। त्याग और बलिदान के पथ पर लोगों को अग्रसर करने के लिए पथ-प्रदर्शक एवं उद्बोधक गीत गाकर जागरण का शंख फूंकने का जो उदात्त कार्य त्रिपाठी जी ने किया, वह हम सभी भारतीयों के लिए वरदान सिद्ध हुआ। अज्ञान, रूढ़िवाद, दासत्व और नैराश्य के व्यामोह में भटकी जनता में काव्य- माधुरी से नूतन प्राण संचरित करने वाली इस महाशक्ति ने विदेशियों के अनीति एवं अत्याचारपूर्ण शासन में झुलसती जन-सामान्य की चीत्कारों को ही वेदना की वाणी नहीं दी, स्वतंत्र एवं समृद्ध भारत की आत्मविश्वासकारी छवि को भी निखारा-संवारा। सत्य, निष्ठा, अहिंसा और प्रेम के गांधीवादी आदर्श उन्हें साम्प्रदायिक सद्भाव की प्रेरणा के लिए उत्साहित कर रहे थे-

> है एक ही सबका पिता, अल्लाह ही भगवान है,
> नाम ही का भेद है, वह राम ही रहमान है।

स्वाधीनता के इस सिपाही ने भारत की मुक्ति को विश्व मानवता की मुक्ति बनाकर मंगल कामना एवं उदात्त दृष्टि का प्रचार किया। काव्य माला में संघर्ष, बलिदान एवं त्याग की प्रेरणा के पुष्प पिरोकर कवि ने स्वतंत्रता का गलहार बनाया। अहिंसक क्रांन्ति की चेतना से जागरण का बीज बोया। आज़ादी से पहले का भारत और पूरे विश्व को सभ्यता एवं आचरण की सीख देने वाली जनता का निरंतर हो रहा पतन कवि को सालता है और वह उसे प्रताड़ित भी करता है-

> शान्ति, शिक्षा, शीलता, शालीनता,
> खो चुके तुम शूरता स्वाधीनता,
> जो निरूधम है भला वह क्या जिया?
> हाय तुमने जन्म लेकर क्या किया?

यह फटकार लगाने वाला महाकवि सन् 1920 में भावी स्वतंत्रता के पूर्व-दर्शन कर लेता है-

> शासन का सब भार लिया जनता ने अपने कर में,
> परम हर्ष, आनन्द, मोद, सुख व्याप्त हुआ घर-घर में।

इस प्रकार पूरी कविता सृष्टि में राष्ट्रीय भावना, सामाजिक चेतना, उदात्त प्रेम, स्पंदित प्रकृति, इतिहास एवं सांस्कृतिक चेतना तथा लोक साहित्य की मार्मिक अभिव्यक्ति आदि कई पक्षों को उकेरा गया है। यहाँ हम काव्य के इन्हीं पक्षों की सौन्दर्यानुभूति का दर्शन करेंगे।

6.5.1 राष्ट्रीय-भावना का प्रसार

त्रिपाठी जी के काव्य में राष्ट्रीय भावना के विविध परिपार्श्व दिखाई देते हैं जिनमें देशभक्ति, देशप्रेम, राष्ट्रीय जागरण, जन उद्‌बोधन, नारी जागृति, देश के निर्माता एवं स्वतंत्रता सेनानियों के प्रति सम्मान, विदेशी शासन की आलोचना तथा सांस्कृतिक गौरव का मुखर गान आदि के सहज दर्शन किए जा सकते हैं। राष्ट्रीयता की उत्ताल तरंगों से तरंगायित ह्रदय के इस महाकवि ने मिलन, पथिक, स्वप्न या फिर मुक्तकों में भी विदेशी शासन का डटकर विरोध करते हुए सहज रहने का मूल मंत्र दिया-

> जिस पर गिर कर उदर दरी से तुमने जन्म लिया है
> जिसका खाकर अन्न सुधा-सम नीर-समीर पिया है
> वह स्नेह की मूर्ति दयामयी माता-तुल्य मही है
> उसके प्रति कर्त्तव्य तुम्हारा क्या कुछ शेष नहीं है।

त्रिपाठी जी के देश प्रेम में प्राकृतिक सौन्दर्य का उल्लास भी है तथा उच्च विचार और जन-सामान्य की बहुमुखी समृद्धि की मंगल भावना भी निहित है। उनकी राष्ट्र भावना में उन्मुक्त ह्रदय की वह पवित्र अभिव्यक्ति है जिसमें देश की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक हलचल का सक्रिय स्वरूप साकार हुआ है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा भी है- ''स्वदेश-भक्ति की जो भावना भारतेन्दु के समय से चली आती थी उसे कल्पना द्वारा रमणीय एवं आकर्षक रूप त्रिपाठी जी ने ही प्रदान किया। त्रिपाठी जी के तीनों काव्य देश भक्ति के भाव से प्रेरित है। देश भक्ति का यह भाव उनके कई पात्रों को जीवन के कई क्षेत्रों में सौन्दर्य प्रदान करता दिखाई पड़ता है- कर्म के क्षेत्र में, प्रेम के क्षेत्र में भी। वे पात्र कई तरफ से देखने में सुन्दर लगते हैं। देश भक्ति का रसात्मक रूप त्रिपाठी द्वारा प्राप्त हुआ इसमें सन्देह नहीं!'' (हिंदी साहित्य का इतिहास; पृष्ठ 407)

त्रिपाठी जी राष्ट्रीय कविता के क्षेत्र में भविष्य-दृष्टा एवं स्रष्टा कवि माने जाते हैं। ''मिलन'' एवं ''पथिक'' में वे स्वतंत्रता का स्वप्न ही देखते रहे हैं। मातृभूमि पर शीश चढ़ाना कवि को सौभाग्य जान पड़ता है-

कवि ने भावी निर्माण के लिए एक तरफ तो अतीत के गौरव गान गाकर सुप्त क्रांति को जगाया तो दूसरी तरफ तत्कालीन दुर्दशा और अभावों का पर्दाफाश करते हुए जागृति का उद्‌घोष किया। शरीर एवं बुद्धि का ही नहीं, विचार एवं विवेक का परिष्कार तथा संवर्द्धन करने की प्रेरणा दी। कभी वे-''हम तो कदम मिलाए उस राह पर चलेंगे, बापू ने जो बताई सुख शान्ति की डगर है'' कहते हुए देश निर्माण की त्यागमयी राह चुनते हैं तो कभी भारतीय युवकों को ललकारते हुए स्वतंत्रता प्राप्ति की गूंज पैदा करते हैं-

> सब को स्वतंत्र कर दे यह संगठन हमारा,
> छूटे स्वदेश की ही सेवा में तन हमारा।
> हम प्राण होम देंगे, हँसते हुए जलेंगे,
> हर एक सांस पर हम आगे बढ़े चलेंगे।
> जब तक पहुँच न लेंगे तब तक न सांस लेंगे
> वह लक्ष्य सामने है पीछे नहीं टलेंगे।

त्रिपाठी जी की राष्ट्रीय चेतना पर विचार करते हुए डॉ. अनिल उपाध्याय ने ''रामनरेश त्रिपाठी के साहित्य में राष्ट्रीय भावना'' शीर्षक वाले अप्रकाशित शोध प्रबंध में लिखा है- ''उनकी राष्ट्रीयता का मूल रूप देशवासियों को उद्‌बोधित करने में दिखाई देता है, जिसके अंतर्गत उन्होंने भारतीयों को परतंत्रता जन्य दारूण दुख'' को दूर करने के लिए प्रेरित किया है। इस दृष्टि से उन्होंने वाणी और साहित्य, दोनों का सहारा लिया और जेल भी गए। अपने समकालीन अनेक कवियों की तुलना में उन्होंने भारतीय राष्ट्रीय धारा को

देशव्यापी बनाने में विशेष महत्वपूर्ण कार्य किया और युवकों तथा युवतियों को इस कार्य के लिए तैयार किया।'' (पृष्ठ 318)।

इस प्रकार त्रिपाठी जी ने राष्ट्रीय भावना के प्रचार-प्रसार में ही अपने को पूर्णतः समर्पित कर दिया। शिक्षा-दीक्षा द्वारा, भारतीयता का भावना द्वारा, अधिकार की जागृति द्वारा, शोषण के खिलाफ पैदा की गई गूंज द्वारा, भ्रष्ट एवं दुराचारी नीतियों पर किए गए व्यंग्य द्वारा, सामाजिक, राजनैतिक एवं आर्थिक असंतुलन पर किए गए प्रहारों द्वारा कवि अपना दायित्व निभाता रहा। ऐसे कवि की राष्ट्रीय शक्ति एवं उद्दाम चेतना को उन्हीं के शब्दों में दोहराया जा सकता है-

जिनके नस नस में विद्युत थी,
आंखो में था क्रोध प्रज्वलित।
छाती में उत्साह भरा था,
वाणी में था प्राण प्रवाहित
मातृभूमि के लिए हृदय में
जिनमें भरी शक्ति थी अविरल।
ग्राम-ग्राम से निकल निकल कर,
ऐसे युवक चले दल के दल।

6.5.2 सामाजिक चेतना एवं सुधार दृष्टि

त्रिपाठी जी के युग में सामाजिक परिवेश अत्यन्त अधोमुख एवं असंतोषजनक था। निर्धनता, अभावग्रस्तता, बेरोज़गारी, मशीनी-त्रास, अनमेल विवाह, बाल-विवाह, छूआछूत, भेदभाव, दहेज प्रथा, ईर्ष्या एवं द्वेष तथा स्वार्थ-साधना आदि से नैतिक पतन हो रहा था। ज़मीदार कृषकों का खून चूस रहा थे। अशिक्षा ने लोगों को भटकाव की ओर धकेल दिया था। ऐसे भयावह एवं घातक वातावरण में राजा राममोहन राय ने सुधार की जो उल्लेखनीय भूमिका निभाई वही भूमिका साहित्य के माध्यम से निभाने वाले सृजकों में रामनरेश त्रिपाठी भी थे। समाज-उन्नति का स्वप्न वे सदैव देखते रहे। वे सामाजिक कुरीतियों का विद्रोह करके समाज को एक उज्वल पथ की ओर उन्मुख करते रहे। अनमेल विवाह पर विचार व्यक्त करते हुए कविता-कौमुदी में उन्होंने लिखा भी है- ''जैसे अजगर चल फिर नहीं सकता वैसे ही वृद्ध भी। जैसे अजगर अपने शिकार को निगल जाता है वैसे ही वृद्ध पति बेचारी अबोध कन्या को निगल जायेगा।''(पाँचवा भाग; पृष्ठ 229) राष्ट्र की छोटी-छोटी सामाजिक बुराइयों को त्रिपाठी जी ने समय-समय पर आड़े हाथों लिया-

इस जाति पाति की दूत ने प्रतिभापन यश हर लिया,
हम सब को अन्धी भेड़ कर अन्ध कूप में भर दिया।

भारतेन्दु काव्य में यही चेतना मुखर और द्विवेदी युग में आकर प्रसार पाने लगी। कवि ने ''उठो और आलस को त्यागो अपनी दशा सुधारो, तेजहीन निर्बल समाज में फिर नव जीवन डारो'' कहकर आलसी एवं निष्क्रिय लोगों को प्रेरित किया। तत्कालीन कृत्रिमता पर निडरता से प्रहार किया। कृत्रिमता से बढ़ रहे दंभ, पाखंड और अधर्म को चुनौती दी। हम अपने हीन भावों के कारण ही गुलाम हैं और यही कारण है कि चंद लोग हम पर राज कर रहे हैं। कवि इस तथ्य को ''भूल गए अपने बड़प्पन की याद, हम मुट्ठी भर मानवों की मुट्ठी में समाए हैं'' कहकर जन-जन को जगाता है। हिन्दू-मुसलमान तथा इसाई में एकता स्थापित करने के लिए वे प्रयत्न-रत दिखाई देते हैं'-

तू ज्ञान हिन्दुओं में ईमान मुस्लिमों में
तू प्रेम क्रिश्चियन में है सत्य तू सुजन में।

सामाजिक दुख, अभाव, निर्धनता और बेबसी भी उन्हें विकल कर देती थी। वे करोड़ों दुखियों का यथार्थ चित्रण करते हुए कहते हैं-

अन्न नहीं है, वस्त्र नहीं है, रहने का न ठिकाना,
कोई नहीं किसी का साथी अपना और बेगाना।

चारों ओर मची त्राहि-त्राहि और व्याकुल नर-नारी कवि को जनजीवन की बुराइयों से लड़ने-जूझने के लिए बाधित करते हैं। त्रिपाठी जी किसानों की दुर्दशा देखकर भी अत्यंत खिन्न हैं। अंग्रेज़ी शासन-व्यवस्था के कारण पीड़ित कृषक का दुख देखिए-

चिंतित हैं आश्चर्य चकित हैं, कृषक विकल हैं दुख से,
कौन काढ़ लेता है उनका, कौर अचानक मुख से।

''जगत के जीवन-प्राण किसान'' को त्रिपाठी जी आत्मविश्वास का मंत्र देते हैं और क्रान्ति से स्वप्न बांटते हैं-

अब तुम उठो संभालों अपना, गुण गौरव, सम्मान
दूर करो अविवेकी जग का, यह मिथ्या अभिमान।

इसी प्रकार श्रमिक, मज़दूर, नौकरी पेशा आदि सभी लोगों की व्यथा पीड़ा को कवि ने देखा और महसूस किया। राजा-प्रजा तथा पूँजीपति-गरीब का यह असंतुलित-समीकरण त्रिपाठी जी को हमेशा बेचैन किए रहा। राजा के अत्याचार तथा प्रजा की दर्दनाक दशा, शोषण के षडयंत्र और अपराध के अत्याचार सभी ने कवि को वाणी दी-

शासक दल असहाय प्रजा को, घोर कष्ट देता है।
रक्षक से भक्षक बनता है, और सरबस हर लेता है।

इसी प्रकार ज़मींदार, पूँजीपति राजा, शोषक तथा प्रशासनिक अधिकारियों के अन्याय अत्याचार भी कवि की लेखनी को स्वर देते हैं। सामाजिक, आचरणहीनता, मानवीय गुणों का ह्रास, स्वार्थ लिप्सा, विकृत-सभ्यता तथा स्तर-भेद आदि कितने ही सामाजिक रोग हैं, जिन्हें त्रिपाठी जी निडरता एवं निर्भयता से अपनी लोह-लेखनी का शिकार बना कर प्रताड़ित करते रहे। वे इन समस्त अवगुणों को कटु-शब्दों में ललकारते रहे। कवि की इस समाज-सुधारवादी दृष्टि से ही उनके राष्ट्र प्रेम एवं मानवीय दायित्व का भी पता चलता है।

6.5.3 प्रेमानुभूति की उदात्तता

रामनरेश त्रिपाठी जी स्वच्छन्द काव्य धारा के उन प्रमुख कवियों में हैं जिन्होंने प्रेम को ईश्वरीय वरदान के रूप में चित्रित करने का सफल प्रयास किया। त्रिपाठी जी के युग में प्रसाद जी की ''प्रेम पथिक'' एवं ''आँसू'' तथा पंत जी की ''ग्रंथि'' आदि रचनाएँ भी प्रेम विषयक उदात्तता को स्थापित कर रही थी। इसी परिवेश को समृद्ध करते हुए त्रिपाठी जी ने भी ''मिलन'', ''पथिक'' और ''स्वप्न'' जैसी कृतियों के माध्यम से प्रेमाख्यानक काव्य परंपरा को आगे बढ़ाया। प्रेम को जीवन का आदर्श बिन्दु तथा मानव की जीवनाकांक्षा की वरदायिनी शक्ति मानने वाले त्रिपाठी जी ने इसे सौंदर्य का कुंज तथा सक्रियता का स्त्रोत बनाकर प्रस्तुत किया। जीवन को गति देने वाले इस परम तत्व की महत्ता को कवि रूपायित करते हुए कहता है-

गंध-विहीन फूल है जैसे चन्द्र चन्द्रिका हीन।
यों ही फीका है मनुष्य का जीवन प्रेम-विहीन।
प्रेम स्वर्ग है स्वर्ग प्रेम है प्रेम अशंक अशोक।
ईश्वर का प्रतिबिम्ब प्रेम में प्रेम हृदय आलोक।।

त्रिपाठी जी सच्चे प्रेम के पक्षधर थे। भेदभाव, ऊँच-नीच तथा स्तरीय अंतर का प्रेम-लोक में कोई स्थान नहीं है। उनका प्रेम अभिन्न व्यापक एवं विस्तृत दुनिया का प्रेम है। ''अति सूधों सनेह को मारग है'' की विरासत तथा आत्मबलि एवं त्याग जिसमें विरह ही काम्य

है, मिलन नहीं। यही कवि के लक्ष्य हैं। मिलन तो प्रेम का अंत है। जबकि प्रेम तो अनन्त यात्रा है-

मिलन अन्त है मधुर प्रेम का
और विरह जीवन है।
विरह प्रेम की जागृति गति है,
और सुषुप्ति मिलन है।।

त्रिपाठी जी का प्रेम नायक-नायिका को समाज और राष्ट्र से जोड़ता है। करुणा और आत्मीयता से समृद्ध करता है। देशभक्ति के संघर्ष को प्रेरणा देता है। शारीरिक सौंदर्य के प्रति सहज-स्वीकार्य भाव लेकर चलने वाला प्रेम ही ''मिलन'' में धीरे-धीरे उदात्तता की ओर उन्मुख हो जाता है। कवि ''प्रेम विचित्र वस्तु है जग में, अद्‌भुत शक्ति निधान'' कहकर उसकी प्रभावशीलता को अनुभूत करता है। कवि की प्रेम-दृष्टि देखिए-

i) जिस पर दया-दृष्टि करते हैं मंगलमय भगवान
पूर्ण प्रेम-पीड़ा से पीड़ित होता है वह प्राण।

ii) व्याकुल हुआ प्रेम पीड़ा से, जिसका कभी न प्राण,
भाग्यहीन उस निष्ठुर का है, उर सचमुच पाषाण।

कवि प्रेम भरी चितवन को अमृत से सिंचित मानता है। अपरिमित शक्ति वाला यह प्रेम अत्यंत कल्याणकर है। ''अहो प्रेम में तृप्ति नहीं है, केवल है अनन्त आकर्षण।'' कहने वाला कवि व्यक्तिगत प्रेम को स्वदेश प्रेम तक और फिर ईश्वर प्रेम तक ले जाता है। वासनात्मक प्रेम की चर्चा कर कवि उसकी परिणति उदात्तता में करता है। सच्चे प्रेम पथिक को ''किन्तु पहुँचना उस सीमा तक जिसके आगे राह नहीं'' कहकर वे स्वयं भी प्रेम की चिर-गति तथा गतिशील प्रकृति को ही स्वीकार करते हैं। अतः त्रिपाठी जी का प्रेम वर्णन लौकिक से अलौकिक की, सामान्य से विशेष की ओर फिर विशेष से जन-जन तक की यात्रा को अभिव्यक्ति देता है। प्रियतम कण-कण और जन-जन वासी बन जाता है और यही उदात्तता की चरम सीमा है-

जन जन से प्रेमी को दिखती, है प्रियतम की कान्ति
इससे उसे लोक सेवा में, मिलती है अति शांति।

6.5.4 प्रकृति -प्रेम

प्रकृति के पुजारी, रामनरेश त्रिपाठी का हृदय प्रकृति के नैसर्गिक सौंदर्य से पूर्णतः आपूरित रहा है। उनके प्रत्येक काव्य का नायक प्रकृति का अनन्य-प्रेमी और उपासक है। प्रकृति के सौन्दर्य पूर्ण रूपों का वे अत्यन्त विशद् वर्णन करते हैं। द्विवेदी युग के सर्वोत्तम प्रकृति अनुरागी त्रिपाठी जी के काव्य में प्रकृति कहीं आलम्बन बन कर आती है तो कहीं उद्‌दीपन। कहीं प्रकृति का संवेदनात्मक-रूप उभरता है तो कहीं प्रतीकात्मक। विशेषता यह है कि प्रकृति का दृश्यांकन कवि अत्यंत स्वाभाविक एवं विश्वसनीय ही नहीं, अपितु मोहक एवं आकर्षक ढंग से भी करता है-

i) कोकिल का आलाप, पपीहे की विरहाकुल बानी।
तोता मैना का विवाद, बुल-बुल की प्रेम कहानी।

ii) बार-बार बक पंक्ति गमन से उज्ज्वल फूलों वाली।
मेघपुष्प वर्षा से धूमिल घटा क्षितिज पर काली।

कवि प्रकृति वर्णन में हृदय से रम जाता है और उसकी सौंदर्यमयी आनन्दानुभूति चिरस्थायी बन जाती है। ''पथिक'' की रचना कवि रामेश्वर के मंदिर के निकट विस्तृत जल-राशि के तट पर करता है तो ''स्वप्न'' की रचना के समय वह हिम-पर्वतों से घिरे

काश्मीर की घाटियों में विचरण करता है। स्फुट रचनाओं में भी प्रकृति सम्बन्धी-अनुभूति मानसिक संवेदनाओं और भावनाओं के अनुरूप ही अभिव्यक्ति पाती है। कहीं संध्या का, तो कहीं रात्रि का दृश्य मुखर होता है। कहीं वर्षा का तो कहीं लालिमा युक्त प्रभात स्वतंत्र एवं आलम्बन रूप में चित्रित होता है। ''पथिक कवि'' देश भ्रमण में प्रकृति के मनोहारी दृश्यों से भाव-विभोर होता जान पड़ता है-

i) कहीं श्याम चट्टान, कहीं दर्पण सा उज्वल सर है।
कहीं हरे तृण खेत, कहीं गिरि श्रोत प्रवाह प्रखर है।

ii) नीचे नील समुद्र मनोहर ऊपर नील गगन है।
घन पर बैठ बीच में विचरूँ यही चाहता मन है।

कभी कवि ''होने लगी वृष्टि रिमझिम कर, अविरत मूसलाधार'' कहते हुए अपनी मनोदशाओं को अभिव्यक्ति देता है तो कभी ''पल्लव- लता कुसुम- कलियों को करती थी अति प्यार'' कहकर वियोगिनी नायिका की मानसिक भावना को भी साकार रूप देता है। प्रकृति का आलंकारिक वर्णन भी त्रिपाठी जी के कल्पना- कौशल का परिचायक है। कहीं प्रकृति का अप्रस्तुत विधान, प्रस्तुत को रूपायित करता है तो कहीं प्रकृति का आलंकारिक रूप ही शोभा-वृद्धि का कारण बन जाता है। ''पंकज माला सी प्रणयी के मृदु गल -बहियाँ- डाल'' में उपमा की छवि मिलती है तो कहीं कहीं अतिशय- कल्पना मोह उसे ऊहात्मक भी बना देता है। ''बीती निशा उषा उठ भाई, पहन सुनहला चीर'' कहकर कवि प्रकृति- नायिका का सुंदर मानवीय रूप प्रस्तुत करता है। ''मानवीकरण'' पर तो त्रिपाठी जी की अनूठी पकड़ है। अनेकों उदाहरण देखें जा सकते हैं-

अंशुमाली के शुभागमन की, बेला समझ समीप
नभ में बुझा चुके सूर भी निज-निज घर के दीप।

इसी प्रकार ''फूल पंखुड़ी में पल्लव में प्रियतम रूप विलोक'' और ''बार-बार उचक-उचक लहरों में सिन्धु'' आदि उदाहरण भी देखे जा सकते हैं। प्रकृति कहीं पृष्ठभूमि बनकर काव्य में आती है तो कहीं उपदेशात्मक रूप लेकर उभरती है। कहीं ''प्रकृति रूप में आती है कहीं रहस्यात्मक रूप में। कुल मिलाकर कह सकते हैं कि प्रकृति पुत्र त्रिपाठी जी के काव्य में प्रकृति प्रेरणा बनकर कर्मपथ पर अग्रसर होने की राह प्रशस्त करती है। प्रकृति के मधुर तथा विराट बिम्ब त्रिपाठी जी की खास पहचान हैं और इसी कारण वे द्विवेदी युग के प्रमुख प्रकृति प्रेमी माने जाते हैं।

6.5.5 सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक चेतना

त्रिपाठी जी के काव्य में सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक चेतना के भी दर्शन होते हैं। राष्ट्रीय भावना एवं देश प्रेम का उद्देश्य लेकर कवि संस्कृति के सभी अंगों का विशद वर्णन करता है तो ''हिमालय'' आदि के संदर्भ में अपनी आध्यात्मिक दृष्टि का भी परिचय देता है। त्रिपाठी जी अंग्रेज़ी सभ्यता से दूषित ''युगीन संस्कृति'' का चित्रण भी करते हैं तो भारतीय संस्कृति के प्रति पूर्ण आस्था एवं श्रद्धा का भाव भी रखते हैं। ईश्वर भक्ति को वे लोक- सेवा के पर्याय मानते हैं। ''मैं ढूंढता तुझे था जब कुंज और वन में, तू खोजता मुझे था तब दीन के वतन में'' कहकर वे इसे पुष्ट भी करते हैं। ''मनुष्यता का अर्थ'' समझाने वाला यह गांधीवादी सिपाही सेवा धर्म से बड़ा कोई धर्म नहीं मानता-

सेवा धर्म मुख्य है जग में,
लोक शान्ति प्रद काज।

''रक्त पात करना पशुता है, कायरता है मन की'' कहते हुए वे धार्मिक दृष्टि के प्रति जितने सजग रहे हैं ''हम भाई बहिनें हैं'' कविता में भाईचारे और एकात्मभाव के प्रति भी उतने ही जागरूक जान पड़ते हैं।-

आसमान है एक हमारा, एक नाव पर घर है,
है एक ही चिराग हमारा और एक बिस्तर है।

इसी प्रकार, मानवतावादी दृष्टिकोण तथा सत्य और ज्ञान का अवलंब ग्रहण करने का आग्रह भी उन्हें भारतीय संस्कृति के आख्याता रूप में स्थापित करते हैं। गीता का कवि पर गहरा प्रभाव रहा है। ज्ञान-कर्म और भक्ति के सम्मिश्रण में उनकी अटूट आस्था रही है। संसार को परीक्षा-स्थल मानने वाले त्रिपाठी जी मानव को संघर्षरत रहने की प्रेरणा देते हैं-

यह संसार मनुष्य के लिए परीक्षा स्थल है।
दुख है प्रश्न कठोर, देख कर होती बुद्धि विकल है।।

इसी प्रकार, ''एक-एक तृण दिखलाता है जगदीश्वर की सत्ता'' तथा ''उसी की ही ध्वनि गूँज रही है, अणु परमाणु गगन में'' जैसी पंक्तियाँ भी कवि के इसी दर्शन को रूपायित करती है। पुनर्जन्म में कवि का अटूट विश्वास है। इसीलिए- ''निर्भय स्वागत करो मृत्यु एक विश्राम स्थल'' कहकर वे मानव को भारतीय दार्शनिक भावनाओं की ओर प्रेरित भी करते हैं। नीति संबंधी काव्य रचनाओं में भी कवि के सांस्कृतिक मूल्यों की शक्ति का परिचय सहज ही मिल जाता है।

त्रिपाठी जी ने ऐतिहासिक गरिमा को भी काव्य-बद्ध करके अपने सभ्य-देश की अतुलनीय छवि का मनोहारी चित्रण किया। ज्ञान, धर्म एवं श्रद्धामयी आस्था का प्रतीक यह भारतवर्ष कैसा अद्भुत देश है-

सबसे प्रथम जगत में जो सभ्य था यशस्वी
जगदीश का दुलारा वह देश कौन-सा है?
पृथ्वी निवासियों को जिसने प्रथम जगाया
शिक्षित किया सुधारा, वह देश कौन-सा है?

सभ्यता और गौरव का, महाभारत और रामायण का तथा त्याग और बलिदान का अन्यतम उदाहरण है भारत। सारा संसार इसका दास था और ये सभी का स्वामी। ''आह्वान'' कविता में कवि कहता भी है- ''क्या तुम भूल गए, जब तुम थे स्वामी और जगत था दास''। आज देश की पराधीनता से कवि दुखी है। इसीलिए वह भारतीय इतिहास के गौरव-चिह्नों को पुनः रेखांकित करते हुए विश्व-मानचित्र पर उकेरना चाहता है। कभी वह ''हम थे कभी मनुष्य की संतान के मुकुट'' कहकर जगाता है तो कभी देश के वीरों की स्तुति गाकर उत्साह-संचार करता है-

जिसमें दधीचि दानी, हरिश्चन्द्र कर्ण से थे,
सब लोक का हितैषी वह देश कौन सा है।''

इस प्रकार द्रोण, अर्जुन, श्रीकृष्ण एवं भीष्म जैसे कर्मयोगियों की भारत भूमि का कवि मुक्त-कंठ से प्रशस्ति गान करता है। इसी प्रकार कवि महात्मा बुद्ध, शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, बल्लभ, चैतन्य महाप्रभु, नानक, कबीर, दयानन्द सरस्वती, कालिदास, माघ, तुलसीदास, सूरदास, चाणक्य एवं तानसेन आदि अनेक गौरव चिन्हों का गुणगान करते हुए उनके द्वारा प्रदर्शित पथ का स्मरण कराता है। यही नहीं कवि को भारतीय इतिहास की वीरांगनाएं भी गौरव-गान के लिए प्रेरित करती हैं और वह दुर्गा, आहिल्या, लक्ष्मीबाई, पद्मिनी, वीरमती, काशल्या, शकुन्तला, रूक्मिणी आदि माताओं की देन को प्रणाम करता है। स्पष्ट है कि कवि समग्र काव्य में किसी न किसी रूप में भारतीय ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक गौरव का गुणगान करता ही रहा है। भारतीय संस्कृति से उन्हें अपार प्रेम था और ऐतिहासिक विरासत के प्रति वे पूर्णतः समर्पित थे।

6.5.6 लोक साहित्य का मर्म

लोक सहित्य के अंतर्गत लोक गीतों का स्थान प्रमुख होता है। इन्हीं लोक गीतों में लोक जन की, उनके परिवेश एवं परिस्थिति की, समय एवं स्थल की तथा कर्म एवं संस्कारों की लय-युक्त अभिव्यक्ति होती है। त्रिपाठी जी के लोक गीत इसी की साक्षात मिसाल है। उनका जन्म भी गाँव में ही हुआ। सन् 1925 में ''सरस्वती'' पत्रिका में सर्वप्रथम उनके दो लोकगीत प्रकाशित हुए और फिर तो कवि को प्रोत्साहन और प्रेरणा मिलती रही। इसी का परिणाम है कि त्रिपाठी जी ने ''काश्मीरी ग्राम गीत'', ''मारवाड़ के मनोहर गीत'', ''राजस्थानी झीलों के लोक गीत'', कविता कौमुदी (पाँचवां भाग) तथा हमारा ग्राम साहित्य (दो भाग)- जैसे ग्रंथ विशुद्ध लोक गीतों से ही सुसज्जित किए हैं।

त्रिपाठी जी के लोक गीतों को यों तो कई भागों में बाँटा जा सकता है, किन्तु स्थूलतः मुण्डन, जनेऊ, नहछू तथा विवाह संबंधी ''सोहर'' (मंगल गीत) गीत लिखे हैं। यही नहीं, कवि पुत्र-कामना, पति का परस्त्री से संबंध, ननद-भाभी के झगड़े, पति-परदेस-गमन, नेग-बधाई, व्रत-पूजा आदि कई विषयों पर सुन्दर एवं मनोहारी गीत लिखता है। कभी कवि अविवाहित कन्या के पिता का वह रूप चित्रित करता है, जिसमें उसे नींद नहीं आती और कन्या के कारण ही उसका सिर भी झुक जाता है-

i) कुछ रे सुतीला कुछ जागीला बेटी नींदो न आवे
जाहि घरे कन्या कुंवारि बेटी नींद कैसे आवे।

ii) गिरि नवे पर्वत नवे हम तो ना नइयो
बेटी तोहरे कारन हम जग में माथ नवाये।।

उसी प्रकार निःसन्तान व्यक्ति का उपहास, गर्भवती स्त्री के लक्षण, यज्ञोपवीत वर्णन, बेमेल विवाह, ऋतु और व्रत संबंधी गीत, मेले के गीत, विभिन्न जातियों के गीत और श्रम-परिश्रम के गीत आदि कितने ही उदाहरण देखे जा सकते हैं। सीधी-सुबोध भाषा, स्वाभाविक चित्रण, स्वाभाविक चित्रण, लय और गीत का अद्भूत सम्मिश्रण, सुंदर उपमाएँ तथा अत्यन्त सटीक कहावतों का प्रयोग सभी कुछ गीतों की मधुर अभिव्यक्ति में चार चाँद लगा देते हैं। ''बारहमासा'' की कुछ पंक्तियाँ देखिए कितनी सुन्दर हैं-

प्रात में कातिक पूरा है तुसार
मोहि छोड़ि कन्त भये वनिजार
मैं नू झूलौंगी।

माघ मांस घन परा है तुसार, काँपइ हाथ और काँपइ गात
काँपइ सेज तुरगहि खाट, कि मैं नाहीं जैहों झूलने तुम जाव
मैं न झूलौंगी।

कुल मिलाकर कह सकते हैं कि भारतीय संस्कृति एवं वातावरण से प्रभावित लोक साहित्य की मार्मिक रचना करने वाले कवियों में रामनरेश त्रिपाठी प्रमुख है। ग्राम गीतों का यह अद्भुत-सौन्दर्य कवि की सौन्दर्य दृष्टि एवं अनुपम कल्पना शक्ति का प्रमाण है।

बोध प्रश्न 2

1. त्रिपाठी जी की कविता में व्यक्त राष्ट्रीय भावना पर आठ पंक्तियों लिखिए।

....

....

....

....

2. त्रिपाठी जी की समाज-सुधार दृष्टि को स्पष्ट करने वाले कोई दो काव्यांश लिखिए

....

....

....

....

....

3. रामनरेश त्रिपाठी ने अपने काव्य में प्रेम के उदात्त रूप की स्थापना की है। लगभग आठ पंक्तियों में सिद्ध कीजिए।

....

....

....

....

....

4. त्रिपाठी जी के काव्य में व्यक्त प्रकृति-चित्रण पर आठ पंक्तियाँ लिखिए।

....

....

....

....

5. त्रिपाठी जी ने लोक-साहित्य के अंतर्गत किन-किन प्रमुख विषयों को चुना? चार पाँच पंक्तियों में लिखिए।

....

....

....

....

6.6 रचना-विधानः विविध आयाम

आधुनिक साहित्य के इतिहास में और विशेषतः खड़ी बोली के कवियों में त्रिपाठी जी का नाम विषय ही नहीं भाषा एवं शैली की विशिष्टता के कारण भी अत्यन्त गौरव से लिख जाता है। साहित्यिक एवं परिमार्जित भाषा तथा अभिव्यजंना की कलात्मक -दृष्टि के कारण ही त्रिपाठी जी ने अपनी एक विशिष्ट पहचान भी बनाई। सहज- स्वाभाविक एवं विशिष्ट- आलंकारिक-दोनों ही प्रयोग विषय एवं संदर्भ के अनुकूल करते हुए त्रिपाठी जी प्रेषणीय को रमणीय एवं प्रभावोत्पादक बनाकर प्रस्तुत करते हैं । भाषा, शब्द शक्ति, गुण, अलंकार, मुहावरे, लोकोक्तियाँ और छंद आदि सभी उपादानों का प्रयोग इतना सुंदर एवं सार्थक बन गया है कवि के अभिव्यजंना-कौशल का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। यहाँ हम संक्षेप में इन सभी पक्षों पर विचार करेंगे।

6.6.1 काव्य भाषा

त्रिपाठी जी युगीन स्थितियों एवं आवश्यकताओं को दृष्टि में रखकर काव्य सृजन कर रहे थे और विषय को पूर्णतः प्रेषणीय बनाने के लिए उन्होंने जो भाषा चुनी और अपनाई- उसकी आत्मा को भली प्रकार परखा। सहज और सरल व्यक्तित्व वाले कवि ने यह समझ लिया कि संस्कृत-तत्सम-प्रधान भाषा हिंदी की पर्याय नहीं बन सकती। यही कारण है कि उन्होंने अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध की भाँति संस्कृत-बहुल हिंदी को न चुनकर **व्यावहारिक एवं लोक प्रचलित भाषा** चयन किया। उच्चारण- सुविधा एवं सरसता को भी ध्यान में रखकर कवि पदों को तोड़ता-जोड़ता है। श्रुति मधुर बनाने का प्रयास भी इसमें दिखाई देता है। उनकी भाषा में अर्द्ध तत्सम एवं तद्भव शब्दों का प्रयोग-बाहुल्य सहज ही देखा जा सकता है-

नृप की **निठुर** आज्ञा से सूचित थी सब सेना।
x x x x x
देश प्रेम से **पूरण** प्लावित उनका उच्च हृदय है।
x x x x x
किया निकाल देश सीमा से बाहर बड़े **जतन** से ।

वर्ण-मैत्री में ''विरह-विताड़ित, ''सुषमा-सौन्दर्य'' तथा ''विनोद-विभूषित'' जैसे कई प्रयोग सरलता एवं प्रभावोत्पादकता बढ़ाते हैं। इसी प्रकार ''राग-रथी, रवि-राग पथी, अविराम विनोद बसेरा'' में **संस्कृत पदावली** का प्रयोग भी देखा जा सकता है।

त्रिपाठी जी ने **बिम्बों** के सुंदर एवं सटीक प्रयोग से भाषा को अन्यतम शक्ति प्रदान **की** है। ये भाव-गर्भित शब्द-चित्र सर्जक कल्पना के परिचायक ही हैं। सरल, मिश्र जटिल तथा पूर्ण आदि कई बिम्बों के सहज-दर्शन इस काव्य में होते हैं। दुख-दैन्य के शब्द-चित्र बनाता यह बिम्ब देखिए-

धधक रही सब ओर, भूख की ज्वाला है घर घर में
मांस नहीं है निरी साँस है शेष अस्थि पंजर में।।

इसी प्रकार ''जाता हूँ मैं, जल विहार की, तरसी में तरूणी को लेकर'' जैसी पंक्तियों में सरल बिम्ब उभरकर आते हैं। त्रिपाठी जी ने काव्य भाषा में नाद-सौन्दर्य का भी चमत्कारिक प्रयोग किया है-

बहता है अविराम निरन्तर कल-कल स्वर से नाला।
x x x x
गिरता उठता फेन बहाता, करता अति कोलाहल हर-हर।

इसी प्रकार त्रिपाठी जी ने अपनी काव्य भाषा को समृद्ध एवं शक्तिमान बनाने के लिए गुल, आमद, हुक्म, हौंसला, मसोसकर, मुहताज, हाकिम, खुलासा तथा दरवाज़ा आदि कितने ही **उर्दू के शब्द** प्रयुक्त किए और पौढ़ाया अठिलाठी, ढौर मीचु, सेऊंगी, असवारी, माती, पठाऊँ वांच आदि **देशज शब्दों** को भी प्रयोग किया। उड़ीक एवं बूढ़ जैसे **पंजाबी भाषा के शब्द** भी प्रयुक्त किए। त्रिपाठी जी भाषा-सौष्ठव को निखारने के लिए **उपसर्ग-प्रत्यय** का भी सुंदर प्रयोग करते हैं। प्रसाद गुण पूर्ण, सरल और सरस भाषा के सृजक रामनरेश त्रिपाठी ने इन्हीं भाषिक गुणों से रचनाओं को भावमयी और मार्मिक बना दिया है। संयोग शृंगार, करूण और वियोग आदि भावों की अभिव्यक्ति के लिए वे कोमल कान्त पदावली का प्रयोग करते हैं तो भावनाओं में संघर्ष, विद्रोह तथा उत्साह के प्रतिपादन हेतु **पौरुष (ओज)** भाव का समाहार करते हैं-

पथिक नाम की सुधि आते ही परम क्रोध चढ़ आया।
दृग विस्फारित नाक प्रस्तावित हुई प्रकम्पित काया।।

इसी प्रकार **प्रसाद एवं माधुर्य** के उदाहरण भी अनेकों उपलब्ध हैं। आचार्य शुक्ल ने कहा भी है- ''पंडित रामनरेश त्रिपाठी का नाम भी खड़ी बोली के कवियों में बड़े सम्मान के साथ लिया जाता है। भाषा की सफाई एवं कविता के प्रसाद गुण पर उनका बहुत ज़ोर रहता है''। (हिंदी साहित्य का इतिहास; पृष्ठ 704)

इस प्रकार कह सकते हैं कि खड़ी बोली पर त्रिपाठी जी का अच्छा अधिकार था और उन्होंने उसे निखारा-सँवारा भी। शब्द-शक्ति, मुहावरे-लोकोक्तियाँ तथा अलंकार-छंद पर हम अभी आगे विचार करेंगे किन्तु यहाँ इतना कहना उचित होगा कि ब्रजभाषा, अवधी, उर्दू, फारसी, संस्कृत, बंगला, मराठी एवं गुजराती भाषाओं का अच्छा ज्ञान रखने वाले त्रिपाठी जी की भाषा गंभीर विषयों के प्रतिपादन में पूर्णतः सफल एवं समर्थ हैं।

6.6.2 लाक्षणिक एवं व्यंजनात्मक शैली

त्रिपाठी जी की शैली विषय और भाव के अनुरूप बदलती रहती है। स्वाभाविक, सहज एवं सरल शैली उनकी विशिष्ट पहचान है तो लाक्षणिक एवं व्यंजनात्मक प्रस्तुति भी उनके कलात्मक-दृष्टिकोण की परिचायक है। यों अभिधा के प्रयोग में उनका मन अधिक रमा है, किन्तु प्रकृति- चित्रण में वे लक्षणा का सुंदर प्रयोग करते हैं। ''विद्युत-सी खिलखिला पड़ी वह'' में ''खिलखिलाना'' शब्द अपनी व्यंजनात्मकता के साथ भाव-लक्षित होकर लाक्षणिक-वैचित्र्य प्रस्तुत करता है। ''सरस विमल निरलस कलरवमय'' जैसी पंक्तियों में कई जगह मृदुल शब्दों का स्वाभाविक सौन्दर्य भी शैली को सरस बनाता है। त्रिपाठी जी वर्णनात्मक शैली का प्रयोग भी करते हैं और भावनात्मक शैली का भी। मूलतः कवि जनजीवन को ऊँचा उठाने के लिए प्रभावोत्पादक-शैली में काव्य सृजन करता है। खंड काव्यों में वर्णनात्मक शैली देखी जा सकती है और मुक्तकों में भावात्मक शैली। हिंदी के प्राचीन और नवीन छन्दों को अपनाते हुए कवि अधिकारपूर्ण प्रयोग करता है। उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा तथा दृष्टांत आदि अलंकार शैली को सुसज्जित कर देते हैं। कवि ने संदर्भ के अनुकूल ही सरस, अलंकृत एवं समास शैली का चयन भी किया है।

अतः त्रिपाठी जी ने अपनी शैली को अधिकाशतः मुख्यार्थ का बोध कराने वाली शक्ति ''अभिधा'' से ही सम्पन्न रखा है। किन्तु जहाँ कहीं भी वे लक्षणा और व्यंजना का प्रयोग करते हैं, पूरे विश्वास एवं अधिकार से करते हैं।

6.6.3 लोकाक्ति एवं मुहावरे

त्रिपाठी जी के काव्य में लोकोक्ति एवं मुहावरों का प्रयोग भाषा की शक्ति संवर्द्धन के लिए किया गया है। सरसता, जीवंतता एवं शक्तिमान बनाने का दायित्व निभाने में लोकोक्ति और मुहावरे काव्य में भावाभिव्यंजना की अद्भूत क्षमता भर देते हैं। त्रिपाठी जी ने लोक गीत और लोक कथाओं में तो लोकोक्तियों का तो हृदयस्पर्शी प्रयोग किया ही है, साथ ही खंड काव्य एवं मुक्तकों में भी इनकी रमणीयता देखी जा सकती है। इन लोकोक्तियों में गागर में सागर भरने की विशेषता तो है ही, नीति का प्रेरक पुट भी जी भर कर मिलता है। सांसारिक व्यवहार-पुटता और सामान्य बुद्धि के दुर्लभ दर्शन भी यहाँ होते हैं। मनोरंजन करने वाली पहेलियों को भी त्रिपाठी जी ने कई जगह प्रयुक्त किया है। ''हमारा ग्राम साहित्य'' तथा ''घाघ और भड्डरी'' नामक संग्रहों में लोकोक्तियों और पहेलियों का विविध विषयों की मार्मिक अभिव्यक्ति के लिए प्रयोग किया गया है। कवि किसानों के वर्षा ज्ञान, खेती संबंधी, स्वास्थय संबंधी तथा यात्रा, शुभाशुभ, छींक, छिपकली आदि से सम्बद्ध सामाजिक साहित्यिक कहावतों का प्रयोग बहुत सुंदर ढंग से करता है। ब्रज, अवधी, भोजपुरी तथा राजस्थानी प्रदेशों की कहावतें भी संग्रह में संजोता है। अवधी की एक कहावत देखिए-

सूक्करवारी बादरी, रहे सनीचर छाय
तो यों भारवे भड्डरी, बिन बरसे न जाय।

इसी प्रकार ''जा दिन जेठ में बहे पुरवाई, ते दिन सावन धूरि उड़ाई'', ''चमके पच्छिम उत्तर और, तब जान्यों पानी है, जौर'', ''हथिया पूँछ डोलावे, घर बैठे गेहूँ आवे'', ''लाग बसंत, ऊख पकंत'' जैसी कई कहावतें कवि ने प्रस्तुत की हैं। सामाजिक कहावतें भी त्रिपाठी जी के समाज-ज्ञान का परिचायक है। '' जो विधवा है करै सिंगार, ओहि से सदा रहयो हुशियार'', ''बिन धरती घर भूत का डेरा'', ''बहन घर भाई कुत्ता, सासरे जमाई कुत्ता'', ''अति भक्ति चारे का लच्छन'', ''आंत भारी, माथ भारी'', ''ओछे की प्रीत बालू की भीत'' तथा ''चोर चोर मौसेरे भाई'' इसी प्रकार की कहावतें हैं। इसी प्रकार, त्रिपाठी जी ने कुछ पहेलियों का भी बहुत सुंदर प्रयोग किया है। ''पाजामे'' संबंधी सुंदर पहली देखिए-

दुइ मुँह छोट एक मुँह बड़ा, आधा मानुष लीले खड़ा।
बीच बीच लगावे फांसी, नाम सुने तो आवे हांसी।।

मुहावरों का भी कवि ने संदर्भ एवं विषय के अनुकूल प्रयोग कर काव्य भाषा को अलंकृत एवं प्रभावी बनाया है। **गाल बजाना, बाट जोहना, एक पंथ दो काज, गाज गिरना, मन मसोस कर रह जाना, दूध की लाज रखना, मन की कली खिलना, कौड़ी को मुहताज** होना आदि कई प्रयोग देखे जा सकते हैं। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं-

i) कुछ है वाह-वाह के प्रेमी निर्भय गाल बजाते।

x x x x

ii) हार गई **मैं बाट जोहती** आये नाथ न मेरे ।

x x x x

iii) ईश्वर भक्ति लोक-सेवा है **एक अर्थ दो नाम।**

x x x x

iv) हाय-हाय इस अधम स्वार्थ पर **पड़ी न अब तक गाज।**

x x x x

v) किया जिन्होंने स्वर्ण भूमि को **कौड़ी के मुहताज।**

x x x x

6.6.4 अप्रस्तुत विधान

त्रिपाठी जी के समग्र काव्य में अलंकार भाषा की पुष्टि एवं राग की परिपूर्णता के लिए भी प्रयुक्त हुए हैं। इनके सहज प्रयोग से भावों का उत्कर्ष ही स्पष्ट हुआ है। उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक, अनुप्रास, विरोधाभास, मानवीकारण दृष्टान्त तथा प्रतीक आदि सहज एवं साधारण अलंकारों का ये श्रृंगार भाषा के सौंदर्य को और निखारता है। विरोधाभास अलंकार का सौन्दर्य देखिए-

i) अब जाना है प्रिये तुम्हारे मन में है वह अद्भुत पावक
समीपस्थ को शीतल है जो किन्तु दूरवर्ती को दाहक

x x x x

ii) मेरे करूणा, निधि का आसन गरम होगा,
कौन जाने कब मेरे शीतल उसास से।

इस प्रकार, ''तल-तरंगित, सरित सलिल में उसकी प्रभा ललाभ'' में छेकानुप्रास की छटा है तो ''प्रेम स्वर्ग है, स्वर्ग प्रेम है, प्रेम अशंक अशोक'' में उपमेयोपमा का निखार। नवीन उपमानों की अद्भुत कल्पना ''करुणा सी मृदु धर्म गीत सी, शुद्ध कल्पना सी सुख संकुल'' में देखी जा सकती है तो ''आँखें विष में बूढ़ रही-सी थीं जलहीन सजल हो'' में श्लेष का चमत्कार है। ''विष'' यहाँ अश्रु एवं विरह-विष का अर्थ लिये है। यहाँ अलंकारों का प्रयोग,

अभिव्यक्ति की स्पष्टता, भावों की प्रभविष्णुता और भाषागत प्रेषणीय धर्म के निर्वाह के लिए किया गया है। सादृश्य, साधर्म्य, प्रभाव एवं विरोध मूल आदि कई प्रकार के अलंकार प्रयुक्त हुए हैं। कुछ उदाहरण देखे जा सकते हैं-

उत्प्रेक्षाः निकल रहा है जल निधि तल पर दिनकर बिम्ब अधूरा।
कमला के कंचन मंदिर का मानों कान्त कंगूरा।।

उदाहरणः गन्ध विहीन फूल है जैसे चन्द्र चन्द्रिका-हीन।
यों ही फीका है मनुष्य का जीवन प्रेम-विहीन।।

दृष्टान्तः आते हैं विघ्नों के झोंके बारम्बार प्रचण्ड।
गिरते हैं तरु पर रहता है गिखिर अटल अखंड।।

मानवीकरणः प्रतिक्षण नूतन वेष बनाकर रंग-बिरंग निराला।
रवि के सम्मुख थिरक रही थी नभ में वारिद बाला।।

x x x x

हा! यह फूल किसी दिन अपनी अनुपम सुन्दरता से गर्वित
आया था जग में उमंग से किसी वासना से आकर्षित।।

उल्लेखः प्राण वल्लभे! प्रिये! सुवदने, इन्दीवर-आयत-दल लोचनि
प्रेम-तरंगिणि। चित-विहारिणी, हे सुभगे! भव ताप विमोचिनी

6.6.5 छन्द-विधान

कविता के लिए लयबद्ध होना उसकी अमरता का सूचक होता है। छन्द-विधान सामान्य मनोवेगों में ध्यान सम्बन्धी सजगता तथा संवेदनशीलता की अभिवृद्धि में सहायक होता है। त्रिपाठी जी ने भी इसी दृष्टि से अपने समग्र काव्य में छंदों को अपनाया है ।अधिकाशंतः वे मात्रिक छंदों का ही चयन करते हैं और इसी से संगीतात्मकता की अधिक संभावना बनती है। वे ''पथिक'' में **''सार''** छन्द का, ''स्वप्न'' में 16-16 मात्राओं पर यति और अन्त में एक गुरू, दो लघु वाले ''समान सवाई'' का तथा ''मिलन'' में **''सारसी''** छंद का प्रयोग करते हैं। कहीं-कहीं लय भंग भी होती जान पड़ती है किन्तु फिर भी छन्द विधान ने काव्य को नियमित करने की सफल भूमिका निभाई है।

त्रिपाठी जी ने ''उर्दू के बहरों'' को भी काव्य के नियमन के लिए अपनाया है। ''अन्वेषण'', ''हार ही में जीत'' जैसी कविताओं में यही छंद प्रयुक्त हुआ है। इनके अतिरिक्त स्फुट रचनाओं में ''तोटक, ''विधाता', ''छप्पय'' तथा ''ताटंक'' आदि छन्दों का भी सफलतम प्रयोग है। ''शरद-तरंगिनी'' कविता में संस्कृत के वर्णिक छन्दों का प्रभाव स्पष्ट है। ऐसे छन्द जिनमें क्रिया अंतिम चरण में आती है, वे भी कवि को अत्यन्त प्रिय रहे हैं। ''स्वप्न'' में इनका अधिक प्रयोग हुआ है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि ये सभी छन्द त्रिपाठी जी की काव्य भाषा को शक्ति और नियमन प्रदान करते हैं। कुछ दोष होने पर भी छन्द विधान की संगीतात्मकता और लयात्मकता उसे ताकत देती है।

6.7 रामनरेश त्रिपाठी का योगदान

इस समग्र विवेचन के बाद यह तो स्पष्ट ही है कि कवि रामनरेश त्रिपाठी के काव्य में सत्य, शिव और सौंदर्य का सुंदर समन्वय मिलता है। युगीन स्थितियों का अनुभव कवि को प्रभावपूर्ण अभिव्यक्ति की प्रेरणा देता है और कवि अपने काव्य से आदर्श तथा औदात्य के संस्कार पैदा कर व्यक्ति को राष्ट्रहित एवं समष्टि कल्याण की राह दिखाता है। ''मिलन'' में कवि प्रेम, करूणा, साहस, आत्मबलिदान, जनसेवा तथा सर्वहारा वर्ग के लिए सहानुभूति जैसे मूल्यों की स्थापना करता है तो ''पथिक'' और ''स्वप्न'' के माध्यम से भी देश भक्ति,

स्वातंत्र्य-कामना, प्रकृति प्रेम, आत्म-त्याग, व्यक्ति-स्वातंत्र्य, चरित्र की उदात्तता तथा आदर्श जीवन दृष्टि की ओर उन्मुख करने का उद्देश्य रखता है। इसी प्रकार मुक्तकों में भी जन-ऐक्य का बल जनता को दिखाया गया है। प्रेम चिन्तन में कवि औदात्य और आत्मिकता का समावेश करता है। निष्क्रिय-समाज को कर्मयोग का संदेश देकर कवि समाज-सुधारक की भूमिका भी निभाता है। इसके अतिरिक्त राजनैतिक यथार्थ, व्यंग्य-प्रहार, नारी उद्धार, जात पात के भेद का अंत आदि कई दायित्व कवि एक साथ निभाता है। क्रान्ति का यह दूत एक तरफ अंग्रेज़ों के अत्याचार के खिलाफ आवाज़ बुलन्द करता है तो दूसरी तरफ अहिंसक परिवर्तन की ''लौ'' जलाने की निष्ठा प्रदान करता है।

प्रकृति सौंदर्य, अभिव्यंजना-कौशल तथा लौकिक साहित्य को मार्मिक अभिव्यक्ति सभी कुछ कवि की मौलिक एवं अन्यतम प्रतिभा तथा सौन्दर्य-दृष्टि को प्रकाशित करते हैं। निश्चित ही त्याग और भोग, विलास और सादगी, वीरता और अहिंसा, स्वच्छंदता और संयम के बीच एक स्वस्थ संतुलन ही त्रिपाठी जी की कविता का प्रमुख स्वर है। त्रिपाठी जी के खंड काव्यों के कथानक एकरसता लिए हुए भी अपनी काव्य यात्रा को सफलता से पूरा करते हैं। प्रेम, विरह तथा पात्रों का आदर्श चरित्र सभी कुछ कवि की दृष्टि के परिचायक हैं। हालांकि त्रिपाठी का समग्र काव्य किसी विलक्षण-प्रतिभा का सूचक नहीं, किन्तु फिर भी, भावनात्मक- उद्वेलन देकर कर्त्तव्य -पथ की ओर उन्मुख होने की प्रेरणा देने वाला यह काव्य संसार अपने आप में महान है। हिंदी-साहित्य संसार त्रिपाठी जी के इस योगदान के कभी विस्मृत नहीं कर सकता।

बोध प्रश्न 3

1. पंडित रामनरेश त्रिपाठी को कौन-कौन सी भाषाओं का अच्छा ज्ञान था। दो पंक्तियों में लिखिए।

   ....

   ....

   ....

   ....

2. त्रिपाठी जी की काव्य-भाषा पर एक उदाहरण देकर पाँच पंक्तियाँ लिखिए।

   ....

   ....

   ....

   ....

3. त्रिपाठी जी के काव्य में प्रयुक्त मुहावरे और लोकोक्तियों से काव्य सौन्दर्य में अपार वृद्धि हुई है। दो-दो उदाहरण देकर कुल आठ पंक्तियाँ लिखिए।

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

4. त्रिपाठी जी के काव्य की शोभा वृद्धि करने वाले अप्रस्तुत विधान में से किन्हीं दो अलंकारों का उदाहरण देते हुए आठ पंक्तियाँ लिखिए।

....

....

....

....

....

6.8 सारांश

- बहुमुखी-प्रतिभा से सम्पन्न, द्विवेदी-युगीन प्रमुख कवि पंडित रामनरेश त्रिपाठी अपने युग-परिवेश से प्रभावित होकर ही नहीं, उसे प्रभावित करके मार्ग-प्रदर्शन के लिए साहित्य सृजन कर रहे थे।
- राजनीति, समाज, धर्म, शिक्षा तथा संस्कृति के क्षेत्र में त्रिपाठी जी ने साक्षात तथा विविध विधाओं के माध्यम से संघर्ष करते हुए नवजागरण का बीज बोया और अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।
- एक विशाल एवं विस्तृत फलक पर साहित्य सृजन करने वाले इस संस्कृति पुत्र एवं इतिहास प्रेमी ने मनुष्य को प्रकृति की गोद में बिठाकर भारतीयता के गौरव गान का पाठ सुनाया।
- खंड काव्य एवं मुक्तककाव्य पर पूरे अधिकार एवं आत्मविश्वास से लेखनी चलाने वाले भारती-पुत्र पंडित रामनरेश त्रिपाठी जी ने राष्ट्रीय चेतना तथा सामाजिक सुधार के दायित्व को कविता के माध्यम से बाखूबी निभाया।
- उदात्त प्रेम की स्थापना, प्रकृति प्रेम का उल्लास और लोक साहित्य का मर्म इनके काव्य में कूट-कूटकर समा गया है। कवि ने नैतिक-मूल्यों और शाश्वत् सत्य की प्रतिष्ठा में ही साहित्य-समर्पण किया है।
- काव्य भाषा तथा शब्द शक्ति, लोकोक्ति-मुहावरे, अलंकार एवं छंद आदि उपादानों पर कवि का अद्भुत नियंत्रण ही नहीं गहन एवं पैनी समझ भी है। इसी कारण वे अपने मतंव्य को सफलतापूर्वक संप्रेषित कर स्वयं को मील के पत्थर की तरह स्थापित कर पाते हैं।

6.9 शब्दावली

भविष्योन्मुखी : भविष्य की ओर उन्मुख रहने वाला या सोचने वाला।

उद्विग्नता : परेशान, चिन्तित या खिन्न।

नवनवोन्मेषशालिनी : जो हर पल और जब देखें नवीन लगे।

जन-उद्‌बोधन : जन-सामान्य में जागृति की लहर जगाना।

प्रेमाख्यानक : प्रेम की कथाओं वाले।

ऊहात्मक : ऊबाऊ या नीरस।

संस्कृत बहुल हिंदी : वह हिंदी जिसमें संस्कृत के शब्दों का आधिक्य हो।

अलौकिक-शक्ति : इस लोक से परे अर्थात परलोक की शक्ति या ईश्वरीय शक्ति।

6.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

डॉ. राममूर्ति शर्मा, रामनरेश त्रिपाठी और उनका साहित्य; प्रथम संस्करण, सन् 1972, आर्य बुक डिपो, करोलबाग, नई दिल्ली-51।

डॉ. कृष्णदत्त पालीवाल, पं. रामनरेश त्रिपाठी का काव्य; द्वितीय संस्करण, 1976, भारती - भाषा प्रकाशन, शाहदरा, दिल्ली।

इंदरराज बैद ''अधीर'', रामनरेश त्रिपाठी, प्रथम संस्करण, 1987, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली।

डॉ. अनिल कुमार उपाध्याय, पं. रामनरेश त्रिपाठी के साहित्य में राष्ट्रीय भावना (अप्रकाशित शोध प्रबंध), सन् 1969, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर।

डॉ. रामेश्वर प्रसाद अग्रवाल, रामनरेश त्रिपाठीः व्यक्तित्व और कृतित्व।

सम्मेलन -पत्रिका; (श्रद्धांजलि अंक)

6.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1. देखिए भाग 6.2
2. देखिए भाग 6.4
3. देखिए भाग 6.4
4. देखिए भाग 6.3

बोध प्रश्न 2

1. देखिए उपभाग 6.5.1
2. देखिए उपभाग 6.5.2
3. देखिए उपभाग 6.5.3
4. देखिए उपभाग 6.5.4
5. देखिए उपभाग 6.5.6

बोध प्रश्न 3

1. देखिए उपभाग 6.6.1
2. देखिए उपभाग 6.6.1
3. देखिए उपभाग 6.6.3
4. देखिए उपभाग 6.6.4